शिक्षा-आयोग : कोठारी कमीशन
[Kothari Commission]

(सुझाव और समीक्षा)

[द्वितीय संस्करण : संशोधित एवं परिवर्द्धित]

लेखक

पी० डी० पाठक, एम० ए० (अंग्रेजी व इतिहास)
बी० टी०, एम० आर० एस० टी० (लन्दन)

व

जी० एस० डी० त्यागी, एम० ए०, एम० एड०
लेक्चरार इन ऐजूकेशन
आर० ई० आई० टीचर्स ट्रेनिंग कालेज
दयालबाग

विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा

द्वितीय संस्करण की भूमिका

छः मास से कम समय में ही हम आपके समक्ष 'शिक्षा-आयोग' का दूसरा संस्करण प्रस्तुत कर रहे हैं। इस अल्प समय में ही प्रस्तुत पुस्तक का दूसरा संस्करण प्रकाशित करना, इस बात का प्रमाण है कि देश के सभी भागों में इसको पसन्द किया गया है। इसके प्रमुख कारण दो हैं—पुस्तक में आयोग की सभी मुख्य बातों को स्थान दिया गया है, और भारत में शिक्षा की आधुनिक परिस्थिति को ध्यान में रखकर उनकी समीक्षा की गई है।

हमें इस बात से बहुत हर्ष और संतोष है कि आयोग के एक सदस्य, डाक्टर टी० सेन आज भारत के शिक्षा-मन्त्री हैं। वे इस बात के लिये अथक प्रयास कर रहे हैं कि आयोग के सभी सुझावों को सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त हो जाय। उनको इस कार्य में कहाँ तक सफलता मिली है—इसका वर्णन पुस्तक में यथा-स्थान किया गया है। साथ ही पुस्तक को परिवर्द्धित करके अधिक लाभप्रद बनाने का प्रयास भी किया गया है।

हमें विश्वास है कि प्रस्तुत पुस्तक उन सब व्यक्तियों की जिज्ञासा को संतुष्ट करेगी, जो आयोग के सुझावों और सिफ़ारिशों से अवगत होना चाहते हैं।

विजया दशमी
सं० २०२४ वि०

पी० डी० पाठक
जी० एस० डी० त्यागी

प्रथम संस्करण की भूमिका

स्वतंत्र भारत में 'विश्वविद्यालय शिक्षा-आयोग' (१९४८-४९) और 'माध्यमिक शिक्षा-आयोग' (१९५२-५३) की जिन सिफ़ारिशों को सरकार की मान्यता मिली थी, उनको पूर्ण रूप से कार्यान्वित भी नहीं किया जा सका था कि सरकार ने डाक्टर डी० एस० कोठारी की अध्यक्षता में 'शिक्षा-आयोग' नामक तीसरा कमीशन नियुक्त करके उस पर १५ लाख रुपये की विशाल निधि व्यय कर दी।

सरकार ने ऐसा क्यों किया ? आयोग ने शिक्षा के विभिन्न स्तरों और क्षेत्रों के बारे में क्या सुझाव दिये ? क्या वे, मौलिक, महत्वपूर्ण और समाजवादी समाज के लिये जिसकी ओर देश कुछ समय से बढ़ रहा है, उपयुक्त हैं ? क्या उनको कार्यान्वित करने से देश के भावी नागरिकों का और राष्ट्र का कल्याण हो सकेगा ? इन्हीं सब बातों को प्रस्तुत पुस्तक की सामग्री बनाकर विवेचन किया गया है।

आशा है कि पुस्तक छात्राध्यापकों और शिक्षा-प्रेमियों की माँग को पूरा करेगी।

महाशिवरात्रि
१९६७

पी० डी० पाठक
जी० एस० डी० त्यागी

विषय-सूची

१

शिक्षा-आयोग

(कोठारी कमीशन)

Education Commission

(Kothari Commission)

[1964–66]

२

शिक्षा और राष्ट्रीय लक्ष्य

३

शिक्षा की प्रणाली, संरचना और स्तर

४

शिक्षक की स्थिति

५

अध्यापक-शिक्षा

६

छात्र-संख्या और जनबल

११
विद्यालय-शिक्षा : प्रशासन और निरीक्षण

१२
उच्च-शिक्षा : लक्ष्य एवं सुधार

१३
उच्च-शिक्षा : छात्र-संख्या और कार्य-क्रम

१४
विश्वविद्यालयों का अभिशासन

१५
कृषि की शिक्षा

१६
व्यावसायिक, प्राविधिक और इंजीनियरिंग-शिक्षा

१७
विज्ञान-शिक्षा और अनुसंधान

१८
वयस्क-शिक्षा

परिशिष्ट

अध्याय १

शिक्षा-आयोग

(कोठारी कमीशन)

EDUCATION COMMISSION

(Kothari Commission)

[1964-1966]

विषय-प्रवेश

स्वतंत्र भारत १९४८ मे राधाकृष्णनन् कमीशन और १९५२ मे मुदालियर-कमीशन को नियुक्त कर चुका था । इन दोनों आयोगों ने शिक्षा के विभिन्न अंगो मे सुधार के लिये अपने-अपने सुझाव दिये थे । इनकी कुछ सिफारिशो को सरकार ने स्वीकार करके क्रियान्वित किया । ऐसा पूरी तरह से ही भी नहीं पाया था और यह भी पूर्ण रूप से मालूम नहीं हो सका था कि इनके क्या परिणाम निकले कि सरकार ने १९६४ मे 'शिक्षा-आयोग' की नियुक्ति करके उस पर लगभग १५ लाख रुपया व्यय किया। सरकार ने एक नये आयोग को नियुक्त करके इतनी विशाल धनराशि क्यों व्यय की—इस बात की जानकारी करके हमें अपनी उत्सुकता को पहले शान्त कर लेना चाहिये । उसके बाद ही हमे इस बात पर विचार करना चाहिये कि आयोग ने क्या किया और क्यो ?

आयोग की नियुक्ति के कारण

Reasons for the Appointment of the Commission

भारत-सरकार ने १४ जुलाई, १९६४ के अपने 'प्रस्ताव' (Resolution) में आयोग की नियुक्ति के कारण अग्रलिखित शब्दों मे अंकित किये :[1]—

---

1. No. F. 41/3 (3) 64—E. I. Ministry of Education, Government of India, New Delhi, the 14th of July, 1964 as finally modified.

१. स्वतंत्रता-प्राप्ति के समय से ही भारत-सरकार ने देश की परम्पराओं और मान्यताओं (Values) तथा आधुनिक समाज की आवश्यकताओं और आकांक्षाओं को ध्यान मे रखकर राष्ट्रीय शिक्षा-प्रणाली का विकास करने का प्रयत्न किया है। इस दिशा में कुछ क़दम भी उठाये गये हैं, पर शिक्षा-प्रणाली का विकास समय की आवश्यकताओं के अनुसार नहीं हुआ है। शिक्षा के क्षेत्र में अब भी 'विचार और कार्य' (Thought and Action) में भारी अन्तर दिखाई देता है। देश की आर्थिक और सामाजिक प्रगति में शिक्षा का महत्त्वपूर्ण स्थान है। शिक्षा ही लोकतंत्रीय समाज का निर्माण कर सकती है। शिक्षा के द्वारा ही राष्ट्रीय-एकता सम्भव है। इन सब बातों को ध्यान मे रखकर यह आवश्यक समझा गया कि शिक्षा के सम्पूर्ण क्षेत्र की जाँच की जाय। इस जाँच के फलस्वरूप ही संतुलित एवं सगठित राष्ट्रीय शिक्षा-प्रणाली का विकास होना सम्भव होगा, और ऐसी ही प्रणाली से राष्ट्रीय जीवन के सभी क्षेत्रों को पूर्ण योग मिलेगा।

२. स्वतन्त्रता-प्राप्ति के समय से भारत ने राष्ट्रीय विकास के एक नवीन युग मे प्रवेश किया है। इस युग मे उसके लक्ष्य हैं—शासन और जीवन के ढंग के रूप में धर्म-निरपेक्ष लोकतंत्र (Secular Democray) की स्थापना, जनता की निर्धनता का अन्त, सब के लिये रहन-सहन का उचित स्तर, कृषि का आधुनीकरण, उद्योगों का तीव्र विकास, आधुनिक विज्ञान और प्रौद्योगिकी (Technology) का प्रयोग, तथा परम्परागत आध्यात्मिक मूल्यों के साथ इनका सामजस्य, समाजवादी ढङ्ग के समाज की रचना और इसके फलस्वरूप धन का उचित वितरण और शिक्षा, रोजगार तथा सांस्कृतिक प्रगति के लिये सबको अवसरों की समानता। इन लक्ष्यों की प्राप्ति तभी की जा सकती है, जब परम्परागत शिक्षा-प्रणाली में आमूल-चूल परिवर्तन कर दिया जाय।

३ स्वतन्त्रता-प्राप्ति के समय से सब स्तरों पर शिक्षा का आश्चर्यजनक विस्तार हुआ है। पर इस विस्तार के बावजूद शिक्षा के अनेकों अगों के प्रति व्यापक असन्तोष है। उदाहरणार्थ—अभी तक १४ वर्ष की आयु तक के बच्चों के लिये नि शुल्क और अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था नहीं की जा सकी है। निरक्षरता की समस्या का समाधान नहीं किया जा सका है। माध्यमिक विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में शिक्षा के स्तर को ऊँचा नहीं उठाया जा सका है। माध्यमिक और उच्च शिक्षा में पाठ्य क्रमों के विभिन्नीकरण (Diversification of Curricula) की योजना को पूर्ण रूप से कार्यान्वित नहीं किया जा सका है, जिसके परिणामस्वरूप एक ओर शिक्षित व्यक्तियों मे बेरोज़गारी अधिक हो

गई है और दूसरी ओर अनेकों उद्योगों में प्रशिक्षित व्यक्तियों का अत्यधिक अभाव है। शिक्षकों के वेतनों और सेवा-प्रतिबन्धों (Sevice-Conditions) में वांछित परिवर्तन नहीं हुआ और शिक्षा की अनेकों महत्त्वपूर्ण समस्यायें अभी तक उग्र विवाद के विषय बनी हुई हैं। सारांश में, शिक्षा की सख्यात्मक (Quantitative) वृद्धि तो हुई है, पर गुणात्मक (Qualitative) नहीं। इसके अतिरिक्त, शिक्षा की गुणात्मक उन्नति के लिये राष्ट्रीय नीतियों और कार्य-क्रमों को लागू नहीं किया जा सका है।

४. भारत-सरकार को इस बात का पूर्ण विश्वास है कि शिक्षा—राष्ट्रीय समृद्धि और कल्याण का आधार है। देश का जितना हित शिक्षा से हो सकता है, उतना किसी दूसरी वस्तु से नहीं। अतः सरकार ने शिक्षा का प्रतिष्ठापन करना निश्चय किया है। सरकार ने विज्ञान और प्रौद्योगिकी के सब साधनों का उपयोग करने का भी निश्चय किया है। यह केवल उत्तम और प्रगतिशील शिक्षा के आधार पर किया जा सकता है। अतः सरकार ने शिक्षा और वैज्ञानिक अनुसधान पर अधिक से अधिक धन व्यय करने का निश्चिय किया है।

५. शैक्षिक विकास के सम्पूर्ण क्षेत्र की जाँच की जानी वाछनीय है, क्योंकि शिक्षा-प्रणाली के विभिन्न अग एक-दूसरे पर प्रबल प्रतिक्रिया करते हैं और प्रभाव डालते हैं। विश्वविद्यालयों को तब तक शिक्षा के शक्तिशाली और प्रगतिशील केन्द्र नहीं बनाया जा सकता है, जब तक कि उत्तम माध्यमिक स्कूल न हों और माध्यमिक स्कूल उत्तम तभी होंगे—जब प्राथमिक विद्यालयों का सुचारु रूप से सचालन किया जायगा। अतः शिक्षा के सम्पूर्ण क्षेत्र की, न कि कुछ अगो की जाँच की जानी आवश्यक है। पिछले समय में अनेकों आयोगों और समितियों ने शिक्षा के विशेष अंगों और क्षेत्रों का अध्ययन किया है। इसके विपरीत, अब शिक्षा के सम्पूर्ण क्षेत्र का एक इकाई के रूप में सूक्ष्म अध्ययन किया जाना है।

६. भारतीय शिक्षा का नियोजन भारतीय अनुभव और दशाओं को ध्यान मे रखकर किया जाना आवश्यक है, पर भारत-सरकार के विचार से यह वांछनीय है कि अन्य देशों के शिक्षाविदों और वैज्ञानिको के अनुभवों और विचारो से भी लाभ उठाया जाय। इसका कारण यह है कि आज के संसार के सभी देश अनेकों कारणों से एक-दूसरे के निकट आते जा रहे हैं और सभी देशों का एक सामान्य उद्देश्य है—उचित प्रकार की शिक्षा की खोज।

सरकार ने अपने बताये हुए कारणो को ध्यान मे रखकर और भारतीय शिक्षा मे उपरिलिखित उद्देश्यो की पूर्ति के लिये 'शिक्षा-आयोग' की नियुक्त करने का निश्चय किया।

आयोग की नियुक्ति
Appointment of the Commission

अपने निश्चय के अनुसार भारत-सरकार ने १४ जुलाई, १९६४ को *विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग के प्रधान, प्रोफेसर डी० एस० कोठारी की अध्यक्षता में* 'शिक्षा-आयोग' की नियुक्ति की। अध्यक्ष के नाम पर इस आयोग को 'कोठारी-कमीशन' *भी कहा जाता है। आयोग का गठन इस प्रकार किया गया था :—*

Chairman

Professor D. S. Kothari, Chairman, University Grants Commission; Formerly Professor and Head of the Physics Department, Delhi University for several years; Scientific Adviser to the Minister of Defence from 1948 to 1961.

Members

1. Shri A. R Dawood, General Secretary, Anjuman-i-Islam, Bombay; Formerly Officiating Director, Directorate of Extension Programmes for Secondary Education, New Delhi.
2. *Mr. H. L. Elvin, Director, Institute of Education, University of London, London; Formerly Member of the University Grants Commission (1946), Fellow of* Trinity Hall, Cambridge from 1930 to 1944.
3. *Shri R. A. Gopalaswami, Director, Institute of Applied* Manpower Research, New Delhi; Formerly Chief *Secretary to the Madras Government*
4. Professor Sadatoshi Ihara, Professor of the First Faculty of Science and Technology, Waseda University, Tokyo, Japan.
5. Dr V S. Jha, Formerly Director of the Commonwealth Education Liaison Unit, London; Previously Secretary to the Government of Madhya Pradesh; Previous to that Director of Public Instruction, Madhya Pradesh, Vice-

Chancellor, Banaras Hindu University from 1956 to 1960.

6 Shri P. N. Kirpal, Educational Adviser and Secretary to the Government of India, Ministry of Education; New Delhi; Director, National Council of Educational Research and Training; Secretary General, Indian National Commission for UNESCO.

7. Professor M. V Mathur, Professor of Economics and Public Administration, University of Rajasthan, Jaipur; Now Vice-Chancellor, Rajasthan University.

8 Dr. B. P. Pal, Director, Indian Agricultural Research Institute, New Delhi, Now Director-General and Vice-President, Indian Council of Agricultural Research and Additional Secretary to the Government of India, Ministry of Food and Agriculture, Awarded Birbal Sahni Medal for Botany in 1962, Rafi Ahmed Kidwai Prize for Agricultural Botany in 1960, and *Padma Shri* in 1958.

9. Kumari S. Panandikar, Principal, College of Education and Head of the Post-Graduate Department of Education, Karnatak University, Dharwar, Member, Central Advisory Board of Education; Formerly Director of Education, Bombay; Director of Extension Programme for Secondary Education from 1959 to 1960.

10. Professor Roger Revelle, Director, Centre for Population Studies, Harvard School of Public Health, Harvard University, Cambridge, U. S. A., Chairman of the Committee appointed by the U. S. A. President to report on Land and Water Development in the Indus Plain

11. Dr K. G. Saiyidain, Director Asian Institute of Educational Planning and Administration, New Delhi; Formerly Educational Adviser to the Government of India; Chairman, Executive Board of the Indian National Commission

for Co-operation with UNESCO, Visiting Professor of Education, Stanford University, 1964; Senior Scholar, East-West Centre, Hawaii from 1963 to 1964.

12. Dr. T. Sen, Vice-Chancellor, Jadavpur University, Calcutta.
13 Professor S A. Shumovsky, Director of Methodological Division, Ministry of Higher and Special Secondary Education, RSFSR, and Professor of Physics, Moscow University, Moscow.
14 Mr. Jean Thomas, Inspector-General of Education, France; Formerly Assistant Director-General of UNESCO, Paris

Member-Secretary

Shri J. P. Naik, Head of the Department of Educatio Planning, Administration and Finance, Gokhale Institute Politics and Economics, Poona; Adviser on Primary E cation to the Ministry of Education from 1959 to 1964.

Associate Secretary

Mr. J. F. McDougall, Assistant Director, Department School and Higher Education, UNESCO, Paris.

Consultants

1. Prof. P. M. S. Blackett, President, Royal Societ London, U. K. , 2. Lord Robbins, Chairman of the Con mittee on Higher Education (1961-63), U. K ; 3. S Christopher Cox, Educational Adviser, Ministry of Overse Development U. K.; 4. Sir Willis Jackson, Professor c Engineering, Imperial College of Science and Technolog University of London, 5. Professor C. A. Moser, Londo School of Economics; 6. Dr Frederick Seitz, President National Academy of Sciences, U. S. A ; 7. Dr. James E. Allen Jr , Commissioner, State Education Department and President, University of the State of New York, U. S. A ,

8. Professor Edward A. Shils, University of Chicago, U S. A.; 9. Professor S. Dedijar, University of Lund, Sweden; 10. Recteur J. J. Capelle, Formerly Director-General of Education in France, 11. Dr. C. E. Beeby, Harvard University; 12. Academician A. D. Alexandrov, Rector, University of Leningrad; and 13. Academician O A Reutov, Academy of Sciences, U. S S. R.

समीक्षा

आयोग के सदस्यों और सलाहकारों की सूची देखने से कुछ बातें स्वयं ही स्पष्ट हो जाती हैं। पहली, आयोग के सदस्यों में काफी विदेशी थे। दूसरी, सलाहकारो मे सबसे अधिक सख्या इगलंड निवासियो की थी। तीसरी, विभिन्न विज्ञानों के जानकारों का बाहुल्य था। चौथी, कला (Arts) और वाणिज्य (Commerce) के विषयों के जानकारो का प्रायः पूर्ण अभाव था। पाँचवीं, विद्यालयो के शिक्षकों और कालिजों के लेक्चररों का कोई प्रतिनिधि नहीं था। हमारे विचार से आयोग का यह गठन उपयुक्त नहीं था। विदेशी सदस्यों को भारत की शैक्षिक, सामाजिक और आर्थिक स्थितियो से पूर्णतया परिचित नहीं माना जा सकता है। इंगलैंड ऐसे देश के सलाहकारों को, जिसे भारत से न कभी सहानुभूति थी और न है, इतनी बड़ी सख्या में रखा जाना उचित नहीं प्रतीत होता है। फिर इंगलैंड और भारत को किसी भी बात मे समानता नहीं है। हाँ, यदि कोई सदस्य डेन्मार्क का होता, तो उस पर आपत्ति नहीं की जा सकती थी, क्योंकि भारत के समान डेन्मार्क भी बहुत बड़ी सीमा तक कृषि और इससे सम्बन्धित कार्य करता है। वहाँ का कोई सलाहकार न रखकर, अंग्रेज सलाहकारो की सूची को अनावश्यक रूप से बढ़ा दिया गया। उनमें से कुछ ने तो भारत के बारे मे केवल पुस्तकों और समाचार-पत्रो मे ही पढ़ा होगा। क्या ऐसे सलाहकार उचित सलाह दे सकते हैं ? निस्सन्देह रूप से नहीं। कारण बिल्कुल स्पष्ट है। यदि हमसे कहा जाय कि जर्मनी मे माध्यमिक या उच्च शिक्षा के पुनर्संगठन के बारे में कुछ सलाह दीजिये, तो सलाह तो हम अवश्य दे देंगे, क्योंकि इस कार्य के लिये सभी अपने को योग्य समझते हैं, पर हमारी सलाह होगी निरर्थक। बहुत-कुछ यही बात अग्रेज सलाहकारों के बारे मे कही जा सकती है। खैर ! छोडिये इन सलाहकारों के पचड़े को। सम्भवत: इनको नियुक्त करते समय पिछले समय की याद ने जोर मारा हो।

विज्ञान के जानकारो को इतनी बड़ी संख्या में आयोग में स्थान नहीं दिया जाना चाहिये था। हमने माना कि आज का ससार विज्ञान पर आधारित है। पर यदि आप शान्त मस्तिष्क से सोचें, तो आपको ज्ञात होगा कि विज्ञान ही सब कुछ नही है। इसके अतिरिक्त कुछ और भी है, जिसको केवल भारत को ही नहीं, वरन

समस्त संसार को आवश्यकता है। मात्र विज्ञान पर आँख बन्द करके बल देने के कारण पाश्चात्य देश ऐसे दलदल में फँस गये हैं, जिससे वे निकल नहीं पाते हैं। अतः हमारे मतानुसार विज्ञान के जानकार सदस्यों को अन्य विषयों और शास्त्रों के विद्वानों से संतुलित किया जाना आवश्यक था।

आयोग में कला (Arts) और वाणिज्य (Commerce) के विषयों के जानकारों को स्थान देने का कोई प्रयास नहीं किया गया। ऐसा करते समय सम्भवतः यह समझा गया कि कला और वाणिज्य के विषय बिल्कुल निरर्थक हैं। यदि हैं, तो देश में इन विषयों के इतने कालेजों का बाहुल्य क्यों है? उनकी दशा में सुधार करने के लिये, उनके शिक्षण-स्तर को ऊँचा उठाने के लिये, उनमें कुशल नेताओं, प्रबन्ध कर्ताओं और व्यवसायियों का निर्माण करने के लिये, जिनकी आज भारत को परम आवश्यकता है, इन विषयों के जानकारों को पर्याप्त संख्या में रखा जाना वांछनीय ही नहीं, अपितु अनिवार्य था।

आयोग में विद्यालयों के शिक्षकों और कालेजों के लेक्चररों के किसी भी तिनिधि को कदाचित् इसलिये स्थान नहीं दिया गया, क्योंकि उसकी स्थिति, उसका तन, उसकी प्रतिष्ठा—सभी कुछ निम्न होते। पर विद्यालय और उच्च शिक्षा के ारे में अपने दैनिक अनुभव के आधार पर जो परामर्श वह देता, उससे आयोग चित रह गया।

आयोग में धुरंधर विद्वानों को स्थान दिया गया—यह अच्छा ही किया गया, र यदि इसमें शिक्षा के सब प्रमुख अंगों के जानकारों को रखा जाता और विशेष रूप उनको, जिनको उन अंगों का स्वयं अनुभव है, तो आयोग निश्चय रूप से टीका-टप्पणी से दूर रहता। उसमें इतने वैज्ञानिकों और विदेशियों को देखकर हम इस नष्कर्ष पर पहुँचे बिना नहीं रह सकते हैं, कि यह वैज्ञानिक या विदेशी शिक्षा-ायोग था।

आयोग का कार्य-क्षेत्र
Terms of Reference of the Commission

भारत सरकार ने अपने प्रस्ताव में आयोग के कार्य-क्षेत्र या जाँच के विषय ी इन शब्दों में व्यक्त किया—"आयोग भारत सरकार को शिक्षा के राष्ट्रीय ढाँचे, ीर उसके समस्त स्तरों तथा पहलुओं पर शिक्षा के विकास के लिये सामान्य शिक्षा द्धान्तों एवं नीतियों के सम्बन्ध में परामर्श देगा। इसे मेडिकल या कानून की क्षा की समस्याओं की जाँच करने की आवश्यकता नहीं है। परन्तु इन समस्याओं उन पहलुओं पर यह विचार प्रकट कर सकता है, जो सम्पूर्ण जाँच की दृष्टि से वश्यक प्रतीत हो।"

"The Commission will advise Government of India on the tional pattern of education and on the general principles and

policies for the development of education at all stages and in all its aspects. It need not, however, examine the problems of medical or legal education, but such aspects of these problems as are necessary for its comprehensive enquiry may be looked into"
—*Resolution of the Government of India Setting up the Education Commission*, dated 14 July, 1964

आयोग की कार्य-प्रणाली

Method of Working of the Commission

इस आयोग का उद्घाटन २ अक्टूबर, १९६४ को नई दिल्ली के विज्ञान-भवन में हुआ। उस अवसर पर भारत के राष्ट्रपति ने अपने सन्देश में कहा—"मेरी यह हार्दिक इच्छा है कि आयोग शिक्षा के सब पहलुओं—प्राथमिक, माध्यमिक, विश्वविद्यालीय और टेकनिकल—की जाँच करे और ऐसे सुझाव दे, जिनसे हमारी शिक्षा-व्यवस्था को अपने सभी स्तरो पर उन्नति करने मे सहायता मिले।"

"It is my earnest desire that the Commission will survey all aspects of education—primary, secondary, university and technical—and make recommendations which may help to improve our educational system at all its levels."

—*President, S. Radhakrishnan.*

आयोग ने २ अक्टूबर को ही अपने कार्य की योजना बनाई। उसने अनुभव किया कि शिक्षा का क्षेत्र इतना विस्तृत है कि उसका पूर्ण और सूक्ष्म अध्ययन करना सरल नहीं है। अत: उसने १२ 'कार्य-दल' (Task Forces) और ७ कार्य-समितियाँ (Working Groups) नियुक्त कीं और इनसे शिक्षा के विभिन्न अंगों की पूरी जाँच करने के लिये कहा। ये दल और समितियाँ निम्नलिखित थीं :—

(अ) कार्य-दल : Task Forces

१. स्कूल शिक्षा का कार्य-दल।
Task Force on School Education.

२. उच्च शिक्षा का कार्य-दल।
Task Force on Higher Education

३. व्यावसायिक, जीविका-सम्बन्धी और प्राविधिक शिक्षा का कार्य-दल।
Task Force on Professional, Vocational and Technical Education

४. कृषि-शिक्षा का कार्य-दल।
Task Force on Agricultural Education

५. प्रौढ़-शिक्षा का कार्य-दल।
Task Force on Adult Education.
६. विज्ञान-शिक्षा का कार्य-दल।
Task Force on Science Education.
७. अध्यापक-प्रशिक्षण और अध्यापक-स्थिति का कार्य-दल।
Task Force on *Teacher-Training* and *Teacher-Status.*
८. छात्र-कल्याण का कार्य-दल।
Task Force on Student Welfare.
९. शिक्षा में रीतियों और विधियों का कार्य-दल।
Task Force on Techniques & Methods in Education.
१०. जनशक्ति का कार्य-दल।
Task Force on Manpower.
११. शैक्षिक प्रशासन का कार्य-दल।
Task Force on Educational Administration.
१२. शैक्षिक-वित्त-व्यवस्था का कार्य-दल।
Task Force on Educational Finance.

(ब) कार्य-समिति : Working Groups

१. स्त्री-शिक्षा की कार्य-समिति।
Working Group on Women's Education.
२. पिछड़े वर्गों की शिक्षा की कार्य-समिति।
Working Group on the Education of Backward Classes.
३ शिक्षा-संस्थाओं के भवनों की कार्य-समिति।
Working Group on Educational Buildings.
४. *विद्यालय-समुदाय सम्बन्धों की कार्य-समिति।*
Working Group on School Community Relations.
५ क्रमबद्ध आँकड़ों की कार्य-समिति।
Working Group on Statistics.
६. पूर्व प्राथमिक शिक्षा की कार्य-समिति।
Working Group on Pre-Primary Education.
७. विद्यालय-पाठ्य-क्रम की कार्य-समिति।
Working Group on School Curriculum

आयोग ने २१ माह तक लगातार कार्य किया। कार्य के दौरान में उसने लगभग १०० दिन देश के विभिन्न भागों का भ्रमण करने में बिताये। वह विभिन्न

विश्वविद्यालयों, कॉलिजों और स्कूलों में गया और उसने शिक्षकों, शिक्षाविदों, प्रशासकों और छात्रों से विचार-विमर्श किया। उसने विश्वविद्यालयों के छात्रों के दो सम्मेलन आयोजित किये। इन सम्मेलनों में उसने छात्रों से शिक्षा, अनुशासन और छात्र-कल्याण के विषयों पर बात-चीत की।

आयोग ने समाज-सेवियों, वैज्ञानिकों, उद्योगपतियों, विभिन्न विषयों के विद्वानों और शिक्षा में रुचि रखने वाले पुरुषों और स्त्रियों से भेंट की। कुल मिलाकर आयोग ने लगभग ९,००० व्यक्तियों से शिक्षा की समस्याओं पर विचार-विनिमय किया। उसने विभिन्न स्थानों पर सेमिनारों और सम्मेलनों का आयोजन इस उद्देश्य से किया कि शिक्षा के विभिन्न अंगों पर लोगों के विचारों को जान सके। आयोग ने प्रश्नावली (Questionnaire) द्वारा उत्तर प्राप्त करके शिक्षा से सम्बन्धित अनेकों मामलों पर जानकारी प्राप्त की।

इस प्रकार सभी सम्भव साधनों से सूचनायें प्राप्त करके और स्वयं अध्ययन करके आयोग ने अपनी रिपोर्ट तैयार की। इस रिपोर्ट को उसने २९ जून, १९६६ को भारत-सरकार के शिक्षा-मंत्री श्री एम० सी० चागला (M. C. Chagla) की सेवा में प्रस्तुत किया।

आयोग का प्रतिवेदन
Report of the Commission

शिक्षा-आयोग के प्रतिवेदन का नाम है—"शिक्षा और राष्ट्रीय प्रगति"—"Education and National Development"। यह रिपोर्ट ३ भागों में विभाजित है :—

पहला भाग—१ से ६ अध्याय तक है। इसमें सभी स्तरों पर शिक्षा के पुनर्संगठन के सामान्य पहलुओं पर प्रकाश डाला गया है। इन पहलुओं में सम्मिलित हैं—राष्ट्रीय उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये शिक्षा-प्रणाली में परिवर्तन, शिक्षा के ढाँचे का पुनर्संगठन, शिक्षकों की स्थिति में सुधार, शिक्षा-संस्थाओं में छात्रों को प्रवेश देने की नीतियाँ और शिक्षा के अवसरों की समानता।

दूसरा भाग—अध्याय ७ से १७ तक है। इसमें शिक्षा के विभिन्न स्तरों और क्षेत्रों का विवेचन किया गया है। अध्याय ७ से १०—विद्यालय-शिक्षा के कुछ अंगों के बारे में बताते हैं। ये अंग हैं—विस्तार, पाठ्य-क्रम, शिक्षण-विधियाँ, पाठ्य-पुस्तकें, मार्ग-प्रदर्शन, मूल्यांकन, प्रशासन और निरीक्षण की समस्यायें। अध्याय ११ से १३ तक उच्च शिक्षा की समस्याओं के बारे में हैं, जिनमें सम्मिलित हैं—विश्वविद्यालयों की स्थापना, गुणात्मक उन्नति के कार्य-क्रम, छात्र-संख्या और विश्वविद्यालय-प्रशासन। अध्याय १४ और १५—कृषि, प्राविधिक और व्यावसायिक शिक्षा के बारे में हैं। अध्याय १६—विज्ञान की शिक्षा और अनुसंधान के सम्बन्ध में है। अध्याय १७—वयस्क-शिक्षा की समस्याओं पर प्रकाश डालता है।

तीसरा भाग—आयोग के सुझावों को कार्यान्वित करने की समस्याओं से सम्बन्ध रखता है। इसमें दो अध्याय हैं : अध्याय १८—शिक्षा की योजना और प्रशासन के बारे में है। अध्याय १९—शिक्षा की आर्थिक व्यवस्था के सम्बन्ध में है।

आयोग के युग-प्रवर्त्तक विचार
Revolutionary Ideas of the Commission

१. भारत के भाग्य का निर्माण—अध्ययन-कक्षों में

"इस समय भारत के भाग्य का निर्माण उसके अध्ययन-कक्षों में किया जा रहा है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी पर आधारित आज के संसार में शिक्षा ही व्यक्तियों की सम्पन्नता, समृद्धि और सुरक्षा के स्तर को निर्धारित करती है। राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के श्रेष्ठ कार्य में हमारी सफलता—हमारे स्कूलों और कॉलेजों से निकलने वाले छात्रों के गुणों और संख्या पर ही निर्भर है।"

"The destiny of India is now being shaped in her class-rooms. In a world based on science and technology, it is education that determines the level of prosperity, welfare and security of the people. On the quality and number of persons coming out of schools and colleges will depend our success in the great adventure of national reconstruction"

२ शिक्षा और राष्ट्रीय लक्ष्य

"शिक्षा मे सबसे महत्वपूर्ण और आवश्यक सुधार यह है कि इसको परिवर्तित करके व्यक्तियों के जीवन, आवश्यकताओ और आकांक्षाओ से इसका सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास किया जाय और इस प्रकार इसको उस सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिवर्तन का शक्तिशाली साधन बनाया जाय, जो राष्ट्रीय लक्ष्यो की प्राप्ति के लिये आवश्यक है।"

"The most important and urgent reform needed in education is to transform it, to endeavour to relate it to the life, needs and aspirations of the peopl [illegible] th [illegible] ke it a powerful instrument of [illegible] econ [illegible] ation necessary for the

कार्य—

"In a democracy, the individual is an end in himself and the primary purpose of education is to provide him with the widest opportunity to develop his potentialities to the full."

४. वर्तमान शिक्षा-प्रणाली में क्रान्तिकारी परिवर्तन

"यदि आधुनिक प्रजातन्त्रीय और समाजवादी समाज के उद्देश्यों की प्राप्ति करनी है, तो वर्तमान शिक्षा-प्रणाली मे आमूल-चूल परिवर्तन करने पड़ेंगे। वास्तव में, शिक्षा में क्रान्तकारी परिवर्तन की आवश्यकता है।"

'The present system of education will need radical changes if it is to meet the purposes of a modernizing democratic and socialistic society In fact, what is needed is a revolution in education."

५. शिक्षा और उत्पादन का सम्बन्ध

"भारत एक ऐसे समाज से, जिसमें शिक्षा एक अल्प संख्या का विशेषाधिकार है, ऐसे समाज मे परिवर्तित हो रहा है, जिसमें शिक्षा को जनसाधारण के लिये सुलभ बनाया जा सकेगा। शिक्षा के इस कार्यक्रम के लिये जिन विशाल साधनो की आवश्यकता है, उनको तभी उत्पन्न किया जा सकता है, जब शिक्षा का उत्पादन से सम्बन्ध स्थापित कर दिया जाय, जिससे कि शिक्षा के विस्तार के फलस्वरूप राष्ट्रीय आय की वृद्धि को, और इस वृद्धि को शिक्षा पर अधिक धन व्यय करने का साधन बनाया जाय।"

"India is in transition from a society in which education is a privilege of a small minority to one in which it could be made available to the masses of the people. The immense resources needed for this programme can be generated only if education is related to productivity so that an expansion of education leads to an increase in national income which, in its turn, may provide the means for a larger investment in education "

६. शिक्षा और राष्ट्रीय चेतना का विकास

"राष्ट्रीय चेतना का विकास—विद्यालय-शिक्षा-प्रणाली का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य होना चाहिये। हमें इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये प्रयास करना चाहिये—अपनी सांस्कृतिक विरासत के ज्ञान का विकास और पुन. मूल्याकन करके एव उस भविष्य मे अटल विश्वास उत्पन्न करके, जिसकी ओर हम बढ़ रहे हैं।"

"Promotion of national consciousness should be an important objective of the school system. This should be attempted

through the promotion of understanding and re-evaluation of our *cultural heritage* and *the creation of a strong driving faith in the future towards which we aspire*."

७. व्यावसायिक शिक्षा पर बल

"माध्यमिक शिक्षा में व्यावसायिक पहलू को परिवर्द्धित और विस्तृत किया जाना चाहिये और उच्च शिक्षा में कृषि-सम्बन्धी एवं प्राविधिक शिक्षा पर अधिक बल दिया जाना चाहिये ।"

"Secondary Education should be increasingly and largely vocationalized and *in higher education, a greater emphasis* should be placed on agricultural and technical education."

८. शिक्षा और आधुनीकरण

"समाज को अपना आधुनीकरण करने के लिये अपने-आप को शिक्षित करना पड़ता है। उसको साधारण नागरिक के शैक्षिक स्तर को ऊँचा उठाने के अलावा पर्याप्त विस्तार और योग्यता वाले एक ऐसे शिक्षित वर्ग का निर्माण करने का प्रयास करना चाहिये, जिसमें समाज के सभी वर्गों के ऐसे व्यक्ति हों, जिनके विश्वासों तथा आकांक्षाओं पर गहरी भारतीय छाप लगी हो।"

"To modernize itself a society has to educate itself. Apart from raising the educational level of the average citizen, it must try to create an intelligentsia of adequate size and competence, which *comes from all strata of society* and whose loyalties and aspirations are rooted to the Indian soil."

९. अंशकालिक और निजी समय की शिक्षा

"अंशकालिक और स्वकालिक शिक्षा का—शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर और प्रत्येक क्षेत्र में अधिक बड़े पैमाने पर विकास किया जाना चाहिये, और इसको वही प्रतिष्ठा दी जानी चाहिये, जो पूर्णकालिक शिक्षा को है।"

"*Part-time and own-time education* should be developed on a larger scale at every stage and every sector of education and should be given *the same status as full-time education*."

१०. अंशकालिक शिक्षा और अंशकालिक कार्य

"किसी नवयुवक को पूर्णकालिक शिक्षा की स्थिति से पूर्णकालिक कार्य की स्थिति में सहसा पहुँचने के लिये बाध्य नहीं किया जाना चाहिये। इन दोनों

स्थितियों के बीच मे अंशकालिक शिक्षा और अंशकालिक कार्य का समय रखा जाना वांछनीय है।"

"A young person should not be compelled to pass abruptly from a stage of full-time education to another of full-time work; it would be desirable to interpose a period of part-time education and part-time work between the two."

११. उत्तम शिक्षकों का प्रभाव

"उन सब विभिन्न कारकों में जो शिक्षा के स्वरूप और राष्ट्रीय प्रगति में उसके अभिदान को प्रभावित करते हैं, शिक्षकों के गुण, योग्यतायें और चरित्र निस्सन्देह रूप से सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। इसलिये शिक्षा-व्यवसाय के लिये उत्तम गुण-सम्पन्न व्यक्तियों को पर्याप्त संख्या में प्राप्त करने से अधिक आवश्यक और कुछ नहीं है।"

"Of all the different factors which influence the quality of education and its contribution to national development, the quality, competence and character of teachers are undoubtedly the most significant. Nothing is more important than securing a sufficient supply of high quality recruits to the teaching profession"

१२. अध्यापक-शिक्षा का ठोस कार्य-क्रम

"शिक्षा की गुणात्मक उन्नति के लिये अध्यापकों की व्यावसायिक शिक्षा का ठोस कार्य-क्रम अनिवार्य है। अध्यापक-शिक्षा पर व्यय किये जाने वाले धन से अत्यधिक लाभ हो सकता है, क्योंकि धन तो कम व्यय होता है, पर उससे लाखों व्यक्तियों की शिक्षा में गुणात्मक उन्नति होती है।"

"A sound programme of professional education of teachers is essential for the qualitative improvement of education Investment in teacher-education can yield very rich dividends because the financial resources required are small when measured against the resulting improvements in the education of millions.".

१३. अध्यापक-शिक्षा

"अध्यापक-शिक्षा के कार्य-क्रम का स्तर उसकी 'गुणता' है। इसके अभाव में अध्यापक-शिक्षा न केवल आर्थिक अपव्यय हो जाती है, वरन् शैक्षिक स्तरों के सम्पूर्ण पतन का साधन बन जाती है। अतः अध्यापक शिक्षा में गुणता को उन्नत करना सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य-क्रम है।"

"The essence of a programme of teacher-education is 'quality' and in its absence teacher-education becomes not only a financial waste but a source of overall deterioration in educational standards. A programme of highest importance, therefore, is to improve the quality of teacher-education."

१४. शिक्षा और आर्थिक विकास

"यदि भारत अपने आर्थिक विकास के लक्ष्यों को प्राप्त करना चाहता है, तो उसके पास प्रत्येक प्रकार के कार्य को करने के लिये शिक्षित विशेषज्ञों की पर्याप्त संख्या होना आवश्यक है।"

"If India is to achieve its targets of economic growth, it must have an adequate supply of educated specialists for each catergory of job to be performed"

१५. व्यावसायिक शिक्षा और जन-बल

"जन-बल की आवश्यकताओं के अनुसार प्राथमिकता के आधार पर सब क्षेत्रों में विद्यालय और कॉलेज—दोनों स्तरों पर व्यावसायिक शिक्षा के विस्तार की व्यवस्था करना आवश्यक है।"

"The provision of vocational education—both of school and college standard—will have to be expanded in keeping with man-power needs."

१६. शिक्षा और रोजगार

"हमें प्रत्येक स्नातक को उसकी डिग्री या डिप्लोमा के साथ-साथ, रोजगार देने की दिशा में कार्य करना चाहिये।"

"We should move in the direction of giving every graduate an offer of employment along with his degree or diploma"

१७. शिक्षा और शुल्क

"देश को उस स्थिति को प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिये, जिसमें सब प्रकार की शिक्षा नि:शुल्क हो जाय।"

"The country should work towards a stage when all education would be tuition free."

१८. शिक्षा के अवसरों में समानता

"शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण सामाजिक उद्देश्य है—शिक्षा प्राप्त करने के अवसरों में समानता ... जिससे कि पिछड़े हुए या कम विशेषाधिकार

वाले वर्ग और व्यक्ति, शिक्षा को अपनी दशा में सुधार करने के लिये साधन के रूप में प्रयोग कर सकें। प्रत्येक समाज, जो सामाजिक न्याय को महत्त्व देता है और सामान्य मनुष्य की दशा मे सुधार करने और सभी उपलब्ध योग्यता का विकास करने का इच्छुक है, उसे जनता के सब वर्गों के लिये समानता के अवसर मे निरन्तर वृद्धि को सुरक्षित करना आवश्यक है। केवल यही, समानता पर आधारित उस मानव-समाज के निर्माण की गारंटी है, जिसमे निर्बलों का शोषण कम हो जायगा।"

"One of the important social objectives of education is to equalize opportunity enabling the backward or underprivileged classes and individuals to use education as a lever for the improvement of their condition. Every society that values social justice and is anxious to improve the lot of the common man and cultivate all available talent must ensure progressive equality of opportunity to all sections of the population. This is the only guarantee for the building up of an egalitarian and human society in which exploitation of the weak will be minimised."

१९. विकलांगों की शिक्षा

"विकलांग बालक को दी जाने वाली शिक्षा का प्रमुख कार्य है—उसे उस सामाजिक और सांस्कृतिक वातावरण मे सामंजस्य करने के लिये तैयार करना, जिसका निर्माण सामान्य व्यक्ति की आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिये हुआ है। अतः यह आवश्यक है कि विकलांग बालकों की शिक्षा, सामान्य शिक्षा-प्रणाली का अभिन्न अंग हो।"

"The primary task of education for a handicapped child is to prepare him for adjustment to socio-cultural environment, designed to meet the needs of the normal. It is essential, therefore, that the education of handicapped children should be an inseparable part of the general educational system."

२०. शिक्षा के विकास में असंतुलन

"देश के विभिन्न भागों मे शिक्षा की सुविधाओं का विकास बहुत असंतुलित हुआ है। अतः शिक्षा-नीति का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य होना चाहिये—वर्तमान असतुलन को अधिक से अधिक कम करने का प्रयास करना।"

"The development of educational facilities in the different parts of the country has been very uneven and one of the impor-

tant objectives of educational policy should be to strive to reduce the existing imbalances to the minimum."

२१. स्त्री-शिक्षा का महत्त्व

"हमारे मानव-साधनो के पूर्ण विकास, परिवारो की उन्नति और बाल्यकाल मे अत्यधिक सरलता से प्रभावित होने वाले वर्षों में बच्चो के चरित्र के निर्माण के लिये स्त्रियो की शिक्षा का महत्त्व पुरुषों की शिक्षा से कहीं अधिक है।"

"For full development of our human resources, the improvement of homes, and for moulding the character of children during the most impressionable years of infancy, the education of women is of even greater importance than that of men."

२२. अपव्यय और अवरोधन

"अपव्यय और अवरोधन के दोषो को कम करने की एक प्रभावपूर्ण विधि यह है कि राज्य का शिक्षा-विभाग प्रत्येक स्कूल की अलग सत्ता स्वीकार करे और प्रत्येक स्कूल, प्रत्येक बालक के प्रति व्यक्तिगत ध्यान दे।"

"An effective way in which to reduce the evils of wastage and stagnation is for the State Education Department to treat every school as an individual entity, and for every school to give individual attention to every child."

२३. मार्ग-प्रदर्शन और समुपदेशन

"मार्ग-प्रदर्शन और समुपदेशन को शिक्षा का अभिन्न अंग माना जाना चाहिये। ये सब छात्रों के लिये होने चाहिये और इनका उद्देश्य—समय-समय पर प्रत्येक छात्र को निर्णय और सामञ्जस्य करने मे सहायता देना होना चाहिये। मार्ग-प्रदर्शन प्राथमिक विद्यालय की निम्नतम कक्षा से प्राप्त होना चाहिये।"

"Guidance and counselling should be regarded as an integral part of education, meant for all students, and aimed at assisting the individual to make decisions and adjustment from time to time. Guidance should begin from the lowest class in the primary school."

२४. निरक्षरता का उन्मूलन

"देश से निरक्षरता का उन्मूलन करने के लिये शीघ्र से शीघ्र प्रत्येक सम्भव प्रयास किया जाना चाहिये और देश के किसी भी भाग में, चाहे वह कितना ही पिछड़ा

हुआ क्यो न हो, इसमे २० वर्ष से अधिक नहीं लगने चाहिये। साक्षारता का राष्ट्रीय प्रतिशत १९७१ तक ६०, और १९७६ तक ८० हो जाना चाहिये।"

"Every possible effort should be made to eradicate illiteracy from the country as early as possible and in no part of the country, however backward, should it take more than 20 years The national percentage of literacy should be raised to 60 by 1971 and to 80 by 1976."

२५. पत्र-व्यवहार द्वारा शिक्षा

"जो व्यक्ति अशकालिक पाठ्यक्रमो का भी अनुसरण करने मे असमर्थ हैं, उनको शिक्षा देने के लिये पत्र-व्यवहार द्वारा शिक्षा देने के व्यापक संगठन का निर्माण किया जाना चाहिये।"

"In order to bring education to those who are unable even to attend part-time courses, widespread organization of correspondence courses should be organized."

२६. शिक्षा पर व्यय

"यदि शिक्षा का उचित विस्तार किया जाता है, तो प्रति छात्र पर होने वाला शैक्षिक व्यय, जो १९६५-६६ मे १२ रुपये है, अगले २० वर्ष में बढ़कर १९८५-८६ मे ५४ रुपये हो जाना चाहिये।"

"If education is to develop adequately, educational expenditure in the next 20 years should rise from Rs 12 per capita in 1965-66 to Rs. 54 in 1685-86."

२७. शिक्षा—राष्ट्रीय सुरक्षा का आधार

"कोई भी राष्ट्र अपनी सुरक्षा को केवल पुलिस और सेना को नहीं सौंप सकता है। बहुत बड़ी सीमा तक राष्ट्रीय सुरक्षा का आधार है—नागरिकों की शिक्षा, विभिन्न बातो का उनका ज्ञान, उनका चरित्र, उनकी अनुशासन की भावना और सुरक्षा के कार्यों मे कुशलता से भाग लेने की उनकी योग्यता।"

"No nation can leave its security only to the police and the army; to a large extent national security depends upon the education of citizens, their knowledge of affairs, their character and sense of discipline and their ability to participate effectively in security measures."

२८. विज्ञान पर आधारित शिक्षा

"केवल विज्ञान पर आधारित और भारतीय संस्कृति तथा मान्यताओं के
मंजस्य रखने वाली शिक्षा ही राष्ट्र की प्रगति, सुरक्षा और कल्याण के आधार और
धन का निर्माण कर सकती है।"

"Education, science-based and in coherence with Indian
ulture and values, can alone provide the foundation as also the
strument for the nation's progress, security and welfare."

२९ विज्ञान और लौकिक दृष्टिकोण

"विचार-स्वतन्त्रता, सहिष्णुता और वस्तुनिष्ठता पर बल देने वाले विज्ञान
ा सजीव अध्ययन निश्चय रूप से अधिक लौकिक दृष्टिकोण का विकास करेगा।"

"A vitalized study of science with its emphasis on open
indedness tolerance and objectivity would inevitably lead to the
evelopment of a more secular outlook."

३०. आधुनिक समाज में शिक्षा-प्रणाली

"आधुनिक समाज में, जिसमें परिवर्तन की गति और ज्ञान की वृद्धि बहुत
व्र है, शिक्षा-प्रणाली का लचीला और गतिशील होना आवश्यक है।"

"In a modern society where the rate of change and of the
owth of knowledge is very rapid, the educational system must be
astic and dynamic."

३१. विद्यालय-पाठ्यक्रम में आमूल सुधार

"हाल के वर्षों में ज्ञान के अलौकिक विस्तार और विज्ञानों की अनेक
रणाओं के पुनः व्यवस्थित रूप ने वर्तमान विद्यालय-कार्यक्रमों की अनुपयुक्तता पर
त्यधिक प्रकाश डाला है और विद्यालय-पाठ्यक्रम में आमूल सुधार पर अधिकाधिक
र दिया है।"

"The explosion of knowledge in recent years and the refor-
ulation of many concepts in the sciences have highlighted the
adequacy of existing school programmes and brought about a
ounting pressure for a radical reform of school curriculum."

३२ प्रधानाध्यापकों को स्वतन्त्रता

"सामान्य सिद्धान्त होने चाहिये—प्रधानाध्यापकों को सतर्कता से चुनना,
को उचित प्रकार से प्रशिक्षित करना, उनका पूरी तरह से विश्वास करना और

उनको आवश्यक अधिकार से युक्त करना। वे ग़लतियाँ कर सकते हैं, जैसा कि व्यक्ति करते हैं। पर जब तक ग़लती करने की स्वतन्त्रता नहीं दी जायगी, तब तक कोई भी प्रधानाध्यापक विद्यालय और उसके सुधार में वास्तविक रुचि नहीं लेगा।"

"The general principles should be to select the headmasters carefully, to train them properly, to trust them fully and to vest them with necessary authority. They might commit mistakes as human beings do. But unless the freedom to commit mistakes is given, no headmaster will be able to take deep interest in the school and in its improvement."

३३. निरीक्षण—शैक्षिक सुधार का आधार-स्तम्भ

"एक अर्थ में निरीक्षण—शैक्षिक सुधार का आधार-स्तम्भ है। अतः यह आवश्यक है कि निरीक्षण-पद्धति में फिर जीवन का संचार किया जाय।"

Supervision being in a sense the back-bone of educational improvment; it is imperative that the system of supervision should be revitalised."

३४. मूल्यांकन और उसकी विधियाँ

"मूल्यांकन अविराम प्रक्रिया के रूप में शिक्षा की सम्पूर्ण प्रणाली का अभिन्न अंग है और शिक्षा के उद्देश्यों से इसका घनिष्ठ सम्बन्ध है। यह छात्र की अध्ययन की आदतों और अध्यापक की शिक्षण-विधियों पर अत्यधिक प्रभाव डालता है, और इस प्रकार न केवल शैक्षिक योग्यता की जाँच करने, वरन् उसको ऊँचा उठाने में भी सहायता देता है। इसलिये मूल्यांकन की विधियाँ—तर्कपूर्ण, विश्वसनीय, वस्तुपरक और उपयुक्त होनी चाहिये।"

"Evaluation as a continuous process, forms an integral part of the total system of education and is intimately related to educational objectives. It exercises a great influence on the pupil's study habits and the teacher's methods of instruction and thus helps not only to measure educational achievement but also to improve it. Techniques of evaluation should, therefore, be valid, reliable, objective and practicable.

३५. शिक्षा—केन्द्र और राज्यों की साझेदारी

"शिक्षा अनिवार्य रूप से राज्य-सरकारों का दायित्व है। पर यह राष्ट्रीय विषय भी है और कुछ विशाल क्षेत्रों में राष्ट्रीय स्तर पर निर्णय करने पड़ते हैं।

अध्याय २

शिक्षा और राष्ट्रीय लक्ष्य

EDUCATION AND NATIONAL OBJECTIVES

(अ) राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के लिये शिक्षा में परिवर्तन

आयोग ने लिखा है कि इस समय भारत के भाग्य का निर्माण उसके अध्ययन-कक्षों में किया जा रहा है। आज के विश्व मे, जो विज्ञान और टेकनॉलॉजी पर आधारित है, लोगो की समृद्धि, कल्याण और सुरक्षा का स्तर शिक्षा द्वारा निर्धारित किया जाता है। हमारे स्कूलो और कॉलेजो से निकलने वाले छात्रों के गुणों पर ही राष्ट्रीय पुनर्निर्माण की सफलता निर्भर है। इस दृष्टिकोण से तीन बातें आवश्यक हैं :—

१. राष्ट्रीय विकास के सम्पूर्ण कार्य-क्रम मे शिक्षा के कार्यों का फिर मूल्याकन किया जाय।
२. वर्तमान शिक्षा-प्रणाली मे कुछ परिवर्तनों को स्वीकार किया जाय और शिक्षा के विकास के कार्य-क्रम को उन पर आधारित किया जाय।
३. इस कार्य-क्रम को पूर्ण शक्ति और दृढ़ सकल्प से कार्यान्वित किया जाय।

(ब) राष्ट्रीय पुनर्निर्माण की समस्याएँ

आयोग ने लिखा है कि राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के कार्य को सफल बनाने के लिये चार समस्याओ का समाधान किया जाना आवश्यक है :—

१. खाद्य-सामग्री मे आत्म-निर्भरता।
२. आर्थिक विकास और बेरोजगारी का अन्त।
३. सामाजिक और राजनैतिक एकता।
४. राजनैतिक विकास।

(स) शिक्षा का व्यक्तियों के जीवन, आवश्यकताओं और आकांक्षाओं से सम्बन्ध

उपरोक्त समस्यायें अत्यधिक कठिन, जटिल, महत्त्वपूर्ण और आवश्यक हैं। इन सब का सम्बन्ध एक-दूसरे से है। इनके समाधान के लिये आयोग ने शिक्षा को महत्त्वपूर्ण साधन बताया। उसने लिखा कि—इन समस्याओं के समाधान और उस परिवर्तन को पूर्ण करने के लिए, जो हमारा लक्ष्य है, शिक्षा को एक महत्त्वपूर्ण साधन के रूप में स्वीकार किया जाना आवश्यक है। पर यह साधन महत्त्वपूर्ण तभी हो सकता है, जब शिक्षा के वर्तमान रूप को परिवर्तित करके लोगों के जीवन, आवश्यकताओं और आकांक्षाओं से उसका सम्बन्ध स्थापित किया जाय। हमारे राष्ट्रीय विकास में जो अवरोध आ गया है, उसका प्रमुख कारण यह है कि प्रचलित शिक्षा के उद्देश्यों और विषय-सामग्री का राष्ट्रीय विकास के विषयों से कोई सम्बन्ध नहीं है। अतः शिक्षा को लोगों के जीवन, आवश्यकताओं और आकांक्षाओं से सम्बन्धित किया जाय, जिससे कि आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक विकास करके राष्ट्रीय लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके।

(द) शिक्षा का पंचमुखी कार्य-क्रम

उपरोक्त उद्देश्य में सफलता प्राप्त करने के लिये आयोग ने पचमुखी कार्य-क्रम का सुझाव दिया :—

१. शिक्षा के द्वारा उत्पादन में वृद्धि।
२ शिक्षा के द्वारा सामाजिक और राष्ट्रीय एकता का विकास।
३ शिक्षा के द्वारा प्रजातन्त्र की सुदृढ़ता।
४. शिक्षा के द्वारा आधुनीकरण की प्रक्रिया में तीव्रता।
५. शिक्षा के द्वारा सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक मान्यताओं का विकास करके चरित्र का निर्माण।

१. शिक्षा और उत्पादन
Education & Productivity

शिक्षा द्वारा उत्पादन में वृद्धि करने के लिये आयोग ने निम्नलिखित सुझाव दिये हैं :—

१. *विज्ञान की शिक्षा (Science Education)* को *विद्यालय-शिक्षा और* क्रमशः विश्वविद्यालय-शिक्षा के सब पाठ्य-क्रमों का अभिन्न अंग बनाया जाय।
२. कार्य-अनुभव (Work Experience) को सम्पूर्ण शिक्षा का अभिन्न अंग बनाया जाय।
३. कार्य-अनुभव को टेकनॉलॉजी और औद्योगीकरण की दिशा में मोड़ने का प्रयास किया जाय।

४. विज्ञान का प्रयोग उत्पादन और कृषि के कार्यों के लिये किया जाय।

५. माध्यमिक शिक्षा को अधिक से अधिक व्यावसायिक बना दिया जाय।

६. उच्च शिक्षा में अनुसंधान और वैज्ञानिक तथा प्राविधिक शिक्षा के अन्तर्गत कृषि और उससे सम्बन्धित विषयों पर बल दिया जाय।

समीक्षा

अपने सुझावों में आयोग ने विज्ञान और प्रौद्योगिकी (Science & Technology) की शिक्षा पर बहुत बल दिया है। ऐसा किया जाना वांछनीय ही नहीं, वरन् अनिवार्य भी है। यदि हम अपने देश का औद्योगीकरण चाहते हैं, तो हमें इन विषयों की शिक्षा का अधिक से अधिक और उत्तम से उत्तम प्रबन्ध करना पड़ेगा। तभी हमको अपने उद्योगों के लिये कुशल व्यक्ति प्राप्त हो सकेंगे। पर इन विषयों की शिक्षा देते समय हमें यह नहीं भूलना होगा कि प्रत्येक छात्र का नैतिक, चारित्रिक और आध्यात्मिक विकास भी करना आवश्यक है। ऐसा किये बिना, उसे वास्तविक अर्थ में मानव बनाये बिना, उसका विज्ञान और टेक्नालोजी का ज्ञान प्राप्त व्यर्थ हो जायगा। वह कुशल वैज्ञानिक और इंजीनियर कहलाने का अधिकारी तभी होगा, जब वह अपने देश की *संस्कृति, परम्पराओं और मान्यताओं से सराबोर हो।*

आयोग का यह सुझाव अभिनन्दनीय है कि माध्यमिक शिक्षा को अधिक से अधिक व्यावसायिक रूप दिया जाय। ऐसा करने से माध्यमिक शिक्षा-प्राप्त छात्रों को रोजगार की खोज में इधर-उधर नहीं भटकना पड़ेगा, क्योंकि वे स्वतन्त्र रूप से किसी न किसी कार्य को कर सकेंगे।

जैसा कि आयोग ने लिखा है—शिक्षा का कृषि से सम्बन्ध स्थापित किया जाना आवश्यक है। भारत खेतिहर देश है। उसकी प्रगति का आधार—कृषि है। अतः कृषि की शिक्षा पर बल दिया जाना आवश्यक है। ऐसा करके ही हमारे देश में कृषि-सम्बन्धी क्रान्ति प्रारम्भ होगी, जो अभी तक नहीं हुई है।

आयोग का सबसे उत्तम सुझाव है—'कार्य-अनुभव' (Work-Experience)। शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर छात्रों को अपनी शिक्षा से सम्बन्धित कार्य का अनुभव प्राप्त करके बहुत लाभ होगा। उनकी शिक्षा सैद्धान्तिक नहीं रह जायगी, जैसी कि इस समय है। उनको इस बात का भी अनुभव हो जायगा कि अपने कार्य या व्यवसाय को किस प्रकार करें। साथ ही वे अपने पुस्तकीय ज्ञान का प्रयोग अपने व्यावहारिक कार्य में कर सकेंगे। कार्य-अनुभव से एक दूसरा लाभ यह होगा कि छात्र व्यक्तियों और वास्तविक जीवन के सम्पर्क में आयेंगे। अतः उन्हें जीवन में प्रवेश करते समय किसी कठिनाई का अनुभव नहीं होगा। पर कार्य-अनुभव की व्यवस्था करने में बहुत विवेक और दूरदर्शिता से काम लेना पड़ेगा। कारण यह है कि व्यक्ति और वास्तविक जीवन खराब भी हो सकते हैं और अच्छे भी। यदि छात्र खराब ही खराब के सम्पर्क

मे आये, तो उनका नैतिक अध पतन हो जायगा और व अपने देश के लिये अभिशाप सिद्ध होंगे ।

२. सामाजिक और राष्ट्रीय एकता
Social & National Integration

शिक्षा द्वारा सामाजिक और राष्ट्रीय एकता के लिये आयोग ने निम्नलिखित सुझाव दिये हैं :—

१. सार्वजनिक शिक्षा के लिये 'सामान्य विद्यालय-प्रणाली' (Common School System) को राष्ट्रीय लक्ष्य के रूप मे स्वीकार किया जाय और इस प्रणाली को २० वर्ष मे पूर्ण किया जाय ।

२. शिक्षा के सब स्तरो पर सामाजिक और राष्ट्रीय सेवा (Social & National Service) को सब छात्रों के लिये अनिवार्य कर दिया जाय ।

३ सामाजिक और राष्ट्रीय सेवा के कार्य-क्रमों की व्यवस्था अध्ययन के विषयों के साथ-साथ की जाय । प्राथमिक स्तर पर छात्रो से समुदाय की विभिन्न उपयुक्त ढंगो से सेवा कराई जाय । सेवा के इन कार्य-क्रमों के ि एक वर्ष में निम्न माध्यमिक स्तर पर ३० दिन, उच्च-माध्या स्तर पर २० दिन, और पूर्व-स्नातक (Under-Graduate) स्तर पर ६० दन रखे जायें ।

४. प्रत्येक शिक्षा-सस्था मे सामाजिक और सामुदायिक सेवा के कार्य-क्रम का विकास किया जाय और इसमे प्रत्येक छात्र द्वारा उचित ढग से भाग लिया जाय ।

५. प्रत्येक जिले में 'श्रम और सामाजिक सेवा-शिविरो' (Labour & Social Service Camps) की व्यवस्था की जाय और इनमें प्रत्येक छात्र की उपस्थिति अनिवार्य कर दी जाय ।

६. एन० सी० सी० के कार्य-क्रम को चौथी पचवर्षीय योजना के अन्त तक जारी रखा जाय ।

७. यथासम्भव पूर्व-स्नातक स्तर पर एन० सी० सी० कार्य-क्रम लगभग ६० दिन तक दिन भर चलाया जाय ।

८. सामाजिक और राष्ट्रीय एकता मे सहायता देने के लिये उपयुक्त 'भाषा-नीति' (Language Policy) का निर्माण किया जाय ।

९. मातृभाषा अर्थात् प्रादेशिक भाषा को विद्यालय और उच्च-शिक्षा का माध्यम बनाया जाय । इस कार्य-क्रम को १० वर्ष मे पूरा कर दिया जाय ।

१०. प्रादेशिक भाषाओं में साहित्य, विज्ञान और प्राविधिक पुस्तकों का प्रकाशन 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' (University Grants Commission) की सहायता से विश्वविद्यालयों द्वारा किया जाय।

११. अखिल-भारतीय शिक्षा-संस्थाओं में अंग्रेजी को शिक्षा के माध्यम के रूप में जारी रखा जाय। पर कुछ समय बाद हिन्दी को अंग्रेजी का स्थान देने पर विचार किया जाय।

१२ प्रादेशिक भाषाओं को उन क्षेत्रों में—जहाँ वे प्रयोग की जाती हैं, जल्दी से जल्दी प्रशासन की भाषायें बनाया जाय।

१३. अंग्रेजी के शिक्षण और अध्ययन को विद्यालय-स्तर से जारी रखा जाय।

१४ अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्व की अन्य भाषाओं के अध्ययन को प्रोत्साहित किया जाय।

१५ रूसी भाषा के अध्ययन पर विशेष ध्यान दिया जाय।

१६. संसार की कुछ महत्त्वपूर्ण भाषाओं की शिक्षा के लिये कुछ स्कूल और विश्वविद्यालय स्थापित किये जायें।

१७. उच्च शिक्षा में साहित्यिक कार्य और उच्च शिक्षा-प्राप्त व्यक्तियों के 'विचार-विमर्श' के लिये अंग्रेजी को संयोजक भाषा (Link Language) का रूप दिया जाय।

१८. देश के अधिकांश निवासियों के लिये हिन्दी को संयोजक भाषा का रूप दिया जाय। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये अहिन्दी क्षेत्रों में हिन्दी का विस्तार करने के लिये सभी प्रकार के उपाय किये जायें।

१९. राज्यों में पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित करने के लिये—सब भारतीय भाषाओं के विस्तार की व्यवस्था की जाय। इस उद्देश्य में सफलता प्राप्त करने के लिये स्कूलों और कॉलेजों में विभिन्न आधुनिक भारतीय भाषाओं के शिक्षण की उचित व्यवस्था की जाय, और प्रत्येक विश्वविद्यालय में आधुनिक भारतीय भाषाओं के कुछ विभाग स्थापित किये जायें।

२०. बी० ए० और एम० ए० के स्तरों पर दो भारतीय भाषाओं के अध्ययन की सुविधा दी जाय।

२१. राष्ट्रीय चेतना के विकास को विद्यालय-शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य बनाया जाय। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये हमारी सांस्कृतिक विरासत के ज्ञान का विकास और उसका पुनः मूल्यांकन किया जाय एवं उस भविष्य में अटल विश्वास उत्पन्न किया जाय, जिसकी ओर हम बढ़ रहे हैं।

२२. सांस्कृतिक विरासत के ज्ञान के विकास और पुनः मूल्यांकन के लिये भाषाओं, साहित्यों, दर्शन, धर्म और भारतीय इतिहास के शिक्षण को अच्छी तरह से नियोजित किया जाय।
२३. भविष्य मे विश्वास उत्पन्न करने के लिये नागरिकता, संविधान के सिद्धान्तों और लोकतन्त्रीय समाजवादी समाज के स्वरूप को पाठ्य-क्रमों में स्थान दिया जाय।

समीक्षा

आयोग के प्रायः सभी सुझाव सुन्दर और उपयुक्त हैं, क्योंकि इनको अपना कर ही सामाजिक और राष्ट्रीय एकता के स्वप्न को साकार बनाया जा सकता है। देश मे सामान्य शिक्षा की एक प्रणाली हो। इसी उद्देश्य से आयोग ने 'सामान्य-विद्यालयों' (Common Schools) की स्थापना का सुझाव दिया है। इस समय देश में विभिन्न प्रकार के स्कूल चल रहे हैं। वे सामाजिक और राष्ट्रीय एकता के मार्ग में बहुत बाधक सिद्ध हो रहे हैं। इसका कारण स्पष्ट है। विदेशी मिशनरियों द्वारा चलाये जाने वाले नर्सरी विद्यालयों और केम्ब्रिज स्कूलों तथा भारतीयों द्वारा संचालित पब्लिक स्कूलों मे पढ़ने वाले छात्र प्रारम्भ से ही दूसरे प्रकार के स्कूलों में अध्ययन करने वाले छात्रों को अपने से हीन और निम्न समझने लगते हैं। अतः जो शिक्षा-संस्थायें इस प्रकार की भावना के लिये उत्तरदायी हैं, उन्हें सरकार के आध्यादेश (Ordinance) के द्वारा आज ही बन्द कर देना चाहिये।

शिक्षा के सब स्तरों पर सामाजिक और राष्ट्रीय सेवा को अनिवार्य बनाने से छात्रों में इस सेवा की भावना का विकास होगा। फलस्वरूप वे आत्म-हित को समाज और राष्ट्र के कल्याण के लिये बलिदान करना सीख जायेंगे। इसकी बहुत ही अधिक आवश्यकता है, क्योंकि आज भारत मे आत्म-हित की, निजी स्वार्थ की, भावना बहुत प्रबल रूप धारण कर चुकी है। आयोग द्वारा बताये गये 'श्रम और सामाजिक सेवा-शिविरों' द्वारा छात्रों में श्रम के प्रति सम्मान और सामुदायिक भावना का विकास होगा। सभी सफ़ेद कालर वाले छात्र श्रम को हेय समझते हैं और सामुदायिक भावना को जानते भी नहीं हैं।

आयोग की 'भाषा-नीति' पर लोगों को भले ही आपत्ति हो, पर हमको नहीं है। यह कहना विवेकपूर्ण नहीं जान पड़ता है कि उसने अंग्रेजी पर बल दिया है। उसने केवल यह सुझाव दिया है कि अंग्रेजी के शिक्षण को जारी रखा जाय। उसने यह तो नहीं कहा है कि हिन्दी, प्रादेशिक भाषाओं और भारतीय भाषाओं के शिक्षण को समाप्त करके केवल अंग्रेजी की शिक्षा दी जाय। इसके विपरीत, उसने इस बात पर बल दिया है कि सभी सम्भव विधियों से हिन्दी और सभी भारतीय भाषाओं को विकसित किया जाय। हाँ, यदि आयोग यह कहता कि अंग्रेजी के शिक्षण को बिल्कुल बन्द कर दिया जाय, तो सम्भवतः सभी व्यक्ति हर्ष और उल्लास से फूल जाते। पर

आयोग के प्रकाण्ड विद्वान्, जो हिन्दी और अंग्रेजी के तुलनात्मक महत्व को समझते थे, इस प्रकार का अविवेकपूर्ण सुझाव नहीं दे सकते थे। पहले भारतीय भाषाओं को समृद्ध बनाइये, उन्हें इस योग्य बनाइए कि वे अंग्रेजी के समकक्ष हों या उससे बढ़ जायें, तब अंग्रेजी को राष्ट्र-जीवन से निकाल भी दीजिये। उस दशा में भी अंग्रेजी को देश से सदैव के लिये सर्वविदाई देना सम्भव नहीं होगा। कारण यह है कि अंग्रेजी समय की गति के साथ अपना परिवर्तन कर रही है, अपने को समय के अनुकूल बना रही है, व्यक्तियों की आवश्यकताओं को पूर्ण करने का प्रयास कर रही है। क्या किसी भी भारतीय भाषा के बारे में ये बातें कही जा सकती हैं? स्पष्ट रूप से नहीं। फिर आयोग पर अंग्रेजी को बनाये रखने का सुझाव देने के कारण—प्रहार पर प्रहार क्यों किये जा रहे हैं? हमें तो इस दृष्टिकोण में किसी प्रकार का औचित्य नहीं दिखाई देता है, भले ही अंग्रेजी से अकारण द्वेष रखने वाले लम्बे-लम्बे, आधार हीन और निष्प्रयोजन तर्क क्यों न प्रस्तुत करें।

३ शिक्षा और प्रजातन्त्र की सुदृढ़ता
Education & Consolidation of Democracy

शिक्षा द्वारा प्रजातन्त्र की सुदृढ़ता के लिये आयोग ने निम्नलिखित सुझाव दिये हैं :—

१. १४ वर्ष तक की आयु के बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा दी जाय।
२. वयस्क शिक्षा के कार्य-क्रम आयोजित किये जायें, जिनके दो उद्देश्य रखे जायें—(i) निरक्षरता का उन्मूलन, और (ii) व्यक्ति की नागरिक और राष्ट्रीय कुशलता तथा सामान्य सांस्कृतिक स्तर की उन्नति।
३. माध्यमिक और उच्च शिक्षा का विस्तार करके सब स्तरों पर कुशल नेतृत्व का प्रशिक्षण दिया जाय।
४. जाति, धर्म, स्थिति, धर्म, और लिंग का भेद-भाव किये बिना सब बच्चों को शिक्षा के समान अवसर दिये जायें।
५. सब व्यक्तियों में वैज्ञानिक विचार और दृष्टिकोण का विकास किया जाय।
६. सब व्यक्तियों में *सहिष्णुता, जन-हित, समाज-सेवा, आत्म-अनुशासन,* आत्म-निर्भरता और पहलकदमी के गुणों का विकास किया जाय।

समीक्षा

'शिक्षा' प्रजातन्त्र का आधार है। शिक्षित व्यक्ति ही अपने कर्त्तव्यों और अधिकारों को भली प्रकार समझ कर और उनका *पालन* करके *प्रजातंत्र* को सफल बना सकते हैं। भारत ने अपने को धर्म-निरपेक्ष प्रजातन्त्र घोषित किया है। इसमें

सफलता तभी प्राप्त हो सकती है, जब भारत का जन-जन शिक्षित हो। इसी बात को ध्यान में रखकर आयोग ने उपरोक्त सुझाव दिये हैं। अतः इनको मान्यता प्रदान की जानी आवश्यक है। ऐसा किये बिना हमारे देश के बालक और वयस्क—दोनों अशिक्षित रह जायेंगे।

लोकतंत्र की सफलता के लिये प्रत्येक क्षेत्र—सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक आदि—में कुशल नेतृत्व की आवश्यकता है। अतः माध्यमिक और उच्च शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य—नेतृत्व का प्रशिक्षण देना—होना चाहिए। यही सुझाव आयोग ने दिया है।

४. शिक्षा और आधुनीकरण
Education & Modernization

शिक्षा द्वारा देश का आधुनीकरण करने के बारे में आयोग ने निम्नलिखित सुझाव दिये हैं :—

१. सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में आधुनीकरण करने के लिये विज्ञान पर आधारित टेकनॉलॉजी को अपनाया जाय।
२. आधुनीकरण के लिये शिक्षा को एक महत्त्वपूर्ण साधन माना जाय, और आधुनीकरण की प्रगति से शैक्षिक उन्नति की गति को सम्बद्ध किया जाय।
३. शिक्षा के द्वारा उत्सुकता को जाग्रत किया जाय और उचित दृष्टिकोणों तथा मान्यताओं (Values) का विकास किया जाय।
४. शिक्षा के द्वारा स्वतंत्र अध्ययन, स्वतंत्र विचार और स्वतंत्र निर्णय की आदतों का निर्माण किया जाय।
५. सामान्य व्यक्ति के शैक्षिक स्तर को ऊँचा उठाया जाय और एक ऐसे शिक्षित वर्ग का निर्माण किया जाय, जिसमें समाज के सभी अंगों के व्यक्ति हों और जिनके विश्वासों तथा आकांक्षाओं पर गहरी भारतीय छाप लगी हो।

समीक्षा

आज का समाज विज्ञान पर आधारित प्रौद्योगिकी (Technology) के कारण प्राचीन समाज से पूर्णतया भिन्न है। जिन समाजों और देशों में इस प्रकार की प्रौद्योगिकी का विकास किया गया है, उनकी आश्चर्यजनक उन्नति हुई है। पर विज्ञान पर आधारित प्रौद्योगिकी का एक दूसरा पक्ष भी है। वह पक्ष है—सामाजिक और सांस्कृतिक। अतः देश के प्रौद्योगिक विकास के लिये सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोणों में भी परिवर्तन करना आवश्यक है। ऐसा किये बिना प्रौद्योगिक विकास निरर्थक सिद्ध होगा। इसीलिये आयोग का यह सुझाव ठीक है कि शिक्षा के द्वारा उचित दृष्टिकोणों और मान्यताओं का विकास किया जाय।

भारतीय समाज ने अति श्रेष्ठ विरासत उत्तराधिकार में प्राप्त की है। पर दुर्भाग्य से भारतीय समाज पर्याप्त शिक्षित नहीं है; और जब तक यह शिक्षित नहीं होगा, तब तक यह न तो अपना आधुनीकरण कर सकेगा, न राष्ट्रीय पुनर्निमाण की नई माँगों को पूरा कर सकेगा, और न उन्नतिशील राष्ट्रो मे अपना उचित स्थान ग्रहण कर सकेगा। अतः शिक्षा ही आधुनीकरण का साधन हो सकती है। यही कारण है कि आयोग ने इस बात पर बल दिया है कि आधुनीकरण के लिये शिक्षा को एक महत्वपूर्ण साधन माना जाय और शिक्षा तथा आधुनीकरण की गतियो मे संतुलन रखा जाय।

५. सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों का विकास
Development of Social, Moral & Spiritual Values

आयोग ने यह विचार व्यक्त किया है कि शिक्षा के द्वारा छात्र की सामाजिक, नैतिक और अध्यात्मिक मान्यताओं का विकास करके उसके चरित्र का निर्माण किया जाय। इस सम्बन्ध मे आयोग के सुझाव निम्नलिखित हैं :—

१. केन्द्र तथा राज्य-सरकारो द्वारा सभी शिक्षा-सस्थाओं मे नैतिक, सामाजिक और अध्यात्मिक मान्यताओं की शिक्षा की व्यवस्था की जाय। इनकी शिक्षा 'विश्वविद्यालय-शिक्षा-आयोग' द्वारा दिये गये सुझावो के अनुसार दी जाय।
२. व्यक्तिगत प्रबन्धों द्वारा सचालित शिक्षा-सस्थाओ में भी इन सुझावो के अनुसार नैतिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक मान्यताओ की शिक्षा दी जाय।
३. प्राथमिक स्तर पर इन मान्यताओ की शिक्षा रोचक कहानियो के माध्यम से दी जाय। ये कहानियाँ विश्व के विभिन्न धर्मों से भी चुनी जा सकती हैं।
४. माध्यमिक स्तर पर इन मान्यताओं के विषय मे शिक्षको तथा छात्रों द्वारा विचार-विमर्श किया जाय।
५ विद्यालय की समय-तालिका मे सप्ताह मे एक या दो समय-चक्र (Periods) नैतिक एव आध्यात्मिक मान्यताओं के शिक्षण के लिये रखे जायें।
६. विद्यालय वातावरण को सामाजिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक मान्यताओं से पूर्ण बनाया जाय। इसके लिये सभी शिक्षकों एव अधिकारियो को उत्तरदायी बनाया जाय।
७. शिक्षको द्वारा छात्रो के समक्ष आदर्श व्यवहार का नमूना प्रस्तुत किया जाय और अपने विषयो के शिक्षण मे इन मान्यताओं के विकास के लिये कार्य किया जाय।

८. विश्वविद्यालयों मे तुलनात्मक धर्म (Comparative Religion) नामक विभागों की स्थापना की जाय। इन विभागो मे इस बात की खोज की जाय कि इन मान्यताओ को प्रभावशाली ढङ्ग से किस प्रकार पढ़ाया जाय और छात्रो तथा शिक्षको के प्रयोग के लिये इनसे सम्बन्धित विशेष साहित्य तैयार किया जाय।

समीक्षा

आयोग का यह सुझाव अति श्रेष्ठ है कि शिक्षा के द्वारा छात्रों में सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक मान्यताओं का विकास किया जाय, जिससे उन्हें चरित्रवान बनाया जा सके। आज हमारी शिक्षा बिल्कुल पुस्तकीय और लौकिक है। उसमें छात्रों के चरित्र-निर्माण की ओर तनिक भी ध्यान नहीं दिया जाता है। आज हम अपने देश की प्राचीन शिक्षा-प्रणाली को बिल्कुल भूल चुके हैं। उस प्रणाली मे छात्रो के सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक स्तरों तथा मान्यताओं को अधिक से अधिक ऊँचा उठाने का प्रयास किया जाता था। आज ऊँचा उठाने की बात तो दूर रही, इन मान्यताओं की पूर्ण अवहेलना की जाती है। यही कारण है कि आज का छात्र अपने मार्ग से विचलित हो पथ-भ्रष्ट हो गया है। न तो वह इन मान्यताओ को जानता है, और न उसके शिक्षक इनके आदर्शों को अपने व्यवहार मे प्रस्तुत करते हैं। अत छात्र यदि कोई अनुचित कार्य करता है, किसी प्रकार का दुर्व्यवहार करता है, कोई अनैतिक या समाज-विरोधी कृत्य करता है, तो उस पर उद्दडता, उच्छृङ्खलता और अनुशासनहीनता का दोष लगाया जाता है। इतना ही नहीं, नैतिकता की दुहाई देकर उसे दण्ड दिया जाता है। पर ऐसा करना जघन्य अन्याय है, अक्षम्य अपराध है। जब वह सामाजिक और नैतिक मान्यताओ को जानता ही नहीं, तब उसे दण्ड का भागी क्यों बनाया जाता है?—यह बात हमारी समझ से परे है।

दण्ड सुधार नहीं करता है, बल्कि दण्ड फिर अपराध करने को चुनौती देता है। बार-बार दण्ड पाने से व्यक्ति पक्का अपराधी हो जाता है। आप किसी भी अपराधशास्त्र की पुस्तक के पन्ने उलटिये, मेकिनल (McKinnel) का एकाङ्की "The Bishop's Candlesticks" या गॉल्सवर्दी (Galsworthy) का "Justice" पढ़िये, आपको अपराध के लिये बिना सोचे-समझे दण्ड दिये जाने की अति कटु आलोचना मिलेगी। इसीलिये आज का अपराधशास्त्र दण्ड के बजाय सुधार पर बल देता है। यही उस छात्र के प्रति किया जाना चाहिये, जिसे हम अनुशासनहीन कहते हैं। उसे सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक मान्यताओ से पूर्ण वातावरण में रखिये, उसके समक्ष शिक्षकों से आदर्श व्यवहार प्रस्तुत कराइये, फिर देखिये इसी छात्र में आपको जमीन-आसमान का अन्तर मिलेगा। हम आयोग को बधाई देते हैं कि उसने सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक मान्यताओ के सम्बन्ध में ऐसे उत्कृष्ट सुझाव दिये हैं। हमें आशा है कि सरकार इन सुझावो के अनुसार कार्य करके देश के भावी नागरिकों

का चारित्रिक उत्थान करेगी और ऐसा करके अपने नाम को शिक्षा के इतिहास में अमर बनायेगी।

कुछ लोगों का विचार है कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी (Technology) के साथ मस्तिष्क और आत्मा का विकास नहीं किया जा सकता है। दूसरे शब्दों में, यदि विज्ञान द्वारा भारत का आधुनीकरण किया जा रहा है, तो सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों के विकास की बात सोचना व्यर्थ है। हम इसका उत्तर जवाहरलाल नेहरू के इन शब्दों में दे सकते हैं—"हम विज्ञान के प्रति असत्य नहीं हो सकते हैं, क्योंकि यह आज जीवन के आधारभूत तथ्यों को व्यक्त करता है। हम उन अनिवार्य सिद्धान्तों के प्रति भी असत्य नहीं हो सकते हैं, जिनका समर्थन भारत ने अतीत में युगों-युगों से किया है। इसलिये हमें अपनी पूर्ण शक्ति और उत्साह के साथ औद्योगिक प्रगति के मार्ग का अनुसरण करना चाहिये, पर साथ ही हमें यह याद रखना चाहिये कि सहिष्णुता, दया और विवेक के अभाव में सांसारिक सम्पत्ति धूल और राख में परिणत हो सकती है।"[1]

1 *India and the World* : Azad Memorial Lectures, 1959.

अध्याय ३

शिक्षा की प्रणाली, संरचना और स्तर

EDUCATIONAL SYSTEM, STRUCTURE & STANDARDS

१. विद्यालय-शिक्षा की सरचना और अवधि

Structure & Duration of School Education

आयोग का विचार है कि किसी भी शिक्षा-प्रणाली के स्तर चार बातों पर निर्भर होते हैं : पहली—शिक्षा-प्रणाली के ढांचे का विभिन्न स्तरों में विभाजन और उनका पारस्परिक सम्बन्ध। दूसरी—विभिन्न स्तरों की कुल अवधि। तीसरी—उनमें कार्य करने वालों के गुण, जैसे—शिक्षक, पाठ्य-क्रम, शिक्षण-विधियाँ, मूल्यांकन, साज-सज्जा और इमारतें। चौथी—उपलब्ध सुविधाओं का उपयोग।

ये चारों बातें एक-दूसरे से सम्बन्धित हैं, पर इनका महत्व एक-सा नहीं है। उदाहरणार्थ—शिक्षा का ढाँचा सबसे कम महत्व की बात है। शिक्षा के स्तरों की अवधि अधिक महत्त्वपूर्ण है, परन्तु यह तभी महत्त्वपूर्ण सिद्ध होती है, जब प्राप्त सुविधाओं का अधिकतम उपयोग किया जाय। विभिन्न स्तरों पर कार्य करने वाले तथा उनकी आवश्यक सामग्री और भी अधिक महत्त्वपूर्ण है। सम्भवतः सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण—उपलब्ध सुविधाओं का उपयोग है।

आयोग ने लिखा है कि उपरोक्त चारों बातों पर ध्यान देने से यह स्पष्ट हो जाता है कि स्कूल-स्तर पर दो बातों पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिये : पहली—उपलब्ध सुविधाओं के उपयोग में अधिक वृद्धि। दूसरी—विभिन्न स्तरों पर कार्य करने वालों और उनकी आवश्यक सामग्री में सुधार। आयोग ने कहा कि इन दोनों बातों में सफलता प्राप्त करने के लिये अग्रलिखित कार्य किये जाने चाहिये :—

१. शिक्षकों, शिक्षण-विधियों, विद्यालय-भवनों, मूल्यांकन, साज-सज्जा और पाठ्यक्रम के गुणात्मक पक्ष को सुधारा जाय और इनका समुचित उपयोग करने का प्रयास किया जाय।

२. उच्च माध्यमिक स्तर की अवधि में २ वर्ष की वृद्धि की जाय। इस कार्य को पाँचवीं पंचवर्षीय योजना में प्रारम्भ करके १९८५ तक पूर्ण किया जाय।

२ विद्यालय-शिक्षा की वर्तमान संरचना
Present Structure of School Education

इस समय भारत में विद्यालय-शिक्षा की संरचना में समानता नहीं है, जैसा कि नीचे दिखाया गया है :—

राज्य	निम्न प्राथमिक	उच्च प्राथमिक	माध्यमिक	पूर्व[1] विश्व-विद्यालय	उच्च माध्यमिक	योग
आंध्र	५	३	३	१	४	१२
आसाम	५	३	४	१	५	१३
बिहार, गुजरात व महाराष्ट्र	७[2]	—	४	१	—	१२
जम्मू व कश्मीर, पंजाब, राजस्थान व पश्चिमी बंगाल	५	३	२	१	३	११
केरल	४	३	३	२	—	१२
मध्य प्रदेश	५	३	—	—	३	११
मद्रास	५	३	३	१	—	१२
मैसूर	४	३	३	१	४	११
उड़ीसा	५	२	४	१	—	१२
उत्तर प्रदेश	५	३	२	—	२[3]	१२

1. Pre University Course.
२. पृथक् मिडिल स्कूल नहीं हैं।
३. उत्तर प्रदेश में इस शिक्षा के लिये इंटर कॉलेज हैं।

[नोट—जोड़ते समय माध्यमिक और पूर्व-विश्वविद्यालय या उच्च माध्यमिक को जोड़िये।]

३. विद्यालय-शिक्षा की नवीन संरचना
New Structure of School Education

आयोग ने उपरिलिखित विचारों और देश मे प्रचलित शिक्षा-प्रणाली को ध्यान मे रखकर, विद्यालय-शिक्षा की नवीन संरचना प्रस्तुत की है, जो इस प्रकार है :—

२ वर्ष की उच्चतर माध्यमिक शिक्षा
३ या २ वर्ष की निम्न माध्यमिक शिक्षा
३ या २ वर्ष की उच्च प्राथमिक शिक्षा
४ या ५ वर्ष की निम्न प्राथमिक शिक्षा
१ से ३ वर्ष की पूर्व-विद्यालय शिक्षा
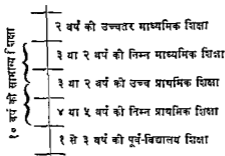
१० वर्ष की सामान्य शिक्षा

४. संरचना-सम्बन्धी सुझाव
Suggestions Regarding the Structure

शिक्षा की नवीन संरचना के बारे मे आयोग ने निम्नलिखित सुझाव दिये हैं :—

१. सामान्य शिक्षा (General Education) की अवधि १० वर्ष की रखी जाय। इसमे प्राथमिक और निम्न माध्यमिक शिक्षा को स्थान दिया जाय।
२. सामान्य शिक्षा प्रारम्भ होने से पहले १ से ३ वर्ष तक पूर्व-विद्यालय (Pre-School) या पूर्व-प्राथमिक (Pre-Primary) शिक्षा दी जाय।
३. प्राथमिक शिक्षा की अवधि ७ से ८ वर्ष की रखी जाय और इसको दो भागो मे बाँटा जाय—(i) ४ या ५ वर्ष का निम्न प्राथमिक स्तर (Lower Primary Stage), (ii) ३ या २ वर्ष का उच्च प्राथमिक स्तर (Higher Primary Stage)।
४. निम्न माध्यमिक (Lower Secondary) शिक्षा की अवधि ३ या २ वर्ष की रखी जाय।
५. निम्न माध्यमिक स्तर पर दो प्रकार की शिक्षा की व्यवस्था की जाय— (i) ३ या २ वर्ष की सामान्य शिक्षा, (ii) १ से ३ वर्ष की व्यावसायिक शिक्षा (Vocational Education)।
६. उच्चतर माध्यमिक (Higher Secondary) शिक्षा की अवधि २ वर्ष की रखी जाय।

७. उच्चतर माध्यमिक स्तर पर दो प्रकार की शिक्षा की व्यवस्था की जाय—(i) २ वर्ष की सामान्य शिक्षा, या (ii) १ से ३ वर्ष की व्यावसायिक शिक्षा।

८. कक्षा १ में प्रवेश की आयु साधारणतः ६ वर्ष से कम न रखी जाय।

९. प्रथम सार्वजनिक बाह्य परीक्षा (First Public External Examination) १० वर्ष की विद्यालय-शिक्षा के बाद ली जाय।

१०. ८ वीं कक्षा में पृथक् विद्यालयों की स्थापना करने की वर्तमान रीति को समाप्त किया जाय।

११. १०वीं कक्षा तक किसी विषय में विशिष्टीकरण (Specialization) की आज्ञा न दी जाय।

१२. माध्यमिक स्कूल केवल दो प्रकार के रखे जायें—(i) हाई-स्कूल—जिनमें शिक्षा की अवधि १० वर्ष की हो, और (ii) हायर सेकेंडरी स्कूल—जिनमें शिक्षा की अवधि ११ या १२ वर्ष की हो।

१३. प्रत्येक सेकेंडरी स्कूल को हायर सेकेंडरी स्कूल बनाने का प्रयास न किया जाय। केवल बड़े और अच्छे स्कूलों को ही हायर सेकेंडरी बनाया जाय, पर इनकी संख्या ऐसे कुल स्कूलों की ¼ से अधिक न हो।

१४. जो विद्यालय हायर सेकेंडरी कहलाने के अधिकारी नहीं हैं, उनको हाई-स्कूल बना दिया जाय।

१५. कक्षा ११ से प्रारम्भ होने वाले नये हायर सेकेंडरी स्कूलों की स्थापना की जाय। इनमें कक्षा ११ और १२ में विभिन्न विषयों की विशिष्ट शिक्षा दी जाय।

समीक्षा

आयोग ने विद्यालय-शिक्षा और उसकी संरचना के बारे में कुछ विचार व्यक्त किये हैं। इनमें केवल दो विचार, कि माध्यमिक स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था की जाय, और केवल एक सार्वजनिक परीक्षा ली जाय—अच्छे हैं। शेष सभी सुझाव निरर्थक और निष्प्रयोजन हैं। उनमें किसी भी प्रकार की उपयुक्तता और उपादेयता नहीं है। उनमें स्पष्टता की झलक भी नहीं मिलती है। उनको इतना लचीला बना दिया गया है कि विद्यालय-प्रबन्धक कुछ भी कर सकते हैं। उनमें 'या'-'या' का प्रयोग करके प्रबन्धकों को पूर्ण स्वतन्त्रता दे दी गई है। उदाहरणार्थ—निम्न प्राथमिक शिक्षा ४ या ५ वर्ष की, उच्च प्राथमिक शिक्षा ३ या २ वर्ष की, और निम्न माध्यमिक शिक्षा ३ या २ वर्ष की हो सकती है। इसका परिणाम क्या होगा ? शिक्षा संरचना की बहुरूपता। ऐसा तो अब भी है। फिर इन सुझावों से क्या लाभ होगा ? सम्भवतः यह कि विद्यालयों की बहुरङ्गी दशा के रूप का परिवर्तन हो जायगा।

इतना ही सब कुछ नहीं है। आयोग ने जान-बूझकर शिक्षा-संस्थाओं का पुन. नामकरण करने का प्रयास किया है। माध्यमिक विद्यालय दो प्रकार के होंगे:— हाई स्कूल और हायर सेकेंडरी स्कूल। आयोग को शायद इन्टरमीडिएट कॉलिजों के नाम से कुछ घृणा थी। इसीलिए उसने कहा है कि हायर सेकेंडरी स्कूल हो। इसका अर्थ यह है कि इन्टरमीडियट कॉलिज न हों। बात तो ज्यों की त्यों ही रही। इन कॉलिजों में भी दो वर्ष का पाठ्य-क्रम है और हायर सेकेंडरी स्कूलों में भी इतनी ही अवधि का पाठ्य-क्रम हो सकता है। फिर इस नाम-परिवर्तन की क्या आवश्यकता थी, यह समझ में नहीं आता है।

विभिन्न राज्यों की सीमाओं में बँधा हुआ हमारा देश एक है, अखण्ड है। अत. सम्पूर्ण देश के लिये शिक्षा की एक संरचना होनी चाहिये। हमें आशा थी कि आयोग अपने सुझावों द्वारा सब राज्यों मे समान शिक्षा-संरचना पर बल देगा। पर हमें यह देखकर निराशा होती है कि उसने इस ओर एक भी कदम नहीं उठाया। शिक्षा की संरचना विकृत की विकृत रही। उसमें अनुरूपता न आ सकी।

आयोग ने पूर्व-प्राथमिक शिक्षा को बिल्कुल अलग कर दिया है। उसने इसको 'पूर्व-विद्यालय-शिक्षा' कहकर सामान्य शिक्षा का अङ्ग नहीं बनने दिया है। ऐसा शायद आयोग ने इसलिये किया है कि राज्य-सरकारें शिक्षा पर किये जाने वाले एक बड़े व्यय-भार से मुक्त हो जायें। ऐसा करते समय आयोग यह भूल गया कि 'पूर्व-प्राथमिक शिक्षा' ही वह शिक्षा है, जिसको सुसगठित और सुव्यवस्थित करके ही शिक्षा के भवन का सुन्दर निर्माण किया जा सकता है।

५. उच्च-शिक्षा की नवीन संरचना
New Structure of Higher Education

आयोग के अनुसार उच्च शिक्षा की सरचना इस प्रकार होगी .—

२ या ३ वर्ष का स्नातकोत्तर कोर्स

२ या ३ वर्ष का द्वितीय डिग्री कोर्स

३ वर्ष का प्रथम डिग्री कोर्स

६. संरचना सम्बन्धी सुझाव
Suggestions Regarding the Structure

आयोग ने उच्च शिक्षा की नवीन सरचना के बारे मे अधोलिखित सुझाव दिये हैं:—

१. उच्चतर माध्यमिक शिक्षा के बाद प्रथम डिग्री कोर्स की अवधि ३ वर्ष की रखी जाय।
२. द्वितीय डिग्री कोर्स की अवधि २ या ३ वर्ष की रखी जाय।

३. कुछ विश्वविद्यालयों में 'ग्रेजुएट स्कूलों' (Graduate Schools) की स्थापना की जाय, जिनमें कुछ विषयों में ३ वर्ष के स्नातकोत्तर (Post Graduate) कोर्स की व्यवस्था की जाय।
४. प्रथम डिग्री कोर्स के लिये पहले वर्ष के बाद कुछ चुनी हुई उच्च-शिक्षा संस्थाओं में कुछ चुने विषयों की विशिष्ट शिक्षा की व्यवस्था की जाय।
५. जो छात्र लम्बे अर्थात् ३ वर्ष के कोर्स को लें, उन्हें छात्रवृत्तियाँ आदि देकर प्रोत्साहित किया जाय।
६. उत्तर प्रदेश में त्रि-वर्षीय डिग्री कोर्स का प्रारम्भ कुछ चुने हुए विषयों और चुने हुए विश्वविद्यालयों में प्रारम्भ किया जाय। दूसरे विश्वविद्यालयों और उनसे सम्बद्ध कॉलिजों में १५ से २० वर्ष के अन्दर त्रि-वर्षीय पाठ्य-क्रम प्रारम्भ कर दिया जाय।

समीक्षा

आयोग के उच्च शिक्षा-संरचना से सम्बन्धित सुझाव बहुत ही निराशापूर्ण हैं। छात्र १० वर्ष की सामान्य शिक्षा प्राप्त करेंगे। यह ऐसी शिक्षा होगी, जिसमें किसी प्रकार का विभिन्नीकरण (Diversification) नहीं होगा। उस शिक्षा को प्राप्त करने के बाद वे २ वर्ष उच्चतर माध्यमिक शिक्षा ग्रहण करेंगे और उसके बाद उच्च शिक्षा के लिये किसी कॉलिज या विश्वविद्यालय में प्रवेश करेंगे, जहाँ उनको पहली डिग्री प्राप्त करने के लिये ३ वर्ष तक अध्ययन करना पड़ेगा। यहाँ तक तो बात समझ में आती है। पर आयोग ने यह सुझाव दिया है कि माध्यमिक स्कूल २ प्रकार के हों—हाई स्कूल जिनमें शिक्षा की अवधि १० वर्ष की हो, और हायर सेकेंडरी जिनमें शिक्षा की अवधि ११ या १२ वर्ष की हो। इससे बहुत बड़ा संकट उपस्थित हो जायगा। अधिकांश छात्र १० वर्ष की हाई स्कूल की शिक्षा प्राप्त करेंगे। यदि ऐसे छात्र उच्च शिक्षा ग्रहण करना चाहेंगे, तो क्या होगा ? क्या उनको हायर सेकेंडरी स्कूलों में पढ़ना पड़ेगा ? यदि हाँ, तो कौन से हायर सेकेंडरी स्कूलों में—११ वर्ष की शिक्षा देने वाले या १२ वर्ष की ? यदि वे ११ वर्ष वालों में पढ़ेंगे तो शिक्षा का स्तर निश्चय रूप से गिर जायगा। तो क्या उनको १२ वर्ष की शिक्षा वाले हायर सेकेंडरी स्कूलों में पढ़ने के लिये बाध्य किया जायगा ? यदि हाँ, तो क्यों ? ऐसी स्थिति में ११ वर्ष की शिक्षा वाले हायर सेकेंडरी स्कूल स्थापित ही नहीं होंगे। फिर उनका सुझाव ही क्यों दिया गया ? इसका उत्तर तो केवल आयोग ही दे सकता है।

हर्ष का विषय है कि केन्द्रीय शिक्षा परामर्शदाता बोर्ड (Central Education Advisory Board) ने भारत के शिक्षामंत्री त्रिगुण सेन को शिक्षा की राष्ट्रीय नीति पर एक आवेदन तैयार करने का कार्य सौंपा है।[1] डा० सेन ने यह निश्चय किया है

1. The Hindustan Times, dated August 23, 1967.

कि विद्यालय की प्रथम डिग्री १५ वर्ष की शिक्षा के बाद प्राप्त होगी। यदि डा० सेन का यह विचार कार्य रूप में परिणत कर दिया गया, तो भारतीय शिक्षा की संरचना मे विविधता के स्थान मे एक रूपता आ जायगी।

७. सुविधाओं का उपयोग
Utilization of Facilities

आयोग ने उपलब्ध सुविधाओं के अधिकतम उपयोग के लिये निम्नलिखित सुझाव दिये हैं :—

१. शिक्षा-पुनर्निर्माण की योजनाओं मे प्राप्त सुविधाओं के उपयोग के कार्यक्रमों पर बल दिया जाय।
२ एक वर्ष में शिक्षा दिये जाने वाले दिनों की सख्या मे वृद्धि कर दी जाय। स्कूलों मे एक वर्ष मे लगभग ३६ सप्ताह और कालिजो तथा पूर्व-प्राथमिक स्कूलो मे ३६ सप्ताह शिक्षा दी जाय।
३. 'शिक्षा-मन्त्रालय' और 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' के द्वारा राज्य-सरकारों और विश्वविद्यालयो के परामर्श से एक कलेंडर (Calendar) तैयार किया जाय, जिसके अनुसार सब शिक्षा-सस्थाओं मे कार्य किया जाय।
४ छुट्टियो की संख्या कम करके एक वर्ष मे १० कर दी जाय।
५. परीक्षाओ और अन्य कारणो से शिक्षा के दिनो मे स्कूलों मे २१ दिन और कॉलेजों में २७ दिन से अधिक की हानि न की जाय।
६. अध्ययन, समाज-सेवा-शिविरों, उत्पादन-अनुभव, साक्षरता-आन्दोलन आदि के लिये लम्बी छुट्टियों का अधिकाधिक प्रयोग किया जाय।
७ विद्यालय-स्तर पर प्रति दिन कार्य करने की अवधि बढाई जाय।
८. विश्वविद्यालय-स्तर पर स्व-अध्ययन (Self-Study) के लिये उपयुक्त सुविधायें दी जायें।
९. पुस्तकालयों, प्रयोगशालाओ, वर्कशापों (Workshops) आदि के अधिकतम उपयोग के लिये महत्त्वपूर्ण कदम उठाये जायें।

समीक्षा

भारत निर्धन है। अतः उसके अधिकांश स्कूलो, कॉलिजो और विश्वविद्यालयो मे शिक्षण और अध्ययन की पर्याप्त सुविधायें नहीं हैं। पर ऐसी शिक्षा-सस्थायें भी हैं, जिनमे किसी प्रकार की सुविधा का अभाव नही है। यदि अभाव है तो केवल इस बात का कि उनका पूर्ण और वांछित उपयोग नहीं किया जाता है। इसके लिये उत्तरदायी है—शिक्षक। उनको इस बात मे न तो कोई रुचि है और न प्रयोजन कि उपलब्ध सुविधाओं का अधिकतम उपयोग किया जाय। जब तक शिक्षको में यह भावना जाग्रत नहो की जायगी, तब तक आयोग के सभी सुझाव व्यर्थ रहेंगे। आयोग

ने यह सोचकर बडी भूल की है कि प्रति-दिन शिक्षा का समय बढ़ाकर और प्रति वर्ष पढाई के दिनो की सख्या मे वृद्धि करके उपलब्ध सुविधाओं का अधिक उपयोग होगा। छुट्टियाँ जितनी छात्रों को प्रिय हैं, उतनी ही शिक्षकों को। अतः शिक्षण की अवधि और दिनो को बढाकर आयोग ने छात्रों और उनसे अधिक शिक्षको की शत्रुता मोल ले ली है। उनका यह दृष्टिकोण उचित है या अनुचित—इससे हमे कोई सरोकार नही। हम तो केवल इतना जानते हैं कि उपलब्ध सुविधाओं का उपयोग तब तक नहीं होगा, जब तक शिक्षकों को अपने व्यवसाय से संतोष नहीं होगा। 'आप घोडे को पानी के पास ले जा सकते हैं, पर उसे पानी पीने के लिये बाध्य नही कर सकते हैं।' (You can take the horse to the water, but you cannot make it drink.)

सुविधाओ के उपयोग का प्रत्यक्ष सम्बन्ध शिक्षकों के संतोष से तो है ही, पर उनका सम्बन्ध शिक्षा-संस्थाओं के वातावरण मे भी है। उनके परम्परागत, रूढ़िबद्ध वातावरण को बदलना होगा, क्योंकि तभी सुविधाओं का उपयोग किया जा सकेगा। पर इस वातावरण में निकट भविष्य मे तो कोई परिवर्तन होता नजर नहीं आता है। अतः उपलब्ध सुविधाओं के उपयोग में वृद्धि होने की आशा करना केवल कोरी कल्पना है।

८. स्तरों का उन्नयन
Raising of Standards

आयोग ने शिक्षा के स्तरों को ऊँचा उठाने के लिये निम्नलिखित सुझाव दिये हैं :—

१. शिक्षा के सभी स्तरों को ऊँचा उठाने के लिये निरन्तर प्रयास किया जाय।
२. १० वर्ष की विद्यालीय-शिक्षा को गुणात्मक रूप से उन्नत बनाया जाय, जिससे इस स्तर पर होने वाले *'अपव्यय' (Wastage)* को कम से कम किया जा सके।
३. १० वर्ष में कक्षा १० के स्तर को उस स्थिति पर पहुँचा दिया जाय, जिस पर आजकल हायर सेकेंडरी का स्तर है।
४. विश्वविद्यालय उपाधियों के स्तरों को उन्नत करने के लिये प्रयत्न किये जायें। इसके लिये इन उपाधियों के कार्य में अधिक उन्नत विषय-वस्तु को स्थान दिया जाय।
५. शिक्षा-स्तरों को उन्नत बनाने के लिये शिक्षा के विभिन्न अंगों में सर्वांगपूर्ण स्थापित किया जाय।
६. विश्वविद्यालयों तथा कॉलिजों के द्वारा विभिन्न विधियों का प्रयोग करके माध्यमिक विद्यालयों की कुशलता में सुधार किया जाय।

७ 'विद्यालय-संकुलो' (School Complexes) का निर्माण किया जाय। हर सकुल मे एक माध्यमिक स्कूल और उसके आस-पास के सब प्राथमिक स्कूल रखे जायें। ऐसे सकुल मे होने वाले सब स्कूलों द्वारा सामूहिक रूप मे स्तरों मे सुधार करने के लिये प्रयास किया जाय।

समीक्षा

शिक्षा के स्तरो में सुधार करने के लिये आयोग ने जो सुझाव दिये हैं, वे काल्पनिक और वास्तविकता से दूर हैं। उदाहरणार्थ—आयोग ने कहा कि "शिक्षा के स्तरों को ऊँचा उठाने का प्रयास किया जाय।" पर किसके द्वारा और किस तरह? यह प्रश्न आयोग के प्राय हर सुझाव के बारे मे पूछा जा सकता है। आयोग को कदाचित् यह अनुभव नहीं था कि उसके केवल लिख देने से ही शिक्षा के स्तरों मे सुधार नही हो जायगा। ऐसा करने के लिये ठोस कार्य-क्रम बनाने पड़ेंगे, उनके अनुसार कार्य करना पडेगा और अनवरत रूप मे क्रियाशील होना पडेगा। इनमें से पहली बात तो कुछ सम्भव सी जान पडती है, पर शेष दो बातें बिल्कुल असम्भव हैं। कारण यह है कि हमको कार्य करने और क्रियाशील होने की आदत नहीं है।

स्तरो को ऊँचा उठाने का केवल एक उपाय है। वह है—सरकार की इस कार्य में विशेष रुचि और संलग्नता। यदि सरकार ऐसा कर सकती है, तब तो आयोग के सुझाव सार्थक हो जायेंगे, अन्यथा वे लिखे के लिखे रह जायेंगे।

उत्तर-प्रदेश मे विश्वविद्यालय-शिक्षा के स्तर का उन्नयन करने के लिये शिक्षा-मन्त्री राम प्रकाश का यह सुझाव है कि विश्वविद्यालयो मे केवल प्रतिभाशाली छात्रों को ही प्रवेश दिया जाय।[1] सुझाव तो अति प्रशसनीय है। पर जिस स्थिति मे से होकर आज यह राज्य गुजर रहा है, उसमे क्या ऐसा करना सम्भव होगा? हमारा तो यह विचार है कि बडे और धनी व्यक्तियो के सभी बालक प्रतिभाशाली माने जायेंगे और उनको विश्वविद्यालयो मे प्रवेश मिल जायगा। वचित तो वे छात्र रह जायेंगे, जिनको विधाता ने निम्न स्तर के परिवारों में जन्म दिया है और जिनके पास कोई सिफ़ारिश नहीं है।

1. The Hindustan Times, dated August 27, 1967.

अध्याय ४

शिक्षक की स्थिति

TEACHER STATUS

आयोग ने अनुभव किया कि शिक्षण-व्यवसाय की ओर प्रतिभाशाली व्यक्तियों को आकर्षित करने के लिये शिक्षकों की आर्थिक, सामाजिक और व्यावसायिक स्थिति को उन्नत बनाना बहुत आवश्यक है, जिससे वे रुचि, धैर्य और उत्साह से अपने कार्य को कर सकें। इस बात को ध्यान में रखकर आयोग ने शिक्षकों की स्थिति में सुधार करने के विचार से निम्नांकित सुझाव दिये हैं :—

१. वेतन

Remuneration

१. भारत-सरकार द्वारा विद्यालय-शिक्षकों का न्यूनतम वेतन-क्रम (Scales of Pay) निर्धारित किया जाय।

२. भारत-सरकार द्वारा राज्य-सरकारों और संघीय क्षेत्रों को अपनी परिस्थितियों के अनुसार निर्धारित वेतन-क्रम या उससे अधिक देने में सहायता दी जाय।

३. सभी विद्यालय-शिक्षकों के वेतन-क्रम में समानता के सिद्धान्त का पालन किया जाय, चाहे वे सरकारी स्कूलों में कार्य रहे हों या ग़ैर-सरकारी स्कूलों में।

४. वाञ्छनीय तो यही है कि वेतन-क्रम में समानता के सिद्धान्त को तत्काल लागू किया जाय। पर यदि ऐसा करना असम्भव है, तो इस सिद्धान्त को ५ वर्ष में लागू कर दिया जाय।

५. विश्वविद्यालयों और उनसे सम्बद्ध कॉलिजों के शिक्षकों के वेतन-क्रम में पर्याप्त वृद्धि की जाय।

२. शिक्षकों के वेतन-क्रम
Scales of Pay of Teachers

आयोग ने शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर अध्यापकों के लिये निम्नांकित वेतन-क्रमों का सुझाव दिया :—

शिक्षक	वेतन	
१. माध्यमिक कोर्स पास प्राथमिक स्कूलों के अप्रशिक्षित शिक्षक	न्यूनतम वेतन	१०० रु०
२. उपरोक्त शिक्षकों का ५ वर्ष की सेवा के बाद	न्यूनतम वेतन	१२५ रु०
३. माध्यमिक कोर्स और २ वर्ष का प्रशिक्षण प्राप्त प्राथमिक स्कूलों के शिक्षक	न्यूनतम वेतन	१२५ रु०
४. उपरोक्त शिक्षकों का ५ वर्ष की सेवा के बाद	न्यूनतम वेतन	१५० रु०
५. सेकेंडरी कोर्स और २ वर्ष का प्रशिक्षण प्राप्त शिक्षक	न्यूनतम वेतन	१५० रु०
६. उपरोक्त शिक्षकों का २० वर्ष बाद	अधिकतम वेतन	२५० रु०
७. श्रेणी (६) में से १५% चुने जाने वाले शिक्षक		२५०-३०० रु०
८. १ वर्ष का प्रशिक्षण प्राप्त ग्रेजुएट	न्यूनतम वेतन	२२० रु०
९. उपरोक्त शिक्षकों का २० वर्ष बाद		४०० रु०
१०. श्रेणी (९) में से १५% चुने जाने वाले शिक्षक		४००-५०० रु०
११. अप्रशिक्षित ग्रेजुएट जब तक वे प्रशिक्षण प्राप्त न कर लें	न्यूनतम वेतन	२२० रु०
१२. स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त माध्यमिक स्कूलों में कार्य करने वाले शिक्षक		३००-६०० रु०
१३. प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद उपरोक्त शिक्षक	जितना वेतन वे पा रहे हैं, उसमें एक वर्ष की वेतन-वृद्धि।	
१४ माध्यमिक स्कूलों के प्रधान	इनका वेतन इनकी योग्यताओं और विद्यालय के आकार पर निर्भर होगा। इनको सम्बद्ध कॉलेजों के लिये निर्धारित कोई भी वेतन-क्रम दिया जा सकता है।	

१५. सम्बद्ध कालेजों के शिक्षक	(i) लेक्चरार, जूनियर स्केल ३००-२५-६०० रु०
	(ii) लेक्चरार, सीनियर स्केल ४००-३०-६४०-४०-८०० रु०
	(iii) सीनियर लेक्चरार या रीडर ७००-४०-११०० रु०
	(iv) प्रिंसिपल I ७००-४०-११०० रु०
	II ८००-५०-१५०० रु०
	III १०००-५०-१५०० रु०
१६. विश्वविद्यालयों के शिक्षक	(i) लेक्चरार ४००-४०-८००-५०-९५० रु०
	(ii) रीडर ७००-५०-१२५० रु०
	(iii) प्रोफ़ेसर ११००-५०-१३००-६०-१६०० रु०

समीक्षा

आयोग ने शिक्षकों के वेतन के सम्बन्ध में जो सुझाव दिये हैं, उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की गई है। श्री चागला (Chagla) ने इन सुझावों को 'शिक्षकों का महाधिकार पत्र' (Magna Charta) बताया है। शिक्षकों के वेतन में वृद्धि की जानी आवश्यक है, क्योंकि ऐसा किये बिना वे असन्तुष्ट रहेंगे और शिक्षा के पुनर्निर्माण की योजना, चाहे वह कितनी भी अच्छी क्यों न हो, सफल न हो सकेगी। इसके अतिरिक्त, शिक्षण-व्यवसाय के प्रति योग्य व्यक्तियों को तभी आकर्षित किया जा सकेगा, जब वेतन की दरें आकर्षक होंगी। इस उद्देश्य में सफलता प्राप्त करने के लिये आयोग ने शिक्षकों के लिये पहले से अधिक अच्छे वेतन-क्रमों का सुझाव दिया है।

आयोग द्वारा प्रस्तावित शिक्षकों के वेतन-क्रम का सामान्य रूप से स्वागत नहीं किया गया है। स्कूलों के शिक्षक तो इनसे प्रसन्न हैं, पर विश्वविद्यालयों के शिक्षकों के बारे में यह बात नहीं कही जा सकती है। 'विश्वविद्यालय-शिक्षक-संघ' के अध्यक्ष डा० आर० सी० मजूमदार (R. C. Majumdar) का कथन है—"विश्वविद्यालय-शिक्षकों के वेतन के बारे में जो सिफ़ारिशें हैं, उनसे उनको लाभ नहीं होगा। दिल्ली विश्वविद्यालय उनको यही वेतन दे रहा है।"

माध्यमिक स्कूलों के प्रधानाचार्यों को यह शिकायत है कि उनके वेतन को आयोग ने स्पष्ट नहीं किया है। 'हेडमास्टर्स एसोसियेशन' के अध्यक्ष श्री धरणी मोहन मुकर्जी (Dharni Mohan Mukherjee) का कथन है—"इस बात का कोई कारण समझ में नहीं आता है कि शिक्षा की नवीन योजना में आयोग ने स्कूलों के प्रधानाध्यापकों की स्थिति को अनिश्चित क्यों छोड़ दिया है। जब सब प्रकार के

शिक्षकों के बारे मे इतना लिखा गया, तब प्रधानाध्यापकों के बारे मे कुछ भी क्यों नहीं लिखा गया।"

आयोग ने सम्बद्ध कॉलेजो के लिये जूनियर लेक्चररों का सुझाव देकर कॉलेजों के प्रबन्धकर्त्ताओं का हित और नवयुवक शिक्षको का अहित किया है। कारण यह है कि १९६७-६८ के लिये इस प्रकार के लेक्चररों की नियुक्ति बहुत बड़ी संख्या में की गई है। इस बात से असंतुष्ट होकर विश्वविद्यालय-शिक्षकों ने अपनी इस माँग को बार-बार दोहराया है कि जूनियर लेक्चरर का पद समाप्त कर दिया जाय।[1]

सारांश मे, आयोग ने शिक्षको के जिन वेतन-क्रमों का सुझाव दिया है, उनको प्रशंसनीय माना गया है। अब प्रश्न केवल यह रह जाता है कि सरकार और शिक्षा-संस्थाओ की प्रबन्धकारिणी समितियों के द्वारा उनको कार्यान्वित किया जाता है या नही। उस्मानिया विश्वविद्यालय के उप-कुलपति डा० डी० एस० रेड्डी (D. S. Reddi) का मत है कि ऐसा नहीं किया जा सकेगा, क्योंकि किसी भी राज्य के पास शिक्षकों को अधिक वेतन देने के लिये धन नहीं है।

३. स्थिति के उन्नयन के लिये अन्य सिफारिशें
Other Recommendations for Raising Status

वेतन-दरों के अलावा आयोग ने निम्नांकित शीर्षकों के अन्तर्गत अध्यापकों की स्थिति मे सुधार करने के लिए कुछ और सिफारशें की हैं.

(अ) विद्यालय-शिक्षकों के वेतन-क्रमों का कार्यान्वन
Implementaion of Pay-Scales for School Teachers

आयोग ने स्कूलों मे कार्य करने वाले शिक्षकों के वेतन-क्रमो को कार्यान्वित करने के लिये निम्नलिखित सुझाव दिये हैं :—

१. विद्यालय-शिक्षको के वेतन-दरों को सुधारने के लिये जो सुझाव दिये गये हैं, उन्हें तत्काल ही लागू किया जाना चाहिये। इसके लिये केन्द्रीय सरकार द्वारा राज्य-सरकारों को उदार आर्थिक सहायता दी जानी चाहिये।
२. प्राथमिक स्तर पर ऐसा कोई भी शिक्षक नहीं होना चाहिये, जिसने माध्यमिक स्कूल का कोर्स और दो वर्ष का प्रशिक्षण प्राप्त न किया हो।
३. निम्नतर तथा उच्चतर प्राथमिक विद्यालयों के प्रधानाध्यापक प्रशिक्षित स्नातक होने चाहिये। इनका वेतन माध्यमिक स्कूलों के ट्रेण्ड ग्रेजुएट शिक्षकों के समान होना चाहिये।

1. The Hindustan Times, July 31, 1967.

४. जिन शिक्षकों ने बी० ए०, बी० एस-सी० या एम० ए०, एम० एस-सी० प्रथम और द्वितीय श्रेणी में पास किया हो या एम० एड० की उपाधि प्राप्त की हो, उनको अग्रिम वेतन-वृद्धि (Advance Increments) दी जानी चाहिये।

५. माध्यमिक विद्यालयों के सभी शिक्षक प्रशिक्षण प्राप्त होने चाहिये।

६. 'माध्यमिक शिक्षा-परिषदों' (Boards of School Education) तथा राज्यों के शिक्षा-विभागों को शिक्षकों की योग्यताएँ निर्धारित करनी चाहिये और उनके चुनाव के लिये एक उपयुक्त चुनाव विधि बनानी चाहिये। यह विधि सरकारी और गैर-सरकारी—दोनों प्रकार के विद्यालयों के लिये एक-सी होनी चाहिये।

७. प्रत्येक व्यक्तिगत विद्यालय की प्रबन्ध-समिति में शिक्षा-विभाग के प्रतिनिधि होने चाहिये।

८. यदि कोई प्रबन्ध-समिति किसी शिक्षक की नियुक्ति चुनाव-विधि के विरुद्ध करे, तो उस शिक्षक के वेतन के लिये कोई अनुदान नहीं दिया जाना चाहिये।

९. सभी शिक्षकों की वेतन-दरें प्रत्येक पाँच वर्ष बाद दोहराई जानी चाहिये।

१०. सरकारी कर्मचारियों के बराबर शिक्षकों को भी मँहगाई भत्ता दिया जाना चाहिये।

समीक्षा

आयोग ने अपने सुझावों में यह स्पष्ट कर दिया है कि विद्यालयों के शिक्षकों के लिये उसके द्वारा प्रस्तावित वेतन-दरों को किस प्रकार कार्यान्वित किया जाय। उसने सिफारिश की है कि केन्द्रीय सरकार राज्य-सरकारों को उदार आर्थिक सहायता दे। यह सहायता दी भी जानी चाहिये, क्योंकि यद्यपि शिक्षा का उत्तरदायित्व राज्य-सरकारों पर है, फिर भी केन्द्रीय सरकार अपने को इस उत्तरदायित्व से दूर नहीं रख सकती है। आयोग ने स्नातकोत्तर शिक्षकों को अधिक वेतन देने का सुझाव देकर ऐसे व्यक्तियों को शिक्षण-व्यवसाय के प्रति आकर्षित करने के लिये कदम उठाया है।

(ब) विश्वविद्यालय-स्तर पर वेतन-क्रमों का कार्यान्वन

Implementation of Pay-Scales at the University Stage

विश्वविद्यालयों और उनसे सम्बद्ध कालेजों में कार्य करने वाले शिक्षकों के वेतन-दरों को कार्यान्वित करने के लिये आयोग ने निम्नांकित सुझाव दिये हैं :—

१. आयोग ने उच्च शिक्षा से सम्बन्धित शिक्षकों के लिये, जिन वेतन-दरों का प्रस्ताव किया है, उनको सरकार ने स्वीकार कर लिया है। अतः उनको लागू करने के लिये केन्द्रीय सरकार द्वारा सम्पूर्ण व्यय का ८० प्रतिशत भार और राज्य-सरकारों द्वारा २० प्रतिशत भार वहन किया जाना चाहिये।
२. कुछ दशाओं में गैर-सरकारी कॉलेजों का सम्पूर्ण व्यय-भार भी केन्द्रीय सरकार द्वारा वहन किया जाना चाहिये।
३. वेतन-दरों को लागू करने के साथ-साथ शिक्षकों की योग्यताओं तथा उनकी नियुक्ति की विधियों में सुधार किया जाना चाहिये। यह कार्य विश्वविद्यालयों के लिये आदर्श अधिनियम बनाने के लिये नियुक्त की गई समिति की सिफारिशों के अनुसार किया जाना चाहिये।
४. सम्बद्ध कॉलेजों के शिक्षकों की योग्यताएँ विश्वविद्यालय शिक्षकों के समान होनी चाहिये। इसके अतिरिक्त उनकी नियुक्ति भी समान विधि द्वारा की जानी चाहिये।
५. उत्तम शिक्षा-संस्थाओं को शिक्षकों के चुनाव में अधिक स्वतंत्रता दी जानी चाहिये। पर जिन संस्थाओं का प्रबन्ध असंतोषजनक है, उन पर कठोर नियंत्रण रखा जाना चाहिये।

समीक्षा

हर्ष की बात है कि आयोग द्वारा प्रस्तावित वेतन की दरों को सरकार ने स्वीकार कर लिया है, और उच्च शिक्षा की गुणात्मक उन्नति के लिये ऐसा किया जाना आवश्यक भी था। देश के ५ राज्यों में ये वेतन-दरें लागू भी कर दी गई हैं। हमें आशा है कि शेष राज्य इनका अनुसरण करके उच्च शिक्षा के प्रति अपने दायित्व को पूर्ण करेंगे।

(स) पदोन्नति की सम्भावनाएँ
Prospects of Promotion

आयोग ने शिक्षकों की स्थिति में सुधार करने के लिये इस बात पर बल दिया है कि शिक्षा के समस्त स्तरों पर अध्यापकों की निम्न पद से उच्च पद पर उन्नति की जाय। इस विषय में उसने निम्नांकित सुझाव दिये हैं :—

१. प्राथमिक विद्यालयों के योग्य एवं प्रशिक्षित शिक्षकों को प्रधानाध्यापक या विद्यालय-निरीक्षक के पदों के लिये चुना जाना चाहिये।
२. माध्यमिक-विद्यालयों के उन ट्रेन्ड ग्रेजुएट शिक्षकों को, जिन्होंने असाधारण कार्य किया हो, स्नातकोत्तर योग्यता रखने वाले शिक्षकों के वेतन-दर दिये जाने चाहिये।

३. माध्यमिक विद्यालयों के उन शिक्षकों को, जो आवश्यक अभिरुचि एवं क्षमता का प्रदर्शन करें, विश्वविद्यालयों और कॉलेजों के अध्यापक बनाये जाने चाहिये।

४. *'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग'* को माध्यमिक विद्यालयों के प्रतिभाशाली शिक्षकों को अनुसन्धान कार्य करने के लिये अनुदान देना चाहिये।

५. जो शिक्षक असाधारण कार्य कर रहे हैं, उनकी अग्रिम (Advance) वेतन-वृद्धि की जानी चाहिये।

६. उन लेक्चररों या रीडरों को, जिन्होंने असाधारण कार्य किया है, उच्च-स्तर के पदों के अभाव में भी इस प्रकार के पदों पर अस्थायी रूप से नियुक्त किया जाना चाहिये।

७. स्नातकोत्तर कार्य के विभागों में प्रोफेसर स्तर के पदों की संख्या को आवश्यकताओं के अनुसार निश्चित किया जाना चाहिये।

८. असाधारण तथा प्रतिभाशाली व्यक्तियों को 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' के परामर्श से १६००-१८०० रु० के विशेष वेतन-क्रम से भी अधिक दिया जाना चाहिये।

समीक्षा

आजकल प्रायः सभी शिक्षा-संस्थाओं में एक दोषपूर्ण प्रणाली का प्रचलन है। वह यह कि यदि कोई उच्च पद रिक्त हो जाता है, तो निम्न पद पर कार्य करने वाले शिक्षक की पदोन्नति नहीं की जाती है। फलस्वरूप वह रिक्त पद को प्राप्त करने से वंचित रह जाता है। साधारणतः रिक्त पद पर किसी नये अध्यापक की, जिसका प्रबन्धकारिणी समिति के किसी सदस्य पर प्रभाव होता है, नियुक्ति हो जाती है। इससे वंचित रह जाने वाले शिक्षक को भारी निराशा होती है। फलतः या तो वह शिक्षा-संस्था को छोड़ने या कम से कम कार्य करने का निश्चय करता है। इसका परिणाम होता है—शिक्षण-स्तर का पतन। इस स्थिति में सुधार करने के लिये आयोग ने यह सुझाव दिया है कि यदि किसी शिक्षा-संस्था में कोई उच्च पद रिक्त होता है और यदि उस पर आसीन होने के लिये शिक्षा-संस्था के किसी अध्यापक में आवश्यक योग्यतायें हैं, तो यह पद उसको दिया जाय। इससे चार लाभ होंगे। पहला—शिक्षा-संस्था के अध्यापकों में संतोष रहेगा, जिसके फलस्वरूप वे तन-मन से शिक्षण का कार्य करेंगे। दूसरा—पदोन्नति की आशा से प्रेरित होकर वे कभी भी अपने कार्य की अवहेलना नहीं करेंगे, और न उसे अनमने मन से करेंगे। तीसरा—पदोन्नति की सम्भावना से प्रेरित होकर अधिक योग्यता वाले शिक्षक कुछ समय के लिये निम्न पदों को स्वीकार कर लेंगे। चौथा—[illegible] से शिक्षकों की आर्थिक और सामाजिक स्थिति ऊँची उठेगी।

(द) सेवा-निवृत्ति-लाभ
Retirement Benefits

आयोग ने वृद्धावस्था पर पहुँचने के कारण नौकरी समाप्त करने वाले अध्यापकों के विषय में निम्नलिखित सुझाव दिये हैं :—

१. सेवा-निवृत्ति की पद्धति को समानता के सिद्धान्त पर पुनर्संगठित किया जाना चाहिये, अर्थात् सब स्तरों के शिक्षकों को सेवा-निवृत्ति के समान लाभ मिलने चाहिये।
२. राज्य-सरकारों, स्थानीय अधिकारियों तथा व्यक्तिगत प्रबन्धकों के अधीन कार्य करने वाले समस्त शिक्षकों को वे सभी निवृत्ति-लाभ प्रदान किये जाने चाहिये, जो भारत-सरकार के कर्मचारियों को प्राप्त हैं।
३. सभी शिक्षकों के लिये 'त्रिगुणी लाभ-योजना' (Triple Benefit Scheme)—प्रॉविडेण्ट फण्ड, पेंशन और इन्श्योरेन्स—को लागू किया जाना चाहिये।
४. सेवा-निवृत्ति की आयु सामान्यत ६० वर्ष की होनी चाहिये, पर विशेष परिस्थितियों मे इसको ६५ वर्ष तक बढ़ाया जा सकता है।
५. शिक्षकों को उनके प्रॉविडेण्ट फण्ड की धन-राशि पर ब्याज की अधिक ऊँची दर दी जानी चाहिये और इस धन-राशि को ऐसी योजनाओं—नेशनल सेविंग्स सर्टिफिकेट आदि—में लगा देना चाहिये, जिससे शिक्षकों को धन-लाभ हो सके।

समीक्षा

इस समय सेवा-निवृत्ति के लाभों मे बड़ी असमानता है। भारत-सरकार के कर्मचारी को सामान्यत पेंशन, प्रॉविडेण्ट फण्ड और सेवा-पारितोषिक (Gratuity) मिलता है। सरकारी स्कूलों और कॉलिजों मे कार्य करने वाले अध्यापकों के लिये भी पेंशन की व्यवस्था है। पर गैर-सरकारी स्कूलों और कॉलिजों में जो शिक्षक कार्य करते हैं, उन्हें केवल प्रॉविडेण्ट फण्ड से सतोष करना पड़ता है। विश्वविद्यालयों के शिक्षकों के बारे में भी यही बात लागू है। यह असमानता कदाचित् इसलिये है कि गैर-सरकारी शिक्षा-संस्थाओं के शिक्षकों को शिक्षा का विशेष अंग नहीं माना जाता है, या इसलिये कि इन अध्यापकों की शैक्षिक योग्यतायें कम समझी जाती हैं। ये दोनों ही बातें निराधार हैं। शिक्षक चाहे वह जिस संस्था मे भी हो, शिक्षा की योजना का महत्वपूर्ण अंग है। रही शैक्षिक योग्यता की बात, तो क्या किसी सरकारी शिक्षा-संस्था ने ऐसे धुरंधर विद्वान् देश को दिये हैं, जैसे गैर सरकारी शिक्षा-संस्थाओं ने। उदाहरण के लिये—डा० राधाकृष्णन्, डा० जाकिर हुसैन, हुमायूँ कबीर, जगदीश चन्द्र बोस, सी० वी० रमन, मेघनाद साह—इनमे से किसी को ले लीजिये। क्या कोई

३. माध्यमिक विद्यालयों के उन शिक्षकों को, जो आवश्यक अभिरुचि एवं क्षमता का प्रदर्शन करें, विश्वविद्यालयों और कॉलेजों के अध्यापक बनाये जाने चाहिये।

४. 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' को माध्यमिक विद्यालयों के प्रतिभाशाली शिक्षकों को अनुसन्धान कार्य करने के लिये अनुदान देना चाहिये।

५. जो शिक्षक असाधारण कार्य कर रहे हैं, उनकी अग्रिम (Advance) वेतन-वृद्धि की जानी चाहिये।

६. उन लेक्चररों या रीडरों को, जिन्होंने असाधारण कार्य किया है, उच्च-स्तर के पदों के अभाव में भी इस प्रकार के पदों पर अस्थायी रूप से नियुक्त किया जाना चाहिये।

७. स्नातकोत्तर कार्य के विभागों में प्रोफेसर स्तर के पदों की संख्या को आवश्यकताओं के अनुसार निश्चित किया जाना चाहिये।

८. असाधारण तथा प्रतिभाशाली व्यक्तियों को 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' के परामर्श से १६००-१८०० रु० के विशेष वेतन-क्रम से भी अधिक दिया जाना चाहिये।

समीक्षा

आजकल प्राय: सभी शिक्षा-संस्थाओं में एक दोषपूर्ण प्रणाली का प्रचलन है। वह यह कि यदि कोई उच्च पद रिक्त हो जाता है, तो निम्न पद पर कार्य करने वाले शिक्षक की पदोन्नति नहीं की जाती है। फलस्वरूप वह रिक्त पद को प्राप्त करने से वंचित रह जाता है। साधारणत: रिक्त पद पर किसी नये अध्यापक की, जिसका प्रबन्ध-कारिणी समिति के किसी सदस्य पर प्रभाव होता है, नियुक्ति हो जाती है। इससे वंचित रह जाने वाले शिक्षक को भारी निराशा होती है। फलत: या तो वह शिक्षा-संस्था को छोड़ने या कम से कम कार्य करने का निश्चय करता है। इसका परिणाम होता है—शिक्षण-स्तर का पतन। इस स्थिति में सुधार करने के लिये आयोग ने यह सुझाव दिया है कि यदि किसी शिक्षा-संस्था में कोई उच्च पद रिक्त होता है और यदि उस पर आसीन होने के लिये शिक्षा-संस्था के किसी अध्यापक में आवश्यक योग्यतायें हैं, तो यह पद उसको दिया जाय। इससे चार लाभ होंगे। पहला—शिक्षा-संस्था के अध्यापकों में सन्तोष रहेगा, जिसके फलस्वरूप वे तन-मन से शिक्षण का कार्य करेंगे। दूसरा—पदोन्नति की आशा से प्रेरित होकर वे कभी भी अपने कार्य की अवहेलना नहीं करेंगे, और न उसे अनमने मन से करेंगे। तीसरा—पदोन्नति की सम्भावना से प्रेरित होकर अधिक योग्यता वाले शिक्षक कुछ समय के लिये निम्न पदों को स्वीकार कर लेंगे। चौथा—पदोन्नति होने से शिक्षकों की आर्थिक और सामाजिक स्थिति ऊँची उठेगी।

(द) सेवा-निवृत्ति-लाभ
Retirement Benefits

आयोग ने वृद्धावस्था पर पहुँचने के कारण नौकरी समाप्त करने वाले अध्यापकों के विषय में निम्नलिखित सुझाव दिये हैं :—

१. सेवा-निवृत्ति की पद्धति को समानता के सिद्धान्त पर पुनर्संगठित किया जाना चाहिये, अर्थात् सब स्तरों के शिक्षकों को सेवा-निवृत्ति के समान लाभ मिलने चाहिये।
२. राज्य-सरकारों, स्थानीय अधिकारियों तथा व्यक्तिगत प्रबन्धकों के अधीन कार्य करने वाले समस्त शिक्षकों को वे सभी निवृत्ति-लाभ प्रदान किये जाने चाहिये, जो भारत-सरकार के कर्मचारियों को प्राप्त हैं।
३. सभी शिक्षकों के लिये 'त्रिमुखी लाभ-योजना' (Triple Benefit Scheme)—प्रॉविडेण्ट फण्ड, पेंशन और इन्श्योरेन्स—को लागू किया जाना चाहिये।
४. सेवा-निवृत्ति की आयु सामान्यतः ६० वर्ष की होनी चाहिये, पर विशेष परिस्थितियों में इसको ६५ वर्ष तक बढ़ाया जा सकता है।
५. शिक्षकों को उनके प्रॉविडेण्ट फण्ड की धन-राशि पर ब्याज की अधिक ऊँची दर दी जानी चाहिये और इस धन-राशि को ऐसी योजनाओं—नेशनल सेविंग्स सर्टिफ़िकेट आदि—में लगा देना चाहिये, जिससे शिक्षकों को धन-लाभ हो सके।

समीक्षा

इस समय सेवा-निवृत्ति के लाभों में बड़ी असमानता है। भारत-सरकार के कर्मचारी को सामान्यतः पेंशन, प्रॉविडेण्ट फण्ड और सेवा-पारितोषिक (Gratuity) मिलता है। सरकारी स्कूलों और कालिजों में कार्य करने वाले अध्यापकों के लिये भी पेंशन की व्यवस्था है। पर गैर-सरकारी स्कूलों और कालिजों में जो शिक्षक कार्य करते हैं, उन्हें केवल प्रॉविडेण्ट फ़ण्ड से संतोष करना पड़ता है। विश्वविद्यालयों के शिक्षकों के बारे में भी यही बात लागू है। यह असमानता कदाचित् इसलिये है कि गैर-सरकारी शिक्षा-संस्थाओं के शिक्षकों को शिक्षा का विशेष अंग नहीं माना जाता है, या इसलिये कि इन अध्यापकों की शैक्षिक योग्यतायें कम समझी जाती हैं। ये दोनों ही बातें निराधार हैं। शिक्षक चाहे वह जिस संस्था में भी हो, शिक्षा की योजना का महत्त्वपूर्ण अंग है। रही शैक्षिक योग्यता की बात, तो क्या किसी सरकारी शिक्षा-संस्था ने ऐसे धुरंधर विद्वान् देश को दिये हैं, जैसे गैर सरकारी शिक्षा-संस्थाओं ने। उदाहरण के लिये—डा॰ राधाकृष्णन्, डा॰ ज़ाकिर हुसैन, हुमायूँ कबीर, जगदीश चन्द्र बोस, सी॰ वी॰ रमन, मेघनाद साहा—इनमें से किसी को ले लीजिये। क्या कोई

भी सरकारी शिक्षा संस्था—वर्तमान या प्राचीन, इस प्रकार के किसी विद्वान् को उत्पन्न करने का दावा कर सकती है ? निस्सन्देह कोई है नहीं। फिर गैर-सरकारी शिक्षा-संस्थाओं के अध्यापकों को समान सेवा-निवृत्ति के लाभ क्यों नहीं प्राप्त हैं ? हम तो इसको केवल अन्याय, अत्याचार और अविवेक की ही संज्ञा दे सकते हैं।

शिक्षा-जगत् के तिरस्कृत अंग—अध्यापक को यह जानकर अति हर्ष हुआ है कि आयोग ने इस बात पर बल दिया है कि उनको सेवा-निवृत्ति के वही लाभ दिये जायें जो भारत-सरकार के कर्मचारी को दिये जाते हैं। पर दूर क्षितिज पर आशा की जो किरण उसे दिखाई दे रही है, उसके प्रकाश में पनपने की सम्भावना नहीं है। कारण यह है कि सरकार ने 'त्रिमुखी लाभ-योजना' को कार्यान्वित करके उसके आँसुओं को पोंछने का प्रयास किया है।

(घ) कार्य और सेवा की दशाएँ
Conditions of Work & Service

आयोग ने शिक्षकों के कार्य तथा सेवा-सम्बन्धी दशाओं में सुधार करने के लिये अधोलिखित सुझाव दिये हैं :—

१. शिक्षा-संस्थाओं में कार्य की दशाओं को इस प्रकार सुधारा जाय, जिससे शिक्षक-वर्ग उच्चतम कुशलता के अनुसार कार्य कर सकें।
२. प्रत्येक शिक्षा-संस्था में कुशल कार्य के लिये न्यूनतम सुविधाओं को प्रदान किया जाय।
३. समस्त शिक्षकों को व्यावसायिक उन्नति के लिये उपयुक्त सुविधाएँ दी जायें।
४. शिक्षकों के कार्य करने के घंटों को निश्चित करते समय न केवल उनके शिक्षण-कार्य को, वरन् उनके द्वारा किये जाने वाले सब कार्य को ध्यान में रखा जाय।
५. शिक्षकों को पाँच वर्ष में कम से कम एक बार भारतवर्ष के किसी भी भाग में घूमने के लिये उनके वेतन के अनुसार रियायती दर पर रेलवे-टिकिट देने की योजना बनायी जाय।
६. सरकारी-विद्यालयों में कार्य करने वाले शिक्षकों के लिये आचरण तथा अनुशासन-सम्बन्धी नियमावली तैयार की जाय।
७. व्यक्तिगत विद्यालयों में शिक्षकों की सेवा-दशाएँ सरकारी विद्यालयों में काम करने वाले शिक्षकों की सेवा-दशाओं के समान बनाई जायें।
८. शिक्षकों के आवास की व्यवस्था करने के लिये अग्रलिखित कार्य किये जायें :—

(अ) ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षको को आवास प्रदान करने के लिये प्रत्येक प्रकार का प्रयत्न किया जाय और राज्य-सरकारो द्वारा इसके लिये पृथक् रूप से अनुदान दिया जाय।

(ब) शिक्षकों के लिये सहकारी गृह-निर्माण-योजनाओं को प्रोत्साहन दिया जाय।

(स) गृह-निर्माण के लिये शिक्षकों को कम ब्याज पर ऋण दिया जाय।

(द) विश्वविद्यालयों में ५० प्रतिशत तथा सम्बद्ध कॉलेजो मे २० प्रतिशत शिक्षको को निवास-स्थान दिये जायें।

(य) बड़े नगरों मे शिक्षको को मकान के किराये के लिये भत्ता देने की व्यवस्था की जाय।

९. व्यक्तिगत ट्यूशनों की प्रथा को नियन्त्रित किया जाय।

१०. जिन छात्रो को अपने अध्ययन मे विशेष सहायता की आवश्यकता हो, उनके लिये स्कूल में ही विशेष कक्षाओ का आयोजन किया जाय।

११. विश्वविद्यालय-स्तर पर शिक्षकों को अनुसन्धान कार्य करने की अनुमति प्रदान की जाय।

१२. शिक्षको को सभी नागरिक अधिकारों का उपभोग करने की स्वतन्त्रता प्रदान की जाय। उन्हें जिला, राज्य या राष्ट्र के स्तर पर किसी भी सार्वजनिक पद को ग्रहण करने की आज्ञा दी जाय। ऐसी स्थिति में उन्हें शिक्षा-संस्था से अवकाश दिया जाय।

१३. शिक्षकों पर चुनावो मे भाग लेने पर किसी प्रकार का प्रतिबन्ध न लगाया जाय।

१४. जन-जातीय क्षेत्रों (Tribal Areas) के शिक्षकों को विशेष भत्ते, उनके बालको की शिक्षा के लिये सहायता तथा आवास प्रदान किये जायें।

१५. जिन शिक्षकों को जन-जातीय क्षेत्रों में जाकर कार्य करना है, उनको विशेष प्रशिक्षण दिया जाय।

१६. अध्यापिकाओ को निम्नलिखित सुविधायें दी जायें :—

(अ) शिक्षा के विभिन्न स्तरो पर अध्यापिकाओं की नियुक्ति को प्रोत्साहित किया जाय। उनको अधिकाधिक अल्पकालीन कार्य करने की सुविधाएँ दी जायें।

(ब) ग्रामीण क्षेत्रों में उनके आवास की समुचित व्यवस्था की जाय।

(स) 'केन्द्रीय सामाजिक कल्याण-परिषद्' (Central Social Welfare Board) द्वारा वयस्क स्त्रियो के लिये सचालित 'संक्षिप्त पाठ्य-क्रमों' (Condensed Courses) को विस्तृत बनाया जाय।

(द) स्त्रियो को 'पत्र-व्यवहार द्वारा शिक्षा' (Correspondence Courses) की अधिक से अधिक सुविधायें दी जायें।

(द) आवश्यकता पड़ने पर ग्रामीण क्षेत्रों में कार्य करने वाली अध्यापिकाओं को विशेष भत्ते दिये जायें।

समीक्षा

आयोग ने शिक्षकों के कार्य और सेवा की दशाओं मे सुधार करने के लिये सुझाव तो बहुत-से दिये हैं और अच्छे भी। पर इनमे से अनेकों सुझाव ऐसे हैं, जिनको व्यावहारिक रूप दिया जाना कठिन है। उदाहरणार्थ—शिक्षकों के लिये निवास स्थानों की व्यवस्था की जाय और उनको विभिन्न प्रकार के भत्ते दिये जायें। इन कार्यों के लिये धन मिलना कठिन है। अत हमें आशा नहीं है कि इन दोनों सुझावों को सरकार की मान्यता मिलेगी।

आयोग का यह सुझाव अति उत्तम है कि गैर-सरकारी स्कूलों में शिक्षकों के सेवा-प्रतिबन्ध वैसे ही हो, जैसे कि सरकारी स्कूलों में हैं। यदि ऐसा हो गया तो शिक्षकों पर विद्यालय-प्रबन्धकों की तानाशाही समाप्त हो जायगी, जिसके फलस्वरूप अध्यापक, वर्षों पद-दलित रहने के बाद, स्वच्छंदता का अनुभव करेंगे और शिक्षित होकर अशिक्षित प्रबन्धकों की प्रजा न रहेंगे। ट्यूशनों की प्रथा को समाप्त करने से अध्यापक शिक्षण-कार्य में अधिक रुचि लेंगे, छात्रों का शोषण नहीं करेंगे और उन्हें अकारण फेल करके उत्साहहीन नहीं करेंगे।

२. उनमें योग्य शिक्षकों का अभाव है।
३. उनके पाठ्यक्रम में सजीवता और वास्तविकता नहीं है।
४. उनके द्वारा दिया जाने वाला प्रशिक्षण परम्परागत है।
५. उनमें अध्यापकों को बताई जाने वाली शिक्षण-विधियाँ शिक्षा के वर्तमान उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहायता नहीं देती हैं।
६. उनका विश्वविद्यालय के साहित्यिक जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं है।
७. उन्हें स्कूलों की दैनिक समस्याओं से कोई सरोकार नहीं है।

आयोग ने लिखा है कि अध्यापकों की व्यावसायिक शिक्षा के उपरोक्त दोषों को दूर करने के लिए व्यापक कार्य-क्रम की आवश्यकता है। इस कार्य-क्रम में आयोग ने निम्नलिखित बातों को स्थान दिया है :—

१. शिक्षक-शिक्षा की पृथकता का अन्त।
२. व्यावसायिक शिक्षा में सुधार।
३. प्रशिक्षण-काल।
४. प्रशिक्षण-संस्थाओं में सुधार।
५. प्रशिक्षण-सुविधाओं में विस्तार।
६. उच्च शिक्षा के शिक्षकों की व्यावसायिक तैयारी।
७. अध्यापक-शिक्षा के स्तर।

३. शिक्षक-शिक्षा की पृथकता का अन्त
Removal of the Isolation of Teacher-Education

आयोग का विचार है कि अध्यापकों की व्यावसायिक शिक्षा को प्रभावशाली बनाने के लिये उसे एक ओर विश्वविद्यालय के साहित्यिक जीवन (Academic Life), और दूसरी ओर विद्यालय-जीवन तथा शिक्षा-सम्बन्धी नवीनतम विचारों के समीप लाया जाना आवश्यक है। इस उद्देश्य में सफलता प्राप्त करने के लिये आयोग ने निम्नलिखित सुझाव दिये हैं :—

१ 'शिक्षा' विषय को विश्वविद्यालयों के प्रथम और द्वितीय डिग्री कोर्सों (अर्थात् बी० ए० और एम० ए०) के पाठ्य-क्रमों में स्थान दिया जाय।
२. चुने हुए विश्वविद्यालयों में अध्यापक-शिक्षा के कार्य-क्रमों के विकास, अध्ययन और अनुसंधान के लिये 'शिक्षा-विभागों' (Schools of Education) की स्थापना की जाय।
३. प्रत्येक प्रशिक्षण-संस्था में 'प्रसार-सेवा-विभाग' (Extension Service Department) की स्थापना की जाय।
४. प्रशिक्षण-संस्थाओं में 'पुरातन छात्र-संघों' (Old Boys' Associations) की स्थापना की जाय। ये छात्र शिक्षकों के साथ शिक्षा के विभिन्न विषयों, समस्याओं और पाठ्य-क्रमों पर विचार विमर्श करें।

५. प्रशिक्षण-काल मे छात्राध्यापको से मान्यता-प्राप्त स्कूलो मे ही शिक्षण का अभ्यास कराया जाय ।
६. सरकार द्वारा इन स्कूलो को उपयुक्त शिक्षण-सामग्री और साज-सज्जा के लिये विशेष अनुदान दिया जाय ।
७. प्रशिक्षण-विद्यालयो और उनसे सम्बद्ध अध्यापन-अभ्यास (Teaching-Practice) के स्कूलो के शिक्षकों मे समय-समय पर विनिमय (Exchange) किया जाय ।
८ विभिन्न प्रकार की शिक्षण-संस्थाओ की पृथकता को दूर करने के लिये सब को 'ट्रेनिंग कॉलेजों' की संज्ञा दी जाय, और उनको विश्व-विद्यालयों से सम्बद्ध किया जाय ।
९. प्रत्येक राज्य में 'कॉम्प्रीहेन्सिव कॉलेजों' (Comprehensive Colleges) का निर्माण किया जाय, जिनमें शिक्षा के विभिन्न स्तरों के लिये अध्यापकों को प्रशिक्षण दिया जाय ।
१०. प्रत्येक राज्य में 'अध्यापक-शिक्षा का स्टेट बोर्ड' (State Board of Teacher-Education) स्थापित किया जाय । यह बोर्ड सब स्तरों और सब क्षेत्रों में अध्यापक-शिक्षा के लिये उत्तरदायी बनाया जाय; यथा—
    (अ) प्रशिक्षण-संस्थाओं के लिये स्तरो का निर्धारण,
    (ब) शिक्षक-शिक्षा के पाठ्य-क्रमों, कार्य-क्रमों, परीक्षाओं, पाठ्य-पुस्तकों, तथा शिक्षण-सामग्री मे सुधार,
    (स) प्रशिक्षण-संस्थाओं की मान्यता के लिये प्रतिबन्धो का निर्धारण,
    (द) इन संस्थाओं के निरीक्षण की व्यवस्था,
    (य) प्रशिक्षण-शिक्षा के विकास के लिये तात्कालिक तथा दीर्घकालीन योजनाओं का निर्माण ।

समीक्षा

जैसा कि आयोग ने सुझाव दिया है, प्रशिक्षण-संस्थाओ की पृथकता को दूर किया जाना अति आवश्यक है । एक बड़े जिले में और कभी-कभी छोटे मे भी २ से ३ तक या इससे भी अधिक प्रशिक्षण-संस्थायें होती हैं । यदि ये संस्थायें एक ही प्रकार की होती हैं, तब भी इनके शिक्षकों और छात्रों मे किसी प्रकार का सम्पर्क नहीं होता है । यदि संस्थायें विभिन्न स्तरो का प्रशिक्षण देती हैं, तब तो इनमें पारस्परिक सम्पर्क का प्रश्न उठता ही नहीं है । इसके अतिरिक्त, सभी प्रकार की प्रशिक्षण-संस्थायें विश्व-विद्यालय के साहित्यिक जीवन से दूर होती हैं, क्योंकि वे शिक्षा को साहित्य का अंग न मानकर उसका पृथक् अस्तित्व समझती हैं । यद्यपि इन संस्थाओं के अध्यापक और छात्र, अध्यापन-अभ्यास के लिये स्कूलों मे जाते हैं, पर वे वहाँ के अध्यापकों से दूर का सम्बन्ध रखते हैं । ऐसी स्थिति मे शिक्षकों मे न तो विचारों का आदान-प्रदान हो पाता है, और न वे एक-दूसरे की समस्याओ को समझ पाते हैं ।

६ प्रशिक्षण-संस्थाओं में सुधार
Improvement in Training Institutions

प्रशिक्षण-सस्थाओ मे गुणात्मक उन्नति करने के लिये आयोग ने निम्नलिखित सुझाव दिये हैं :—

१. ट्रेनिग कॉलेजो के अध्यापको के पास दो स्नातकोत्तर उपाधियाँ (Master's Degrees) होनी चाहिये। इन उपाधियों के साथ-साथ उनके पास शिक्षा की उपाधि (Degree in Education) भी होनी चाहिये।
२. ट्रेनिग कॉलेजो के अध्यापकों मे से कुछ के पास 'डाक्टर' (Ph. D.) की उपाधि होनी चाहिये।
३. मनोविज्ञान, समाज-शास्त्र, विज्ञान या गणित ऐसे विषयो को पढाने के लिये योग्य विशेषज्ञो को नियुक्त किया जाना चाहिये, भले ही वे अप्रशिक्षित (Untrained) हों।
४. स्कूलों मे कार्य करने वाले अप्रशिक्षित अध्यापकों को प्रशिक्षण देने के लिये 'ग्रीष्मकालीन सस्थाओ' (Summer Institutes) का सगठन किया जाय।
५. उसी छात्र को किसी विषय के शिक्षण में विशेष योग्यता प्राप्त करने की अनुमति दी जाय, जो उस विषय में प्रथम उपाधि (B. A. etc.) या उसके समकक्ष परीक्षा पास कर चुका हो।
६. राज्यों तथा सघीय क्षेत्रो को यह नियम बनाना चाहिये कि माध्यमिक-स्कूलों में शिक्षक उन्हीं विषयों को पढ़ा सकते हैं, जिनका उन्होने विश्वविद्यालय-उपाधि के लिये अध्ययन किया हो। यदि वे किसी अन्य विषय को पढ़ायें तो उन्हें उस विषय मे पत्र-व्यवहार द्वारा या समर-इनस्टीट्यूट मे विशेष कोर्स का अध्ययन करना चाहिये।
७. प्रशिक्षण-महाविद्यालयो में प्रथम तथा द्वितीय श्रेणी प्राप्त छात्रों को प्रवेश देने का प्रयास किया जाय और उनको उपयुक्त छात्रवृत्तियाँ दी जायें।
८. प्राइमरी स्कूलो के शिक्षकों को प्रशिक्षण देने वाली सस्थाओं के अध्यापक या तो शिक्षा विषय में एम० ए० (M A. In Education) हो, या किसी अन्य विषय में स्नातकोत्तर उपाधि (M A., M Sc. आदि) के साथ बी० एड० (B. Ed.) की उपाधि प्राप्त कर चुके हों।
९. प्राथमिक विद्यालयों मे नये शिक्षकों की नियुक्ति उन व्यक्तियों में से की जाय, जो १० वर्ष की 'सामान्य शिक्षा' (General Education) पूर्ण कर चुके हों। इस प्रतिबन्ध को जन-जातीय क्षेत्रों में तथा अध्यापिकाओं के लिये कठोरता के साथ लागू न किया जाय।

१०. प्राथमिक विद्यालयों में जो अप्रशिक्षित शिक्षक कार्य कर रहे हैं, उनके लिये पत्र-व्यवहार द्वारा शिक्षा की व्यवस्था की जाय और उन्हें अध्ययन करने के लिये अवकाश दिया जाय, जिससे वे अपनी योग्यता में उन्नति कर सकें।

११. प्राथमिक विद्यालयों में आने वाले ग्रेजुएट शिक्षकों के लिये विशेष पाठ्य-क्रमों का संगठन किया जाय।

१२. प्रशिक्षण संस्थाओं में छात्रों से शुल्क न लिया जाय और उनके लिये छात्रवृत्तियों तथा ऋण की व्यवस्था की जाय।

१३. प्रत्येक प्रशिक्षण-संस्था से सम्बद्ध एक प्रयोगात्मक (Experimental) स्कूल होना चाहिये।

१४. छात्राध्यापकों तथा शिक्षकों को आवास की उपयुक्त सुविधाएँ प्रदान की जायें।

१५. प्रचलित प्रशिक्षण-संस्थाओं में पुस्तकालयों, प्रयोगशालाओं, वर्कशापों आदि की स्थिति बहुत असन्तोषजनक है। अतः इनकी दशा में सुधार किया जाय।

समीक्षा

आयोग ने प्रशिक्षण-संस्थाओं में गुणात्मक उन्नति करने के लिये अति उत्कृष्ट विचार व्यक्त किये हैं। वर्तमान प्रशिक्षण संस्थाओं का कार्य बहुत निम्न कोटि का हो गया है। उनके प्रोफ़ेसरों और लेक्चररों के शिक्षण का स्तर बहुत काफ़ी गिर चुका है। जहाँ तक उनमें अध्ययन करने वाले छात्राध्यापकों के बौद्धिक स्तर और अध्यापन-कला की बात है—इनकी चर्चा करते हुए लज्जा से मस्तक झुक जाता है। अतः यदि हम अपने देश के लिये उत्तम और अच्छी प्रकार के प्रशिक्षित अध्यापक चाहते हैं, तो हमें आयोग के सुझावों को मान्यता देकर अपनी प्रशिक्षण-संस्थाओं में आमूल-चूल परिवर्तन करना होगा।

आयोग के कुछ सुझाव विलक्षणपूर्ण हैं पहिला—ट्रेनिंग कालिजों के अध्यापक प्रशिक्षित होने चाहिये और उनके पास दो स्नातकोत्तर उपाधियाँ होनी चाहिये। इससे यह लाभ होगा कि वे आवश्यकता पड़ने पर अध्यापन के दो विषयों का निरीक्षण कर सकेंगे। दूसरा—मनोविज्ञान, विज्ञान आदि में अप्रशिक्षित अध्यापकों की नियुक्ति की जा सकती है। इसका परिणाम यह होगा कि ट्रेनिंग कालिजों में ये पद रिक्त न रहेंगे या अयोग्य व्यक्ति इन विषयों का शिक्षण नहीं करेंगे। तीसरा—स्कूलों के अप्रशिक्षित अध्यापकों को 'ग्रीष्मकालीन सस्थाओं' में प्रशिक्षण प्राप्त करने की सुविधा दी जाय। फलस्वरूप स्कूलों में अप्रशिक्षित अध्यापक नहीं रहेंगे और उनमें शिक्षकों का अभाव भी नहीं होने पायेगा। चौथा—अध्यापकों को स्कूलों में उन्हीं विषयों को पढ़ाने की आज्ञा दी जाय, जिन्हें वे अपनी डिग्री परीक्षा के लिये पढ़ चुके हैं। इसका सुन्दर परिणाम यह होगा कि स्कूलों में शिक्षण-स्तर गिरने नहीं पायेगा। पाँचवाँ—

प्रशिक्षण-संस्थाओं में प्रथम और द्वितीय श्रेणी के छात्रों को प्रवेश दिया जाय, ऐसा करने से इन संस्थाओं का स्तर ऊँचा उठेगा। छः—प्रशिक्षण-संस्थाओं में निःशुल्क शिक्षा दी जाय। परिणामस्वरूप नवयुवक इनकी ओर आकृष्ट होंगे।

७. प्रशिक्षण-सुविधाओं का विस्तार
Expansion of Training Facilities

प्रशिक्षण-सुविधाओं का विस्तार करने के लिये आयोग ने निम्नलिखित सुझाव दिये हैं :—

१. प्रत्येक राज्य को अपने क्षेत्र में प्रशिक्षण-सुविधाएँ प्रदान करने के लिये एक योजना तैयार करनी चाहिये, जिससे शिक्षकों की माँग की पूर्ति तथा शिक्षण-कार्य में लगे हुए शिक्षकों को प्रशिक्षण प्रदान किया जा सके।
२. विस्तृत आधार पर पत्र-व्यवहार द्वारा शिक्षा और अंशकालीन प्रशिक्षण की सुविधाएँ प्रदान की जानी चाहिये।
३ प्रशिक्षण-संस्थाओं का आकार काफी विस्तृत होना चाहिये और उनका निर्माण एक निश्चित योजना के अनुसार होना चाहिये।
४. विद्यालय-शिक्षकों को शिक्षण-कार्य करते हुए शिक्षा एवं प्रशिक्षण प्राप्त करने की सुविधाएँ दी जानी चाहिये। इसके लिये विश्वविद्यालयों एवं प्रशिक्षण-संस्थाओं द्वारा विभिन्न कार्य-क्रम संचालित किये जाने चाहिये।
५. यदि नियुक्ति के समय कोई शिक्षक अप्रशिक्षित है, तो उसे ३ वर्ष के अन्दर प्रशिक्षण प्राप्त कर लेना चाहिये।

समीक्षा

आयोग के उपरोक्त सुझाव अभिनन्दनीय हैं। ये सुझाव स्पष्ट रूप से इस बात की पुष्टि करते हैं कि आयोग किसी भी स्तर के विद्यालय में अप्रशिक्षित अध्यापक नहीं चाहता है। इससे छात्रों और विद्यालयों—दोनों का हित होगा, क्योंकि प्रशिक्षित अध्यापक शिक्षण के स्तर को अनिवार्य रूप से ऊपर उठा देंगे। कुछ समय तक सब विद्यालयों के लिये प्रशिक्षित अध्यापक उपलब्ध नहीं होंगे। ऐसी स्थिति में अप्रशिक्षित अध्यापकों की नियुक्ति आवश्यक हो जायगी। ये शिक्षक भी आयोग के एक सुझाव के अनुसार प्रशिक्षित हो जायेंगे, क्योंकि उसने यह स्पष्ट कर दिया है कि प्रत्येक अध्यापक को नियुक्ति के समय से ३ वर्ष के अन्दर प्रशिक्षण प्राप्त कर लेना होगा।

८. उच्च-शिक्षा के शिक्षकों की व्यावसायिक तैयारी
Professional Preparation of Teachers in Higher Education

आयोग ने उच्च शिक्षा के बारे में [illegible] के लिये जाने व्यवसाय

अथवा शिक्षण-कार्य के लिये तैयारी करना आवश्यक समझा है और इस सम्बन्ध मे नीचे लिखे सुझाव दिये हैं :—

१. जूनियर लेक्चरारों को व्यावसायिक शिक्षा प्रदान करने के लिये उपयुक्त व्यवस्था की जाय।
२. जो व्यक्ति पहली बार लेक्चरार के रूप में किसी उच्च शिक्षा-सस्था में नियुक्त होते हैं, उन्हें सस्था के अच्छे अध्यापकों के व्याख्यानों को सुनने के अवसर दिये जायँ।
३. प्रत्येक विश्वविद्यालय और यथासम्भव प्रत्येक कॉलिज में नये शिक्षकों के लिये नियमित रूप से 'निश्चित पाठ्य-क्रमों' (Orientation Courses) का सगठन किया जाय।
४. बडे विश्वविद्यालयो या कुछ विश्वविद्यालयो के एक समूह मे इन पाठ्य-क्रमों को विशिष्ट शिक्षकों को नियुक्त करके सचालित किया जाय।

समीक्षा

उच्च शिक्षा-सस्थाओं में कार्य करने वाले अध्यापकों के बारे मे जो सुझाव आयोग ने दिये हैं, उनकी इनमे से कुछ अध्यापकों द्वारा कटु आलोचना की गई है। वे कहते हैं कि उन्हें तैयारी की क्या आवश्यकता है। वे जानते हैं कि उनको कक्षाओं में किस प्रकार व्याख्यान देने चाहिये। पर उनमे पूछिये कि उनमे से कुछ शिक्षण-कार्य में असफल क्यों हो जाते हैं? उनकी कक्षाओ से छात्र नौ-दो ग्यारह क्यों हो जाते हैं? और जो रह जाते हैं, वे व्याख्यानो के प्रति ध्यान न देकर परस्पर या उन्हीं से इधर-उधर की बातें क्यों करते हैं? इन सब का कारण है—उनकी व्याख्यान-शक्ति और शैली की प्रभावहीनता और अरोचकता। अत. उन्हें खुले दिल से आयोग के सुझावों का स्वागत करना चाहिये और उनके अनुसार कार्य करके अपने को सफल शिक्षक बनाना चाहिये।

६. अध्यापक-शिक्षा के स्तर

Standards in Teacher-Education

अध्यापक-शिक्षा के स्तरों के सम्बन्ध मे आयोग ने अधोलिखित सुझाव दिये हैं :—

१. राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षक-शिक्षा के स्तरो को निर्धारित करने के लिये 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' को उत्तरदायी बनाया जाय।
२. राज्य-स्तर पर 'शिक्षक-शिक्षा-परिषदों' (Boards of Teacher Education) को इस काय के लिये उत्तरदायी बनाया जाय।
३. पाँचवीं पचवर्षीय योजना में 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' को विश्वविद्यालयो मे शिक्षक-शिक्षा मे सुधार करने लिये कुछ धनराशि प्रदान की जाय।

३. इच्छुक व्यक्तियों के लिए उच्चतर माध्यमिक और विश्वविद्यालय-शि की व्यवस्था करना।
४. उपरोक्त दोनों प्रकार की शिक्षा को प्रशिक्षित व्यक्तियों की माँग अनुकूल बनाना।
५. उपरोक्त शिक्षा के आवश्यक स्तरों को क़ायम रखना।
६. उपरोक्त शिक्षा को प्राप्त करने के लिये निर्धन छात्रों को पर्या आर्थिक सहायता देना।
७. व्यावसायिक, प्राविधिक और रोजगार-सम्बन्धी शिक्षा (Professiona Technical & Vocational Education) के विकास पर बल देना
८. कृषि और उद्योगों के लिये प्रशिक्षित व्यक्तियों को तैयार करना।
९. प्रतिभाशाली छात्रों को सहायता देकर उनकी सब क्षमताओं का पू विकास करना।
१०. निरक्षरता का उन्मूलन करना और वयस्क-शिक्षा के कार्य-क्रमों क कार्यान्वित करना।
११. शैक्षिक अवसरों में समानता स्थापित करने के लिए प्रयत्न करना।

समीक्षा

छात्र-संख्याओं से सम्बन्धित राष्ट्रीय नीति के जिन लक्ष्यों का आयोग ने उल्लेख किया है, वे अति व्यापक हैं। अगले २० वर्षों में इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये प्रयास करने से शिक्षा के सभी अंगों की रूप-रेखा बदल जायगी। साथ ही हमारे विभिन्न उद्योगों के लिये प्रशिक्षित व्यक्ति उपलब्ध हो जायेंगे। प्रतिभाशाली छात्रों को अध्ययन की सुविधायें देने से जीवन के प्रायः प्रत्येक क्षेत्र में प्रतिभाशाली व्यक्ति दिखाई देने लगेंगे। निरक्षरता का उन्मूलन करके हमारे देश के मस्तक पर लगी हुई कलंक-कालिमा धुल जायगी। शैक्षिक अवसरों में समानता होने के कारण उन व्यक्तियों के बच्चे, जिनको हम निम्न और तुच्छ समझते हैं, शिक्षा प्राप्त करने के अधिकार से वंचित न रह जायेंगे।

पर खेद का विषय है कि इच्छुक छात्रों के लिये उच्चतर माध्यमिक और विश्वविद्यालय-शिक्षा की व्यवस्था करने के लिये कोई भी सुझाव नहीं दिया गया है। आयोग इस सम्बन्ध में बिल्कुल मौन है कि यह व्यवस्था किस प्रकार की जाय। ऐसा न करने से शिक्षा के लिये लालायित कितने ही छात्रों की अभिलाषा पूर्ण नहीं हुई है। उदाहरणार्थ-केवल दिल्ली में ही हजारों छात्रों और छात्राओं को स्कूलों और कॉलिजों में प्रवेश न मिल सकने के कारण भारी निराशा हुई है। इससे भी अधिक निराशा उन छात्रों को हुई है, जो परीक्षाओं में असफल होने के कारण पुन. प्रवेश नहीं पा सके हैं।

२ माध्यमिक और उच्च शिक्षा में छात्र-सख्याओं की नीतियाँ

Enrolment Policies in Secondary & Higher Education

माध्यमिक स्कूलों और उच्च शिक्षा-संस्थाओं में छात्र-संख्याओं के विषय मे आयोग ने निम्नांकित सुझाव दिये हैं .—

१. उत्तर-प्राइमरी शिक्षा (Post-Primary Education) में छात्र-सख्या-सम्बन्धी नीति को चार बातो पर आधारित किया जाय—(i) माध्यमिक और उच्च शिक्षा के लिये जनता की माँग, (ii) छात्रों के समस्त स्वाभाविक गुणों का पूर्ण विकास, (iii) माध्यमिक और उच्च शिक्षा के स्तरों पर उत्तम शिक्षा की सुविधायें प्रदान करने की समाज की क्षमता, और (iv) जनबल की आवश्यकतायें।

२. पहली तीन योजनाओं में माध्यमिक और उच्च शिक्षा की माँग मे बहुत वृद्धि हुई है और भविष्य में भी होगी। इस बढती हुई माँग को पूरा करने के लिये अध्यापको, धन और शिक्षण-सामग्री को जुटाना कठिन होगा। अत हायर सेकेंडरी स्कूलों, कॉलिजो और विश्वविद्यालयो में चुने हुए छात्रो को प्रवेश दिया जाय।

३. धनी समाज भी समस्त योग्य छात्रों को माध्यमिक और उच्च शिक्षा देने मे कठिनाई का अनुभव करते हैं। ऐसा करना भारत के लिये असम्भव होगा। अत· भविष्य मे छात्र-सख्या-सम्बन्धी राष्ट्रीय नीति का यह लक्ष्य निर्धारण किया जाय—योग्य छात्रो में जो सबसे अधिक प्रतिभाशाली हो, उनको माध्यमिक शिक्षा समाप्त करने के बाद उच्च शिक्षा प्राप्त करने का अवसर दिया जाय और उनको उदारतापूर्वक छात्रवृत्तियाँ दी जायँ, जिससे उनकी आर्थिक कठिनाइयों का समाधान हो जाय।

४. पिछले समय मे माध्यमिक और उच्च शिक्षा का विस्तार करने के लिये योग्य शिक्षकों, साज-सज्जा आदि के प्रति ध्यान नहीं दिया गया। फलस्वरूप शिक्षा का स्तर गिर गया। इसलिये भविष्य में इस नीति को न अपनाया जाय।

५. शिक्षा की सुविधाओं का विस्तार जनशक्ति या रोजगार प्राप्त करने के अवसरों को ध्यान मे रखकर किया जाय।

समीक्षा

आयोग ने माध्यमिक स्कूलों और उच्च शिक्षा-संस्थाओ मे छात्र-सख्याओं के बारे में जो सुझाव दिये हैं, वे बहुत ही विवेकपूर्ण हैं। आयोग का यह कथन बिल्कुल सत्य है कि पिछले वर्षों मे शिक्षा के स्तरों का ध्यान न रखकर शिक्षा का विस्तार किया गया, जिसके फलस्वरूप शिक्षा के स्तरो का बहुत पतन हो गया। हमें यह

अध्याय ७

शैक्षिक अवसरों की समानता
EQUALIZATION OF EDUCATIONAL OPPORTUNITIES

आयोग का विचार है—"प्रत्येक समाज जो सामाजिक न्याय को महत्त्व देता है और सामान्य मनुष्य की स्थिति में सुधार करने तथा समस्त उपलब्ध योग्यताओं का विकास करने के लिये चिन्तित रहता है, उसे जन-समुदाय के सब वर्गों को समानता का अधिक से अधिक अवसर देना आवश्यक होता है। केवल यही वह गारन्टी है जिस पर समानता पर आधारित ऐसे मानव-समाज का निर्माण किया जा सकता है, जिसमें निर्बलों का कम से कम शोषण हो।"

दुर्भाग्य से भारतीय समाज में सब के लिये अवसरों की समानता नहीं है। शिक्षा के बारे में भी यही बात है। शिक्षा के क्षेत्र में मुख्यतः दो प्रकार की असमानताएँ पाई जाती हैं : प्रथम—शिक्षा में सभी पक्षों तथा स्तरों पर लड़कों तथा लड़कियों की शिक्षा में व्यापक असमानता पायी जाती है। द्वितीय—उन्नत वर्गों तथा पिछड़े वर्गों, अछूत जातियों, आदिवासियों आदि के शैक्षिक विकास में व्यापक अन्तर पाया जाता है। सामाजिक न्याय के आधार पर तथा लोकतन्त्र के विकास के लिये इन समूहों के बीच शैक्षिक अवसरों की समानता स्थापित करने के लिये विशेष प्रयास किये जाने आवश्यक हैं। हमारी शिक्षा-प्रणाली को उत्तम कहलाने का अधिकार तभी होगा, जब शैक्षिक अवसरों में असमानता को न्यूनतम सीमा तक पहुँचा दिया जाय। इस कार्य में सफलता प्राप्त करने के लिये आयोग ने निम्नलिखित सुझाव दिये हैं :—

१. निःशुल्क शिक्षा
Free Education

आयोग का विचार है कि देश को उस स्थिति पर पहुँचने के लिये कार्य करना चाहिये जिसमें समस्त शिक्षा निःशुल्क हो। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये निम्नलिखित कार्य किये जाने चाहिये :—

१. चतुर्थ पंचवर्षीय योजना के अन्त से पूर्व समस्त सरकारी, स्थानीय, तथा सहायता-प्राप्त व्यक्तिगत स्कूलो मे प्राथमिक स्तर तक ट्यूशन फीस समाप्त कर दी जाय।

२. निम्न माध्यमिक शिक्षा को पंचवर्षीय योजना के अन्त तक या उससे पूर्व सभी सरकारी, स्थानीय या सहायता-प्राप्त व्यक्तिगत विद्यालयों में नि:शुल्क बनाया जाय।

३. अगले १० वर्षों मे उच्चतर माध्यमिक तथा विश्वविद्यालय-शिक्षा को योग्य एवं जरूरतमन्द छात्रों के लिये नि:शुल्क बनाया जाय। इस दिशा से पहला कार्य यह किया जाय कि इन स्तरों के सब छात्रों में से ३० प्रतिशत छात्रो को नि:शुल्क शिक्षा प्राप्त करने के लिये शिष्यवृत्तियाँ (Studentship) दी जायँ।

२. शिक्षा के दूसरे खर्चों मे कमी
Reduction in Other Costs of Education

आयोग का विचार है कि आधुनिक समय मे शिक्षा के दूसरे खर्चे बहुत ब गये हैं। अत: इनको कम करने के लिये प्रयास किये जाने चाहिये। इस दृष्टिकोण आयोग ने निम्नांकित सुझाव दिये हैं :—

१. प्राथमिक स्तर पर बालको को पाठ्य-पुस्तकें तथा लिखने की साम मुफ्त दी जाय। जो छात्र विद्यालय मे प्रवेश करें, उन्हे विद्यालय-उत्स पर पाठ्य-पुस्तकें प्रदान करने की व्यवस्था की जाय। अन्य छात्रों क उस समय प्रदान की जायँ, जब उनके परीक्षा-फलों की घोषणा की जाय जिससे वे पाठ्य-पुस्तको का गर्मियो की छुट्टियो मे सदुपयोग कर सकें

२ माध्यमिक स्कूलों तथा उच्च-शिक्षा की सस्थाओं में 'पुस्तक-गृहों (Book Banks) के कार्यक्रम का विकास किया जाय। शिक्षा-विभागों के पास ऐसे फण्ड होने चाहिये, जिनसे धन देकर वे माध्यमिक स्कूलों मे पुस्तको के बैंको की स्थापना को प्रोत्साहन दें। विश्वविद्यालयों तथा कॉलिजो मे ऐसे बैंको की स्थापना के लिये 'विश्वविद्यालय-अनुदान आयोग' कार्य करे। इसके लिये सरकार 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' को पृथक् रूप से धनराशि दे।

३. माध्यमिक विद्यालयो तथा उच्च-शिक्षा की सस्थाओं के पुस्तकालयों मे पर्याप्त संख्या मे पाठ्य-पुस्तको को रखा जाय, जिससे छात्र उनका प्रयोग कर सकें।

४. प्रतिभाशाली छात्रों को पाठ्य-पुस्तकों तथा अन्य आवश्यक पुस्तकों को खरीदने मे [illegible] जायँ। यह योजना पहले विश्वविद्यालयों

में प्रारम्भ की जाय और बाद में सम्बद्ध कॉलेजो तथा माध्यमिक स्कूलों मे लागू की जाय ।

३. पर्याप्त छात्रवृत्तियों की व्यवस्था
Provision For Adequate Scholarships

आयोग का विचार है कि आधुनिक समय मे छात्र-वृत्तियों के कार्यक्रमो पर पर्याप्त ध्यान दिया गया है । परन्तु इसका पुनर्गठन किया जाना आवश्यक है । अतः इसको अधोलिखित सिद्धान्तो के अनुसार पुनर्गठित किया जाय —

१. छात्र-वृत्तियों का कार्यक्रम एक क्रमिक प्रक्रिया है । अत इसे शिक्षा के सभी स्तरों पर सगठित किया जाय ।
२. विद्यालय-स्तर पर छात्रवृत्तियाँ देने की उपयुक्त व्यवस्था की जाय क्योंकि इस समय ऐसा नही है ।
३ छात्र-वृत्तियाँ तभी लाभदायक सिद्ध हो सकती हैं, जब शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर उत्तम शिक्षा-सस्थायें हों और इन संस्थाओ में योग्य छात्रों को प्रवेश दिया जाय ।
४. जब छात्र शिक्षा के एक स्तर से दूसरे स्तर मे प्रवेश करें, तब उनका पूर्ण ध्यान रखा जाय, जिससे योग्य छात्र अपनी भावी शिक्षा से वचित न रह जायें ।
५. छात्र-वृत्तियों के कार्य-क्रम और उत्तम शिक्षा-सस्थाओ को सचालित करने के लिये उपयुक्त प्रशासकीय व्यवस्था की जाय ।
६. निम्न प्राथमिक स्तर के उपरान्त किसी भी योग्य एव प्रतिभाशाली बालक को अपनी भावी शिक्षा से वचित न किया जाय । इसके लिये छात्र-वृत्तियो के कार्यक्रम मे इन छात्रो के लिये व्यवस्था की जाय । इन छात्रो को पर्याप्त धन-राशि वृत्ति के रूप मे दी जाय । १९७५–७६ तक उच्चतर प्राथमिक स्तर के सब छात्रो मे २·५ प्रतिशत को, तथा १९८५–८६ तक ५ प्रतिशत छात्रो को ऐसी छात्र-वृत्तियाँ प्रदान की जायें ।
७. माध्यमिक स्तर पर पहुँचने वाले १५ प्रतिशत योग्य छात्रों को छात्र-वृत्तियाँ प्रदान करने की व्यवस्था की जाय ।
८. प्रत्येक 'सामुदायिक विकास-खण्ड' (Community Development Block) मे कम से कम एक उत्तम माध्यमिक विद्यालय स्थापित किया जाय । इस विद्यालय मे निवास की पर्याप्त सुविधाएँ हों और इसमे योग्यता के आधार पर ही छात्रो को प्रवेश दिया जाय ।
९. विश्वविद्यालय-स्तर पर पूर्व-स्नातक छात्रो को सम्पूर्ण संख्या के १५ प्रतिशत को १९७६तक और २५ प्रतिशत को १९८६ तक छात्र-वृत्तियाँ प्रदान की जायें ।

३. व्यावसायिक शिक्षा के लिये छात्र-वृत्तियाँ : Scholarships for Vocational Education

व्यावसायिक शिक्षा के लिये दी जाने वाली छात्रवृत्तियों मे निम्नांकित सुधार किये जायें :—

१. व्यावसायिक शिक्षा-संस्थाओं मे प्रवेश पाने के लिये समान अवसरों को व्यवस्था की जाय।
२. टेकनॉलॉजी, इजीनियरिंग और चिकित्सा की शिक्षा-संस्थाओं की प्रवेश-परीक्षायें अंग्रेजी और प्रादेशिक भाषाओं मे ली जायें और प्रत्येक भाषा के सर्वोत्तम छात्रों को चुना जाय।
३. विद्यालय-स्तर पर ३० प्रतिशत, तथा कॉलेज-स्तर पर ४० प्रतिशत छात्रों को छात्र-वृत्तियाँ प्रदान की जायें।

४. विदेशों में अध्ययन के लिये छात्रवृत्तियाँ : Scolarships for Study Abroad

प्रतिभाशाली छात्रों को विदेशो मे उच्च अध्ययन करने के लिये छात्र-वृत्तियाँ प्रदान करने के लिये एक राष्ट्रीय कार्य-क्रम बनाया जाय। इस कार्य-क्रम के अन्तर्गत ५०० छात्र-वृत्तियाँ प्रति वर्ष प्रदान की जायें।

५. ऋण-छात्रवृत्तियाँ : Loan Scholarships

आयोग का विचार है कि उपरोक्त छात्र-वृत्तियों के कार्य-क्रमों की पूर्ति के लिये ऋण-छात्रवृत्तियों का कार्य-क्रम संचालित किया जाय। इस कार्य-क्रम को अधो लिखित तथ्यों के अनुसार सगठित किया जाय :—

१. ऋण-छात्रवृत्तियाँ अनिवार्य रूप से विज्ञान और व्यावसायिक शिक्षा संस्थाओं मे छात्रो को दी जायें।
२. इन छात्रवृत्तियो की योजना को कुछ सीमा तक सामान्य शिक्षा के प्रतिभाशाली छात्रों के लिये भी लागू किया जाय।
३. यदि कोई व्यक्ति, जिसने ऋण-छात्रवृत्ति ली है, शिक्षण-व्यवसाय को अपनाता है, तो ऋण का १/१० भाग प्रतिवर्ष उसके वेतन से का लिया जाय। इससे यह लाभ होगा कि शिक्षण-व्यवसाय को अधि उत्तम व्यक्ति प्राप्त हो सकेंगे।
४. इस योजना के सुगम प्रशासन के लिये 'राष्ट्रीय ऋण-छात्रवृत्ति-परिषः (National Loan Scholarships Board) की स्थापना की जाय।

आयोग का विचार है कि छात्र-वृत्तियों के इन समस्त कार्य-क्रमों मे लड़कि की आवश्यकताओं को प्राथमिकता प्रदान की जाय। भारत-सरकार उच्च-शिक्षा के समस्त छात्र-वृत्तियो का भार अपने ऊपर ले और राज्य-सरकारें विद्यालय-स्तर की छात्र-वृत्तियों का दायित्व ग्रहण करें।

५. छात्र-सहायता के अन्य रूप
Other Forms of Student-Aid

आयोग ने लिखा है कि छात्रों को सहायता देने के निम्नलिखित रूपों (विकसित किया जाना आवश्यक है .—

१. छात्रवासों और छात्रवृत्तियों पर किये जाने वाले व्यय को कम कर के लिये छात्रों को आवागमन की सुविधायें दी जायें । उदाहरणार्थ—दू से आने वाले छात्रों को साइकिलें दी जाने की व्यवस्था की जाय ।
२. 'दिवस-अध्ययन-केन्द्रों (Day Study Centres) और 'निवास-गृहों (Lodging Houses) का बड़े पैमाने पर निर्माण किया जाय, जिससे कि छात्र इनमे दिन मे और रात में भी रह सकें, पर भोजन के लिये अपने घरों को जायें ।
३. छात्रों को अध्ययन-काल मे धन-उपार्जन की सुविधायें दी जायें, जिनसे वे अपनी शिक्षा का कुछ व्यय निकाल सकें ।

६. विशिष्ट क्षेत्रों मे अवसरों की समानता
Equalization of Opportunities in Special Fields

आयोग ने इस बात पर बल दिया है कि शिक्षा के विशिष्ट क्षेत्रों मे भी लकों और बालिकाओं को शिक्षा प्राप्त करने के लिये समान अवसर दिये जायें । ये त्र अधोलिखित हैं :—

अ) विकलांग बच्चों की शिक्षा : Education of Handicapped Children

आयोग का विचार है कि देश में विकलांग बच्चों की शिक्षा की प्रगति दो मुख्य कारणों—उपयुक्त शिक्षकों तथा वित्तीय साधनों का अभाव—से अवरुद्ध हो गई । इन बातों को ध्यान मे रखते हुए इस क्षेत्र मे हमें अपना लक्ष्य १९८६ तक अंधों, गूँगों आदि समस्त बालकों के १५ प्रतिशत भाग को शिक्षित करने की व्यवस्था करनी चाहिये । इसके अतिरिक्त, ५ प्रतिशत कम विकसित मस्तिष्क के बच्चों को शिक्षित करने की योजना बनाई जाय । इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये प्रत्येक जिले मे विकलांग बच्चों के लिये कम से कम एक विद्यालय अवश्य स्थापित किया जाय ।

ब) स्त्रियों की शिक्षा . Education of Women

स्त्री-शिक्षा के विभिन्न पक्षों एवं समस्याओं का अध्ययन करने के लिये तीन समितियाँ, श्रीमती दुर्गाबाई देशमुख; श्रीमती हंसा मेहता तथा श्री एम० भक्तवत्सलम् की अध्यक्षता मे, नियुक्त की गई थी । इन समितियों के विभिन्न सुझावों का आयोग ने अपने प्रतिवेदन मे यत्र-तत्र उल्लेख किया है । परन्तु उसने स्त्री शिक्षा के सम्बन्ध मे श्रीमती देशमुख की अध्यक्षता मे सुगठित 'राष्ट्रीय स्त्री-शिक्षा-परिषद' (National

Committee on Women's Education) के अधोलिखित सुझावों पर अधिक ध्यान देने के लिये कहा है :—

१. स्त्री-शिक्षा को आने वाले कुछ वर्षों में शिक्षा के सम्पूर्ण कार्य-क्रम का एक महत्त्वपूर्ण अंग बनाया जाय, और स्त्री-शिक्षा के मार्ग की समस्त बाधाओं को दूर करने के लिये निश्चित एवं महत्त्वपूर्ण क़दम उठाये जायें।
२. स्त्रियों तथा पुरुषों की शिक्षा के बीच जो खाई उत्पन्न हो गई है, उसे समाप्त करने के लिये प्रयास किये जायें।
३. स्त्री-शिक्षा के विस्तार के लिये उदार आर्थिक सहायता प्रदान की जाय।
४. केन्द्र तथा राज्य—दोनों में बालिकाओं तथा स्त्रियों की शिक्षा की देखभाल करने के लिये एक उपयुक्त प्रशासकीय संगठन का निर्माण किया जाय। इस संगठन में सरकारी तथा ग़ैर-सरकारी व्यक्तियों को प्रतिनिधित्व दिया जाय।
५. स्त्रियों के लिये अल्पकालीन रोज़गारों की व्यवस्था की जाय, जिससे वे घर के काम-काज से निबट कर इनको कर सकें। अविवाहित स्त्रियों के लिये पूर्ण-कालीन रोज़गारों की व्यवस्था की जाय।

(ग) पिछड़े वर्गों की शिक्षा : Education of Backward Classes

आयोग ने पिछड़े हुए वर्गों को शिक्षा के समान अवसरों के दिये जाने पर बल देते हुए अधोलिखित सुझाव दिये हैं —

१. अछूत जातियों की शिक्षा की जो योजनाएँ प्रचलित हैं, उनका और विस्तार किया जाय।
२. खानाबदोशों (Nomadics) तथा अर्द्ध-खानाबदोशों (Semi-Nomadics) को शिक्षा के लिये सुविधाएँ प्रदान की जायें।
३. सूचीबद्ध समुदायों (Denotified Communities) के छात्रों को छात्रावासों की सुविधाएँ प्रदान की जायें।

(घ) आदिवासियों की शिक्षा : Education of the Tribal People

आयोग के विचारानुसार आदिवासियों की शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाना आवश्यक है। यदि वह श्री यू॰ एन॰ ढेबर की अध्यक्षता में नियुक्त आयोग के सुझावों से पूर्णतया सहमत है, फिर भी उसने आदिवासियों की शिक्षा के सम्बन्ध में अधोलिखित कार्यक्रमों पर विशेष ध्यान देने को कहा है :—

१. प्राथमिक स्तर पर शैक्षिक सुविधाओं को सुधारा जाय और बिखरी हुई जनसंख्या वाले क्षेत्रों में 'आश्रम-विद्यालयों' (Ashram Schools) की स्थापना की जानी चाहिये।

यह निश्चय किया गया है कि इन स्कूलों को यथावत् चलने दिया जाय।[1] यह निश्चय क्यों किया गया है—इसका हम केवल अनुमान ही लगा सकते हैं। ये स्कूल असाधारण व्यक्तियों या संस्थाओं के द्वारा असाधारण लोगों के बच्चों के लिये चलाये जाते हैं। अतः इनको बन्द करने के लिये असाधारण से असाधारण शक्ति की आवश्यकता है।

शैक्षिक अवसरों में समानता स्थापित करने के लिये आयोग ने प्राथमिक स्तर से लेकर उच्च शिक्षा के स्तर तक के सम्बन्ध में बहुमूल्य सुझाव दिये हैं। शिक्षा को निःशुल्क कर दिया जाय और हो भी जानी चाहिये, शिक्षा के दूसरे खर्चों में कमी की जाय, क्योंकि ये खर्चे बहुत बढ़ गये हैं, छात्र वृत्तियों की ऐसी व्यवस्था की जाय कि कोई भी योग्य छात्र शिक्षा प्राप्त करने से वंचित न रह जाय; छात्रों को आवागमन की सुविधायें दी जायें, स्त्रियों, विकलांग बच्चों, आदिवासियों और पिछड़ी जातियों की शिक्षा के लिये अनवरत प्रयास किये जायें। वस्तुतः आयोग ने अपने सुझावों में शिक्षा के किसी भी क्षेत्र को अछूता नहीं छोड़ा है। यदि इन सुझावों के अनुसार कार्य किया गया, तो शिक्षा का कायाकल्प हो जायगा, वह सबके लिये सुलभ हो जायगी, उस पर किसी विशेष वर्ग का विशेष अधिकार नहीं रह जायगा और सब को सब प्रकार की शिक्षा प्राप्त करने का समान अवसर मिल जायगा।

छात्रवृत्तियों के सम्बन्ध में दिये जाने वाले सुझावों की जितनी प्रशंसा की जाय, उतनी ही कम है। छात्र-वृत्तियों के अभाव में होता क्या है ? जनसाधारण के योग्य बच्चों को भी निम्न प्रकार की शिक्षा प्राप्त करने के लिये बाध्य होना पड़ता है। उनके माता-पिता धन-देवता—कुबेर के कृपापात्र न होने के कारण दरिद्रता के दलदल में दबे रहते हैं, अतः वे अपने बच्चों को उत्तम प्रकार की शिक्षा देने की स्वप्न में भी कल्पना नहीं कर सकते हैं। उनके विपरीत हैं वे व्यक्ति, जिन पर देवी लक्ष्मी धन की वर्षा करती है। अतः वे अपने बच्चों को मँहगी से मँहगी शिक्षा देने में भी धन को व्यय करने में तनिक भी संकोच नहीं करते हैं। आयोग ने छात्रवृत्तियों का सुझाव देकर इस विषम स्थिति का रूप परिवर्तित करने का अभिनन्दनीय प्रयास किया है।

1. The Hindustan Times, August 23, 1967.

अध्याय ८

विद्यालय-शिक्षा : विस्तार की समस्याएँ

SCHOOL EDUCATION
PROBLEMS OF EXPANSION

पूर्व-विश्वविद्यालय-शिक्षा को एक क्रमिक इकाई के रूप मे स्वीकार किया जाना चाहिये। इस शिक्षा को विभिन्न अङ्गों मे, जैसे—पूर्व-प्राथमिक, निम्न एव उच्चतर प्राथमिक तथा निम्न एवं उच्चतर माध्यमिक—विभक्त किया जा सकता है। यद्यपि हमारे देश मे विद्यालय-शिक्षा का पर्याप्त रूप से विस्तार हुआ है, परन्तु अभी इसका विस्तार आवश्यकता के अनुसार नहीं हो पाया है। अत इसके विस्तार के लिये आयोग ने विभिन्न-अंगो से सम्बन्धित विचार व्यक्त किये हैं :—

१. पूर्व-प्राथमिक शिक्षा का विस्तार
Expansion of Pre-Primary Education

आयोग ने पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के विस्तार के लिये निम्नलिखित सुझाव दिये हैं :—

१. प्रत्येक राज्य के 'राजकीय शिक्षा-सस्थान' (State Institute of Education) में पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के लिये राज्य-स्तर का एक केन्द्र स्थापित किया जाय।

२. प्रत्येक जिले मे पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के विकास के लिये एक केन्द्र स्थापित किया जाय। इस केन्द्र का प्रमुख कार्य—पूर्व-प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों को प्रशिक्षित करना, इन विद्यालयों में कार्य करने वाले शिक्षको के कार्यों का निरीक्षण करना, उनका पथ-प्रदर्शन करना और उनके लिये 'अभिनवन पाठ्य-क्रमों' (Refresher Courses) का

आयोजन करना होना चाहिये । केन्द्र को, अभिभावकों को बालकों के पालन-पोषण सम्बन्धी बातों का भी ज्ञान देना चाहिये ।

३. व्यक्तिगत प्रबन्धकों को पूर्व प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना एवं संचालन के लिये प्रोत्साहित किया जाय और राज्य-सरकारों द्वारा उन्हें उदार आर्थिक सहायता दी जाय ।

४. पूर्व-प्राथमिक शिक्षा में परीक्षण (Experimentation) को प्रोत्साहित किया जाय, जिससे इसके प्रसार के लिये कम व्यय वाले साधनों का विकास किया जा सके ।

५. शिशुओं के खेल-केन्द्रों को प्राथमिक विद्यालयों से सम्बन्धित किया जाय ।

६. पूर्व-प्राथमिक विद्यालयों के कार्य-क्रम लचीले होने चाहिये । उनमें विभिन्न प्रकार की क्रियाओं—शारीरिक, खेल तथा सीखने से सम्बन्धित को स्थान दिया जाए । इसके अतिरिक्त, उनमें ज्ञानेन्द्रिय शिक्षा (Sensorial Education) को भी स्थान दिया जाय ।

७. राज्य तथा जिला-स्तरों पर खेल-केन्द्रों (Play Centres) की स्थापना की जाय । ये केन्द्र अनुसंधान करके पूर्व-प्राथमिक विद्यालयों के लिये उपयुक्त साहित्य तैयार करें और आदर्श पूर्व-प्राथमिक विद्यालयों का संचालन करें ।

समीक्षा

बालकों के शारीरिक, मानसिक और संवेगात्मक विकास के लिये पूर्व-प्राथमिक शिक्षा बहुत आवश्यक है । वस्तुतः यह उन बालकों के लिये सब से अधिक आवश्यक है, जिन्हें उपयुक्त पारिवारिक वातावरण प्राप्त नहीं हो पाता है । हमारे देश में स्वतन्त्रता-प्राप्ति से पूर्व इस शिक्षा की ओर कोई ध्यान नहीं दिया गया । केवल १९४४ में 'केन्द्रीय शिक्षा-सलाहकार-बोर्ड' ने यह स्वीकार किया था कि पूर्व-प्राथमिक शिक्षा को राष्ट्रीय शिक्षा-प्रणाली का महत्त्वपूर्ण अंग बनाया जाना चाहिये ।

स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बाद पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में प्रगति तो अवश्य हुई है, पर वह बहुत कम है । १९५०-५१ में भारत में केवल ३०३ पूर्व-प्राथमिक विद्यालय थे, जिनमें २८,००० छात्र अध्ययन कर रहे थे । १९६५-६६ में इनकी संख्या क्रमशः ३,५०० और २,५०,००० हो गई । इन विद्यालयों के अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्रों में २० हजार बालवाड़ियाँ थीं, जिनमें ६ लाख छात्र थे ।

इस प्रकार स्वतन्त्र भारत में पूर्व-प्राथमिक शिक्षा का विस्तार तो अवश्य हुआ है, पर आंकड़ों को देखने से बड़ी निराशा होती है । जिस देश की जनसंख्या आज लगभग ५० करोड़ है, उसमें केवल ८ लाख बच्चों के लिये पूर्व-प्राथमिक शिक्षा

की व्यवस्था है, जब कि यह शिक्षा उनके लिये बहुत आवश्यक है। इससे भी अधिक नराशा की बात यह है कि इस शिक्षा पर विदेशी मिशनरियों का प्रभुत्व है; और उनके द्वारा जिन विद्यालयों का सचालन किया जा रहा है, उनमें भारतीय संस्कृति और भारतीय परम्पराओं का नामोनिशान भी देखने को नहीं मिलता है। इससे उनमें पढ़ने वाले भारत के भावी नागरिकों का और अन्ततोगत्वा राष्ट्र का कितना अहित हो रहा है, इसका सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। ऐसी परिस्थिति में आयोग द्वारा प्रस्तावित सुझावों को अपना पथ-प्रदर्शक बनाना ही हमारे लिये श्रेयस्कर होगा।

२. प्राथमिक शिक्षा का विस्तार
Expansion of Primary Education

प्राथमिक शिक्षा के विस्तार के लिये आयोग ने नीचे लिखे सुझाव दिये हैं :—

१. सब बच्चों को १९७५-७६ तक ५ वर्ष की उत्तम और प्रभावशाली प्राथमिक शिक्षा दी जाय।
२. देश के सब भागों मे ७ वर्ष की ऐसी शिक्षा १९८५-८६ तक प्रदान की जाय। इस प्रकार १९८५-८६ तक सविधान द्वारा प्रतिपादित लक्ष्य को अवश्य प्राप्त किया जाय।
३. अपव्यय एव अवरोधन (Wastage and Stagnation) को रोकने पर बल दिया जाय। हमारा यह उद्देश्य होना चाहिये कि प्रथम कक्षा मे जो बालक प्रवेश लें, उनका ८० प्रतिशत भाग ७ वर्ष की अवधि में कक्षा ७ मे पहुँच जाय।
४. जो बालक कक्षा ७ की समाप्ति पर १४ वर्ष के नहीं हो पाते हैं और जो अपनी सामान्य शिक्षा को आगे नहीं चलाना चाहते हैं, उन्हें उस अवधि तक उनकी रुचि के अनुसार व्यावसायिक शिक्षा प्रदान की जाय।
५. प्रत्येक राज्य एव जिला अपने क्षेत्र मे प्राथमिक शिक्षा के विकास के निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिये भावी योजनाएँ बनाये। ये योजनाएँ स्थानीय परिस्थितियो को ध्यान मे रखकर बनाई जायें। राज्य सरकारें इन योजनाओं की पूर्ति के लिये आर्थिक सहायता प्रदान करें।
६. प्राथमिक विद्यालयों के विस्तार के लिये ऐसी योजना बनायी जाय कि प्रत्येक बालक को अपने घर से १ मील के घेरे मे लोअर प्राइमरी स्कूल और १ से ३ मील तक के घेरे में अपर प्राइमरी स्कूल मिल जाय।
७. उन बालकों के लिये अंशकालीन शिक्षा की व्यवस्था की जाय, जिन्होंने निम्न प्राथमिक शिक्षा प्राप्त कर ली हो और आगे अध्ययन नहीं करना चाहते हो।

८. संविधान द्वारा प्रतिपादित लक्ष्य की प्राप्ति के लिये बालिकाओं की शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाय। उनकी शिक्षा का विस्तार करने के लिये 'स्त्री-शिक्षा की राष्ट्रीय समिति' (National Committee on Women's Education) की सिफारिशों के अनुसार कार्य किया जाय।

९. *प्राथमिक शिक्षा का विस्तार उसके गुणात्मक पहलू से सम्बन्धित किया जाय। अतः विस्तार के लिये गुणात्मक पक्ष की अवहेलना न की जाय।*

समीक्षा

प्राथमिक शिक्षा का मुख्य उद्देश्य—व्यक्तियों को उत्तरदायी और उपयोगी नागरिक बनाना है। इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिये संविधान में १४ वर्ष की आयु तक के सब बालकों और बालिकाओं को नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा देने का सिद्धान्त प्रतिपादित किया गया, पर अभी तक इस ध्येय को प्राप्त नहीं किया जा सका है। अभी तक ६–११ वय-वर्ग के ७६·४% और ११–१४ वय-वर्ग के २८·६% बच्चों के लिये ही शिक्षा की व्यवस्था की जा सकी है। अतः यह आवश्यक है कि आयोग के सुझावों को मान्यता देकर १४ वर्ष तक की आयु के बालकों और बालिकाओं को शिक्षा देने के लिये सक्रिय पग उठाये जायें।

हमें यह जानकर बहुत संतोष हुआ है कि डा० सेन की अध्यक्षता में होने वाली केन्द्रीय शिक्षा परामर्शदाता बोर्ड की मीटिंग में यह निश्चय किया गया है कि प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य बनाने के लिये उन क्षेत्रों में विद्यालयों की स्थापना की जाय, जहाँ वे नहीं हैं।[1] पर ध्यान देने की बात यह है कि केवल विद्यालयों की स्थापना से ही प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य नहीं बनाया जा सकेगा। ऐसा करने के लिये कुछ अन्य दिशाओं में भी कार्य करना पड़ेगा।

३. माध्यमिक शिक्षा का विस्तार
Expansion of Secondary Education

आयोग का विचार है कि आने वाले कुछ वर्षों में धनाभाव के कारण राज्यों द्वारा माध्यमिक शिक्षा को सार्वभौमिक बनाना सम्भव नहीं है। इसलिए इस शिक्षा के विस्तार के लिये अधोलिखित सिद्धान्तों एवं उपायों के अनुसार कार्य किया जाय :—

१. *माध्यमिक विद्यालयों में छात्रों की संख्या को प्रशिक्षित व्यक्तियों की आवश्यकता के अनुसार नियंत्रित किया जाय।*

1. The Hindustan Times, August 23, 1967.

२. इस दृष्टिकोण से माध्यमिक शिक्षा को व्यावसायिक बनाया जाय, जिससे निम्न माध्यमिक स्तर पर २० प्रतिशत और उच्चतर-माध्यमिक स्तर पर ५० प्रतिशत छात्र व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त कर सकें।

३. माध्यमिक शिक्षा में अवसरों की समानता पर बल दिया जाय। इसके लिये इस स्तर पर अधिकाधिक छात्र-वृत्तियाँ प्रदान करने की व्यवस्था की जाय।

४. माध्यमिक शिक्षा के विस्तार में जो अड़चनें हैं, उन्हें दूर करने का प्रयास किया जाय।

५. लड़कियों, अछूत जातियों एवं जनजातियों में माध्यमिक शिक्षा के विस्तार के लिये विशेष कार्य-क्रमों का आयोजन किया जाय।

६. 'प्रतिभा' (Talent) के विकास के लिये वास्तविक रूप से प्रयास किया जाय।

७. अगले २० वर्षों में माध्यमिक शिक्षा की संख्या को नियमित किया जाय। इसके लिये माध्यमिक विद्यालयों की स्थापना के लिये उपयुक्त योजनाएँ बनाने, माध्यमिक शिक्षा के शिक्षण-स्तरों को ऊँचा उठाने तथा उपयुक्त एवं योग्य बालकों के चुनाव पर बल दिया जाय।

८. प्रत्येक जिले में माध्यमिक शिक्षा के विस्तार के लिये योजनाएँ बनायी जायें और उन्हें १० वर्ष की अवधि में पूर्ण रूप से कार्यान्वित किया जाय।

९. समस्त नवीन विद्यालयों द्वारा आवश्यक शिक्षा-स्तरों को पूर्ण किया जाय और प्रचलित विद्यालयों के स्तर को उच्च बनाया जाय।

१०. माध्यमिक विद्यालयों के लिये सर्वोत्तम छात्रों को चुना जाय। यह कार्य स्वःचयन (Self-Selection) के आधार पर निम्न माध्यमिक स्तर पर किया जाय।

११. निम्न तथा उच्चतर माध्यमिक स्तरों पर पूर्णकालीन तथा अंशकालीन व्यावसायिक शिक्षा के लिये सुविधाएँ प्रदान की जायें।

१२. केन्द्रीय सरकार द्वारा माध्यमिक विद्यालयों को व्यावसायिक बनाने के लिये राज्य-सरकारों को विशेष अनुदान दिया जाय।

१३. बालिकाओं की शिक्षा के विस्तार के लिये अगले २० वर्षों में महत्वपूर्ण कदम उठाये जायें, जिससे बालिकाओं तथा बालकों की शिक्षा का निम्न माध्यमिक स्तर पर अनुपात १:२ तथा उच्चतर माध्यमिक स्तर पर १:३ हो जाय।

१४. बालिकाओं के लिये पृथक् विद्यालयों की स्थापना पर बल दिया जाय और उनको आवास की सुविधाएँ भी दी जायें। इसके अतिरिक्त

बालिकाओं को अंशकालीन तथा व्यावसायिक शिक्षा की सुविधाएँ दी जायें।

१५. नवीन माध्यमिक विद्यालयों की स्थापना के लिए एक राष्ट्रीय नीति का अनुसरण किया जाय।

१६. व्यावसायिक स्कूलों की स्थापना उद्योगों के समीप की जाय।

समीक्षा

आयोग ने माध्यमिक शिक्षा के विस्तार के बारे में जो भी सुझाव दिये हैं, वे कुछ सीमा तक ठीक ही हैं। इसको कार्यान्वित करके माध्यमिक शिक्षा का विस्तार अवश्य हो जायगा, पर इस विस्तार का रूप उससे बिल्कुल भिन्न होगा, जिसका चित्र 'माध्यमिक शिक्षा-आयोग' ने अंकित किया है। 'शिक्षा-आयोग' ने 'माध्यमिक शिक्षा-आयोग' के बहु-उद्देशीय विद्यालयों के नव-निर्माण के बारे में एक शब्द भी नहीं लिखा है। अत: यदि सरकार ने 'शिक्षा-आयोग' के सुझावों को स्वीकार कर लिया, तो बहु-उद्देशीय विद्यालयों की स्थापना के लिये जो प्रयास किये गये हैं, वे व्यर्थ हो जायेंगे। इसमे कुछ दुख का अनुभव होता है, पर इसकी मात्रा यह विचार करने पर कुछ कम हो जाती है कि 'शिक्षा-आयोग' ने माध्यमिक स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा पर बल दिया है।

अध्याय ६

विद्यालय-पाठ्य-क्रम
SCHOOL CURRICULUM

१. विभिन्न स्तरों का पाठ्य-क्रम
Curriculum at Different Stages

आधुनिक वर्षों में ज्ञान के विकास तथा भौतिक, जैविक एवं सामाजिक विज्ञान की मूलभूत धारणाओं के पुनर्निर्माण के फलस्वरूप प्रचलित पाठ्य-क्रम में बहुत-से दोष आ गये हैं। दूसरे, शिक्षा-जगत में विभिन्न नवीन विचारधाराओं के फलस्वरूप यह माँग की जाने लगी है कि सामान्य माध्यमिक स्कूलों में प्रदान की जाने वाली शिक्षा की अवधि को बढ़ाया जाय। अत: इन दृष्टिकोणों से विद्यालय-पाठ्य-क्रम में सुधार करना आवश्यक हो गया है। आयोग ने इस सम्बन्ध में अधोलिखित सुझाव प्रस्तुत किये हैं :—

(अ) निम्न प्राथमिक स्तर का पाठ्य-क्रम (कक्षा १-४)
Curriculum at Lower Primary Stage (Classes I-IV)

आयोग ने कक्षा १—४ तक के लिये अधोलिखित पाठ्य-विषयों को निर्धारित किया है :—

१. एक भाषा—मातृभाषा या क्षेत्रीय या प्रादेशिक भाषा (Mother Tongue or Regional Language)
२. गणित (Mathematics)
३. वातावरण का अध्ययन (*Study of Environment*)—(कक्षा ३ और ४ में विज्ञान तथा सामाजिक अध्ययन पढ़ाया जाय)।
४. सृजनात्मक क्रियायें (Creative Activities)

५. कार्य-अनुभव तथा समाज-सेवा (Work-Experience and Social Service)
६. स्वास्थ्य-शिक्षा (Health Education)

(ब) उच्चतर प्राथमिक स्तर का पाठ्यक्रम (कक्षा ५-७)
Cirriculum at Higher Primary Stage (Classes V-VII)

१. दो भाषाएँ—(अ) मातृभाषा या प्रादेशिक भाषा, (ब) हिन्दी या अंग्रेजी।
नोट—एक तीसरी भाषा (अंग्रेजी, हिन्दी या प्रादेशिक भाषा) का अध्ययन वैकल्पिक आधार पर किया जा सकता है।

२. गणित
३. विज्ञान
४. सामाजिक अध्ययन (या इतिहास, भूगोल और नागरिक शास्त्र)
५. कला (Art)
६. कार्य-अनुभव और समाज-सेवा।
७. शारीरिक शिक्षा (Physical Education)
८. नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों की शिक्षा (Education in Moral and Spiritual Values)

(स) निम्न माध्यमिक स्तर का पाठ्यक्रम कक्षा ८-१०)
Curriculum at Lower Secondary Stage (Classes VIII-X)

१. तीन भाषाएँ—अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में सामान्य रूप से अधोलिखित भाषाएँ होनी चाहिये :—
   (क) मातृभाषा या प्रादेशिक भाषा।
   (ख) उच्च स्तर या निम्न स्तर की हिन्दी।
   (ग) उच्च या निम्न स्तर की अंग्रेजी।

हिन्दी-भाषी क्षेत्रों में सामान्यत. निम्नलिखित भाषाएँ होनी चाहिये :—
   (क) मातृभाषा या प्रादेशिक भाषा।
   (ख) अंग्रेजी (या हिन्दी यदि अंग्रेजी मातृभाषा के रूप में ले ली गई है।)
   (ग) हिन्दी के अतिरिक्त एक अन्य आधुनिक भारतीय भाषा।

नोट—शास्त्रीय भाषा का अध्ययन वैकल्पिक आधार पर उपरोक्त भाषाओं के अतिरिक्त किया जा सकता है।

२. गणित
३. विज्ञान
४. इतिहास, भूगोल तथा नागरिक-शास्त्र।

५. कला
६. कार्य-अनुभव तथा समाज-सेवा
७. शारीरिक शिक्षा
८ नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों की शिक्षा।

(द) उच्चतर माध्यमिक स्तर का पाठ्यक्रम (कक्षाएँ ११-१२)
Curriculum at Higher Secondary Stage (Classes XI-XII)

आयोग का विचार है कि प्रथम १० वर्ष की विद्यालय-शिक्षा को प्राप्त करने के पश्चात् हाई स्कूल परीक्षा ली जानी चाहिये। इसको पास करने के उपरान्त छात्र उच्चतर माध्यमिक स्तर में प्रवेश पा सकेंगे। इस स्तर तक छात्रों की विशेष रुचि एवं योग्यताओं का निर्माण हो चुकता है। अतः उपयुक्त मार्ग-प्रदर्शन एवं परामर्श के माध्यम से छात्रों को अपने भावी पाठ्यक्रम और व्यवसाय की ओर अग्रसर किया जाय। इस स्तर पर ५० प्रतिशत बालकों को व्यावसायिक पाठ्य-क्रम प्रदान किये जाने की व्यवस्था की जाय। शेष बालको के लिये सामान्य शिक्षा की व्यवस्था हो। आयोग ने इस स्तर के लिये सामान्य शिक्षा के पाठ्य-क्रम में अधोलिखित पाठ्य-विषयो को स्थान दिया है :—

१. कोई दो भाषाएँ—जिनमें कोई आधुनिक भारतीय भाषा, कोई आधुनिक विदेशी भाषा तथा कोई शास्त्रीय भाषा सम्मिलित हो।
२. अधोलिखित मे से कोई से तीन विषय चुने जायें :—
   (i) एक अतिरिक्त भाषा
   (ii) इतिहास
   (iii) भूगोल
   (iv) अर्थशास्त्र
   (v) तर्कशास्त्र (Logic)
   (vi) मनोविज्ञान
   (vii) समाजशास्त्र
   (viii) कला
   (ix) भौतिकशास्त्र
   (x) रसायनशास्त्र
   (xi) गणित
   (xii) जीव-विज्ञान
   (xiii) भूगर्भशास्त्र (Geology)
   (xiv) गृह-विज्ञान (Home Science)
३. कार्य-अनुभव तथा समाज-सेवा
४. शारीरिक-शिक्षा

५. कला या शिल्प (Art or Craft)
६ नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों की शिक्षा ।

समीक्षा

आयोग ने शिक्षा के सभी स्तरों के लिये पाठ्य-विषय निर्धारित किये हैं । इन विषयों में कुछ ऐसे हैं, जिनको इस समय हमारे विद्यालयों में नहीं पढ़ाया जा रहा है, जैसे—वातावरण का अध्ययन, सृजनात्मक क्रियायें, कार्य-अनुभव और समाज-सेवा, नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों की शिक्षा । यह कहना अनुचित न होगा कि आयोग ने इन विषयों को बहुत सोच-समझ कर रखा है । वातावरण का अध्ययन करके छात्र अपनी स्थानीय परिस्थितियों के बारे में बहुत-सी बातें जान सकेंगे । सृजनात्मक क्रियायें उनकी रचनात्मक शक्तियों का विकास करेंगी । कार्य-अनुभव उन्हें जीवन में प्रवेश करने पर लाभदायक सिद्ध होगा । समाज-सेवा उनमें समाज के प्रति प्रेम और सम्मान उत्पन्न करेगी ।

यह सब तो ठीक है, पर आयोग ने 'मुदालियर कमीशन' द्वारा प्रस्तावित 'विभिन्न पाठ्य-क्रम' (Diversified Curriculum) पर ऐसी काली कूची फेर दी है कि ये शब्द कहीं दिखाई ही नहीं देते हैं । 'विभिन्न पाठ्य-क्रम' की उपादेयता के बारे में हम 'माध्यमिक शिक्षा-आयोग' के अध्याय में लिख चुके हैं । यह पाठ्य-क्रम विभिन्न रुचियों, आवश्यकताओं और दृष्टिकोणों वाले छात्रों के लिये वरदान है । इससे उनकी स्वाभाविक शक्तियों का विकास हो सकता है, उनके जन्मजात गुणों की वृद्धि हो सकती है, उनकी क्षमताओं को उन्नत होने के लिये एक दिशा मिल सकती है । इन सब आशाओं पर 'शिक्षा-आयोग' ने पानी फेर दिया है । सम्भवतः आयोग ने 'विभिन्न पाठ्य-क्रम' के महत्त्व और उपयोगिता को नहीं समझा ।

उपरोक्त आधार पर हम यह कह सकते हैं कि आयोग द्वारा प्रस्तावित पाठ्य-क्रम में कोई असाधारण विशेषता नहीं पाई जाती है । वस्तुतः यह साधारण पाठ्य-क्रम से कुछ अच्छा और 'माध्यमिक शिक्षा-आयोग' द्वारा बनाये जाने वाले पाठ्य-क्रम से बहुत निम्न स्तर पर है ।

२. भाषाओं का अध्ययन
Study of Languages

आयोग ने पाठ्य-क्रम में निर्धारित की जाने वाली भाषाओं के बारे में निम्न-लिखित विचार व्यक्त किये हैं :—

(अ) त्रिभाषी फार्मूले में संशोधन
Amendment in the Three-Language Formula

आयोग का विचार है कि त्रिभाषा-सूत्र [illegible] के लागू होने में बहुत सी कठिनाइयाँ आयी हैं और यह सफलता भी प्राप्त नहीं कर सका है । अतः

असंतोष एवं विरोध की भावनाएँ उत्पन्न हो गई हैं। इस स्थिति में सुधार करने के लिये इस फार्मूले में संशोधन किया जाना आवश्यक है। आयोग के विचार से यह संशोधन अग्रगामी सिद्धान्तों के आधार पर किया जाना चाहिये :—

१. 'हिन्दी' संघ की राजभाषा के रूप में मातृभाषा के बाद महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त करे।
२. अंग्रेजी का ज्ञान छात्रों के लिये लाभप्रद होगा।
३. तीन भाषाओं को सीखने के लिये सबसे उपयुक्त स्तर—निम्नतर माध्यमिक स्तर है।
४. हिन्दी या अंग्रेजी का शिक्षण उस समय प्रारम्भ किया जाय, जब उनके लिये अधिकाधिक प्रेरणा एवं आवश्यकता का अनुभव किया जाय।
५. किसी भी स्तर पर चार भाषाओं को पढ़ाना अनिवार्य न बनाया जाय।

आयोग ने उपरोक्त सिद्धान्तों के आधार पर त्रिभाषी फ़ार्मूले का रूप इस प्रकार अंकित किया है :—

(अ) मातृभाषा या प्रादेशिक भाषा।
(ब) संघ की राजभाषा या सह-राजभाषा जब तक यह है।
(स) एक आधुनिक भारतीय या योरोपियन भाषा जो छात्र द्वारा पाठ्य-क्रम में से न चुनी गई हो और शिक्षा का माध्यम न हो।

आयोग ने उपरोक्त फार्मूले का सुझाव इसलिये दिया, जिससे हिन्दी का अध्ययन किसी के लिये अनिवार्य न रहे। इस सिफ़ारिश के बारे में अपने विचारों को व्यक्त करते हुए श्री चगला ने कहा—"जहाँ तक मैं समझता हूँ, इस सुझाव के पीछे यह धारणा है कि हिन्दी का प्रसार छात्र को हिन्दी चुनने या न चुनने की स्वतन्त्रता देने से होगा, उस पर हिन्दी लादने से नहीं। आयोग ने भी कहा है कि हिन्दी के स्वतन्त्र अध्ययन का एक राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम बनाया जाय, पर अनिच्छुक लोगों पर हिन्दी की पढ़ायी लादी न जाय।"

(ब) हिन्दी का स्थान
Place of Hindi

आयोग ने कहा है कि अंग्रेजी को उच्च शिक्षा में बौद्धिक आदान-प्रदान की भाषा का काम करना होगा। परन्तु अंग्रेजी अधिकांश भारतीय जनता के लिये विनिमय की भाषा नहीं बन सकती है। यह भाषा कालान्तर में हिन्दी ही होगी। क्योंकि यह संघ की राजभाषा और जनता की विनिमय की भाषा है; इसलिये इसे भारत के सभी भागों में फैलाने के लिये कार्य किया जाना चाहिये। आयोग का विचार है कि इसका पक्ष तभी उच्च एवं महत्त्वपूर्ण बनेगा, जब इसे अनिच्छुक लोगों पर लादा नहीं जायगा, वरन् उनमें इसके अध्ययन के लिये प्रेरणा उत्पन्न की जायगी।

(स) विभिन्न भारतीय भाषाओं का स्थान
Place of Different Indian Languages

आयोग की राय में भारतीय भाषाओं का अध्ययन लिपियों के अन्तर के कारण कठिन है। इसलिये प्रत्येक आधुनिक भाषा का कुछ साहित्य देवनागरी और रोमन-लिपि में प्रकाशित किया जाय।

आयोग ने कहा है कि स्कूलों में भाषा की शिक्षा की नई नीति इसलिये आवश्यक हो गई है, क्योंकि अंग्रेजी का अनिश्चित काल के लिये प्रतिष्ठित सह-राजभाषा के रूप में सबसे अधिक प्रयोग होना है। इसके अतिरिक्त, राष्ट्रीय एकीकरण के लिये एक समुचित भाषा-नीति का होना आवश्यक है। अतः मातृभाषा को स्कूल, कॉलेज और उच्च शिक्षा के स्तर पर शिक्षा का माध्यम बनाया जाय। 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' यह लक्ष्य १० वर्ष के भीतर प्राप्त कर ले। प्रादेशिक भाषाएँ, प्रदेशों में प्रशासन का माध्यम बना दी जायें, ताकि प्रादेशिक भाषाओं के माध्यम से पढ़े-लिखे लोगों को ऊँची नौकरियों से वंचित न रहना पड़े।

आयोग ने कहा है कि हिन्दी के अतिरिक्त सभी आधुनिक भारतीय भाषाओं का विकास किया जाय, ताकि एक राज्य से दूसरे में विनिमय के लिये इन भाषाओं का प्रयोग किया जा सके। प्रत्येक प्रदेश में कुछ ऐसे लोग हैं, जो अन्य भारतीय भाषाएँ भी जानते हैं। अतः स्कूलों और कॉलेजों में आधुनिक भारतीय भाषाओं को पढ़ाने की समुचित व्यवस्था की जाय और विश्वविद्यालयों में बी० ए० और एम० ए० तक एक साथ दो आधुनिक भारतीय भाषाएँ पढ़ना सम्भव होना चाहिये।

(द) अंग्रेजी पर बल
Stress on English

आयोग ने अखिल-भारतीय शिक्षा-संस्थाओं और विश्वविद्यालयों में अंग्रेजी को ही शिक्षा का माध्यम बनाये रखने पर जोर दिया है। अंग्रेजी की पढ़ाई स्कूल स्तर से ही जारी रखनी चाहिए। सर्वोत्तम कोटि के स्नातकोत्तर-अध्ययन और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के शोध-कार्य के लिए ६ महाविश्वविद्यालय, जिनमें अंग्रेजी भाषा-शिक्षा का माध्यम हो, विकसित किए जायें। इन्हें वर्तमान विश्वविद्यालयों में से ही चुना जाय और इनमें एक प्रौद्योगिक विभाग का तथा एक कृषि-विश्वविद्यालय हो। इन विशाल विश्वविद्यालयों को बनाने के लिये सारे देश से चुने हुए अध्यापक रखे जायें और वे अखिल भारतीय स्तर पर चुनाव करके छात्रों को प्रवेश दें।

आयोग ने यह भी कह दिया है कि अखिल-भारतीय संस्थाओं में अंग्रेजी ही शिक्षा का माध्यम रहेगी। इसकी जगह हिन्दी को लाने पर बाद में विचार किया जाय और उसके आ जाने पर कुछ ऐसी व्यवस्था रहे कि कोई अहित न होने पाये।

(घ) शास्त्रीय भाषाओं का अध्ययन
Study of Classical Languages

आयोग ने शास्त्रीय भाषाओं के अध्ययन के महत्त्व को स्वीकार किया है। उसने यह भी स्वीकार किया है कि राष्ट्रीय शिक्षा-प्रणाली मे संस्कृत विशेष अधिकार रखती है। परन्तु आयोग इस प्रस्ताव से सहमत नहीं है कि संस्कृत या अन्य किसी शास्त्रीय भाषा को 'त्रिभाषी फार्मूले' मे स्थान प्रदान किया जाय। आयोग का विचार है कि इस फार्मूले मे केवल आधुनिक भारतीय भाषाओं को ही स्थान दिया जाय। आयोग इस बात से सहमत है कि मातृभाषा तथा संस्कृत का एक मिश्रित पाठ्य-क्रम बनाया जा सकता है। परन्तु जनमत इसके पक्ष मे नही है। अतः इन परिस्थितियों मे शास्त्रीय भाषाओं को विद्यालय-पाठ्य-क्रम मे केवल वैकल्पिक विषय के रूप स्थान दिया जा सकता है। यह स्थान कक्षा ८, तथा आगे की कक्षाओं में हो।

आयोग संस्कृत विश्वविद्यालयों के विचार को स्वीकार नही करता है। अतः कोई नवीन संस्कृत विश्वविद्यालय स्थापित न किया जाय। संस्कृत तथा अन्य शास्त्रीय भाषाओं के अध्ययन के लिये सभी विश्वविद्यालयो मे, और कुछ महत्त्वपूर्ण विश्वविद्यालयो मे संस्कृत के उच्च अध्ययन की व्यवस्था की जाय।

समीक्षा

आयोग ने विद्यालयो मे भाषाओं के अध्ययन के बारे मे जो सुझाव दिये हैं, उनका मिश्रित स्वागत किया गया है, उनकी प्रशंसा भी की गई है, और तीक्ष्ण आलोचना भी। हम इन पर नीचे प्रकाश डाल रहे हैं —

१. व्यावहारिक सुझाव—"National Solidarity" ने अपने ७ जुलाई, १९६६ के अंक में लिखा—"आयोग ने व्यावहारिक त्रिभाषी फार्मूले का सुझाव दिया है। मातृभाषा, विश्वविद्यालय-स्तर तक शिक्षा का माध्यम होगी एवं हिन्दी या अंग्रेजी और एक अन्य भाषा, जो एक आधुनिक भारतीय या यूरोपियन भाषा होगी, का अध्ययन अनिवार्य होगा। पर यह संतुलित फ़ार्मूला भी राजनैतिक वाद-विवाद का कारण बन सकता है। पर हम इससे अधिक अच्छे फ़ार्मूले की कल्पना नहीं कर सकते हैं। हिन्दी के प्रेमियों को आयोग के इस परामर्श पर ध्यान देना होगा कि हिन्दी के शिक्षण पर बल न दिया जाय, वरन् हिन्दी के प्रसार के लिये स्वेच्छा से कार्य किया जाय। केवल इसी दृष्टिकोण को अपनाने से हिन्दी अपनी उचित स्थिति को प्राप्त करेगी।"

२. अंग्रेजी, संयोजक भाषा के रूप मे—"Educational India" ने अपने जुलाई, १९६६ के अंक मे आयोग के भाषा-सम्बन्धी सुझावों को उत्तम बताते हुए लिखा—"आयोग ने भाषा-सम्बन्धी विवाद को समाप्त करने का प्रयास किया है।

उसने इस बात पर बल दिया कि १० वर्ष के अन्दर प्रादेशिक भाषायें-विश्वविद्यालय स्तर तक शिक्षा की माध्यम हो जायें। उसने यह भी सुझाव दिया है कि उस समय तक अंग्रेजी, संयोजक भाषा (Link Language) रहे और इसलिये इसकी शिक्षा प्रारम्भिक स्तर से दी जाय। उसने यह कहकर कि—हिन्दी को अहिन्दी छात्रों के अध्ययन का अनिवार्य विषय न बनाया जाय—त्रिभाषी फार्मूले में संशोधन करने का सुझाव दिया है। इससे दक्षिण के लोगों को, जिन्होंने हिन्दी को अनिवार्य बनाये जाने का विरोध किया है, संतोष होना चाहिये। इतना सब कुछ होते हुए भी आयोग के विचार इस सम्बन्ध में स्पष्ट हैं कि अंग्रेजी सदैव संयोजक भाषा नहीं रह सकती है और कभी न कभी अंग्रेजी का स्थान हिन्दी को देना पड़ेगा।"

३. हिन्दी के विरोध और राष्ट्रीय भाषा की आवश्यकता में सामञ्जस्य—"The Patriot" ने अपने २ जुलाई, १९६६ के अंक में लिखा—"आयोग के प्रतिवेदन के विवाद-ग्रस्त भाग का सम्बन्ध भाषा के प्रश्न से है। इस प्रश्न पर आयोग ने कुछ क्षेत्रों में हिन्दी के प्रबल विरोध और राष्ट्रीय एकीकरण के लिये राष्ट्रीय भाषा के विकास की आवश्यकता के मध्य सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास किया है। आयोग का यह सुझाव, कि प्रादेशिक भाषा विद्यालय और उच्च स्तर पर शिक्षा का माध्यम हो, अद्वितीय है। जहाँ तक अखिल भारतीय संस्थाओं की बात है, अंग्रेजी का स्थान यथावत् रहेगा, पर अन्त में इसका स्थान हिन्दी के द्वारा ले लिया जायगा।"

४. मातृभाषा : शिक्षा का सर्वोत्तम माध्यम—"The Hindustan Times" के ७ जुलाई, १९६६ के अङ्क में पजाब के शिक्षा-विद् श्री बदलू राम गुप्त ने लिखा—"आयोग इस बात के लिये बधाई का पात्र है कि उसने शिक्षा के सब स्तरों पर मातृभाषा को शिक्षा का सर्वोत्तम माध्यम स्वीकार किया है। आयोग ने १० वर्ष के अन्दर अंग्रेजी के स्थान पर प्रादेशिक भाषाओं को प्रतिष्ठित करने का सुझाव देकर एक जटिल समस्या का समाधान कर दिया है।"

५. हिन्दी का अध्ययन : एक वैकल्पिक विषय के रूप में—उस्मानिया विश्वविद्यालय के उप-कुलपति डा० डी० एस० रेडी (D. S. Reddy) का कथन है—"प्रतिवेदन में जितनी सिफ़ारिशें हैं, उनमें सब से अधिक रचनात्मक यह है कि हिन्दी के अध्ययन को अनिवार्य न बनाकर, वैकल्पिक बनाया जाय। इस सुझाव से उस सभी आलोचना का अन्त हो जाना चाहिये, जो इस समय त्रि-भाषी फ़ार्मूले के कारण हो रही है।"

६. विश्व-भाषाओं का शैक्षिक महत्त्व—"Deccan Chronicle" ने अपने १७ जुलाई, १९६६ के अङ्क में लिखा—"इस सुझाव का, कि चुने हुए स्कूलों और विश्वविद्यालयों में अन्य विश्व-भाषाओं (अंग्रेजी के अतिरिक्त) को शिक्षा का माध्यम बनाया जा सकता है, महान् शैक्षिक महत्त्व है।"

७. **संस्कृत की अवेहलना**—आयोग ने संस्कृत की अवहेलना की है। उसने कहा कि कोई नया संस्कृत विश्वविद्यालय स्थापित न किया जाय। उसने यह भी कहा है कि संस्कृत-अरबी जैसी प्राचीन भाषायें आठवें दर्जे से केवल वैकल्पिक रूप में पढ़ाई जायें और कुछ चुने हुए विश्वविद्यालयों में इनके अध्ययन-केन्द्र खोल दिये जायें।

आयोग के उपरोक्त विचार की निन्दा करते हुए दिल्ली विश्वविद्यालय के संस्कृत के रीडर (Reader) डा० चनाना (Chanana) ने "The Patriot" के ४ जुलाई, १९६६ के अङ्क मे लिखा—"जिस व्यक्ति को भी तथ्यों का ज्ञान है, वह इस बात को अस्वीकार नहीं कर सकता है कि भारतीय संस्कृति मे सस्कृत ने महान् योग दिया है। भारतीय जीवन का ऐसा कोई भी अङ्ग नहीं है, जिस पर संस्कृत का गहरा प्रभाव न पड़ा हो। भारत का अधिकांश प्राचीन साहित्य, सस्कृत मे ही सुरक्षित है। आयोग ने इन महत्त्वपूर्ण बातों पर ध्यान नहीं दिया।"

८. **हिन्दी की अवहेलना**—आयोग ने हिन्दी की स्पष्ट रूप से अवहेलना की है। इस सम्बन्ध मे "The Hinnustan Times" ने अपने ७ जुलाई, १९६६ के अङ्क में लिखा—"त्रि-भाषी फ़ार्मूले के अन्तर्गत शिक्षा-आयोग ने अंग्रेजी और हिन्दी के अध्ययन को वैकल्पिक रखा है। यह सुझाव अंग्रेजी के पक्ष और हिन्दी के विपक्ष में है। इस समय उच्च भारतीय नौकरियों के लिये जो परीक्षायें ली जाती हैं, उनका माध्यम अंग्रेजी है। इसलिये कोई भी छात्र अंग्रेजी की अवहेलना नहीं कर सकता है। हिन्दी राज-भाषा तभी बन सकती है, जब उसे सम्पूर्ण देश के स्कूलों में अनिवार्य विषय के रूप में पढ़ाने का प्रयास किया जाय।"

९. **संशोधित फ़ार्मूला : राष्ट्र और संविधान के विरुद्ध**—अखिल-भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष, सेठ गोविन्द दास का कथन—"मैं यह नहीं समझ सकता हूँ कि छात्रों को पढ़ाये जाने के लिये अंग्रेजी को अनिवार्य विषय क्यों बनाया जाय। मैं अंग्रेजी या किसी भी दूसरी भाषा का विरोधी नहीं हूँ, पर इस सम्बन्ध में किसी तरह की जबरदस्ती नहीं होनी चाहिये। आयोग ने त्रि-भाषी फ़ार्मूले के बारे में एक संशोधन का सुझाव दिया है, जिसका अभिप्राय यह है कि छात्रों के लिये हिन्दी का पढ़ना आवश्यक नहीं होगा, जब कि वैधानिक रूप से हिन्दी राष्ट्र-भाषा है। अत: मेरे विचार से आयोग द्वारा प्रस्तावित संशोधित फ़ार्मूला पूर्ण रूप से राष्ट्र और संविधान के विरुद्ध है।"

१०. **अन्तर्राष्ट्रीय षड्यन्त्र से नाता**—"नवभारत टाइम्स" के १ जुलाई, १९६६ के अङ्क में श्री प्रकाशवीर शास्त्री ने लिखा—"भारत में अनिश्चित काल तक अंग्रेजी को बनाये रखने की सिफारिश करके आयोग ने एक अन्तर्राष्ट्रीय षड्यन्त्र से नाता जोड़ लिया है। यह प्रतिवेदन चौंकाने वाला तो है ही, पर हैरानी में डालने वाला नहीं, क्योंकि जिस ढंग से आयोग का निर्माण किया गया, उससे और अधिक आशा भी क्या की जा सकती थी।"

(द) कला की शिक्षा तथा पाठ्य-क्रम सहगामी क्रियाएँ
Art Education & Co-Curricular Activities

आज के युग मे अन्वेषण एवं आविष्कार पर बल दिया जा रहा है। अतः शि सृजनात्मक अभिव्यक्ति के लिये अधिक महत्त्वपूर्ण है। परन्तु आज ललित-कला को हेय दृष्टि से देखा जाता है, क्योंकि वे परीक्षा के विषय नहीं हैं। शिक्षा कलाओं का अभाव सौन्दर्यात्मक मूल्यों के ह्रास के लिये उत्तरदायी है। अतः आयो का विचार है कि भारत-सरकार कला की शिक्षा वर्तमान स्थिति की जाँच करने लिये एक विशेष समिति की नियुक्ति करे और इसके विकास के लिये समस्त सम्भावनाओ और साधनों का उपयोग करे। देश के विभिन्न भागो में 'बाल-भवन (Bal Bhavans) की स्थापना की जाय और इस कार्य मे स्थानीय समाज का पू सहयोग प्राप्त किया जाय। विश्वविद्यालय-स्तर पर कला-विभागों की स्थापना की जाय और अनुसन्धान कार्यों को प्रोत्साहन दिया जाय।

सृजनात्मक अभिव्यक्ति (Creative Expression) के विकास के लि विद्यालय मे विभिन्न प्रकार के प्रिय-कार्यों (Hobbies), वाद-विवाद प्रतियोगिताओं, नाटकों आदि की व्यवस्था की जाय। इसके अतिरिक्त विद्यालय अन्य प्रकार की पाठ्य-क्रम-सहगामी क्रियाओ का आयोजन करे। परन्तु इनके आयोजन मे छात्रों की रुचियों एवं अभिरुचियों को ध्यान मे रखा जाय।

समीक्षा

आयोग ने विद्यालयों में जिन अन्य विषयों के अध्ययन की सिफारिश की है, उनके महत्त्व को अस्वीकार नहीं किया जा सकता है। आज के वैज्ञानिक युग में विज्ञान और गणित के अध्ययन की अवहेलना नहीं की जा सकती है, इनका अध्ययन करके ही देश की उन्नति का मार्ग प्रशस्त होगा। स्कूल के छात्रों के लिये सामाजिक विषयों का अध्ययन अति आवश्यक है। इसका अध्ययन करके ही वे समाज के महत्त्व, समाज में अपने स्थान, सामाजिक रीतियों और प्रथाओं की आवश्यकता और अपने कर्त्तव्यों, अधिकारों तथा उत्तरदायित्वों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे। शारीरिक शिक्षा हमारे विद्यालयों के छात्रो को स्वस्थ बनायेगी और स्वस्थ बनकर ही वे नागरिकों के रूप में देश की रक्षा का भार अपने कन्धों पर ले सकेंगे। उनमें निहित सौन्दर्यात्मक मूल्यों का विकास करने के लिये कला के शिक्षण और पाठ्य-सहगामी क्रियाओं का आयोजन अनिवार्य है।

४. बालकों तथा बालिकाओं के पाठ्य-क्रमों में विभिन्नता
Differentiation of Curricula For Boys and Girls

इस सम्बन्ध में श्रीमती हंसा मेहता (Smt. Hansa Mehta) की अध्यक्षता में नियुक्त की गई समिति ने महत्त्वपूर्ण सुझाव दिये। समिति का विचार है कि

लोकतन्त्रीय समाजवादी समाज मे शिक्षा वैयक्तिक क्षमताओं, रुचियों एवं मनोवृत्तियों से सम्बन्धित है। अत. लिंग के आधार पर ऐसे समाज मे पाठ्य-क्रम मे विभिन्नता नहीं लायी जानी चाहिये। शिक्षा-आयोग इन सुझावो से सहमत है, और इसीलिये उसने कक्षा १० तक सभी छात्रों के लिये एक-सा पाठ्य-क्रम निर्धारित किया है। फिर भी बालको तथा बालिकाओ के पाठ्य-क्रमो मे विभिन्नता रखने के विचार से आयोग ने निम्नलिखित सुझाव दिये हैं :—

१. गृह-विज्ञान (Home Science) को उच्चतर माध्यमिक स्तर पर वैकल्पिक विषय के रूप मे रखा जाय। यद्यपि यह विषय बालिकाओ में अधिक लोकप्रिय है, फिर भी इसे उनके लिये अनिवार्य न बनाया जाय।
२. संगीत तथा ललित कलाएँ भी बालिकाओं मे अधिक लोकप्रिय हैं। अत: इनके अध्ययन के लिये विशेष सुविधाएँ प्रदान की जायँ।
३. बालिकाओ को विज्ञान एव गणित विषयो को लेने के लिये प्रोत्साहित किया जाय, और उन्हें इनके अध्ययन के लिये विशेष सुविधाएँ दी जायँ।
४. विज्ञान तथा गणित के लिये अध्यापिकायें तैयार करने के लिये विशेष प्रयास किये जायँ।

समीक्षा

प्रकृति ने पुरुष और स्त्री को विभिन्न रूपों में और विभिन्न कार्यों के लिये निर्मित किया है। अतः दोनो को उनके लिये तभी तैयार किया जा सकता है, जब दोनों के लिये विभिन्न प्रकार की शिक्षा की व्यवस्था हो। क्योंकि यह बात कक्षा १० तक सम्भव नहीं है, इसलिये आयोग ने बालको और बालिकाओं के लिये समान पाठ्य-क्रम निर्धारित किया है। फिर भी आयोग ने बालिकाओं की रुचियों और आवश्यकताओ को ध्यान में रखकर उनके लिये गृह-विज्ञान, संगीत और ललित-कलाओं के शिक्षण की व्यवस्था किये जाने पर बल दिया है। आयोग ने इनमे से किसी भी विषय को अनिवार्य नहीं बनाया है, पर इस बात की आशा व्यक्त की है कि बालिकायें इन विषयो का अधिक से अधिक सख्या में अध्ययन करेंगी। ऐसा करना उचित ही था, क्योंकि शैक्षिक अवसरों की समानता से बालिकाओ को वंचित करना उचित न होता।

अध्याय १०

शिक्षण-विधियाँ, मार्ग-प्रदर्शन और मूल्यांकन

TEACHING METHODS, GUIDANCE & EVALUATION

१. शिक्षण-विधियों के दोष
Defects in Teaching Methods

आयोग हमारे विद्यालयों मे प्रयोग की जाने वाली शिक्षण-विधियों के दोष से अनभिज्ञ नहीं था। उसने लिखा कि भारतीय स्कूलों की दोषपूर्ण कक्षा-शिक्षण की विधियो, रीतियों एवं प्रक्रियाओ मे सुधार करने के लिये विभिन्न कदम उठाये गये हैं। उदाहरणार्थ—प्राथमिक विद्यालयो मे बेसिक शिक्षा द्वारा परिवर्तन लाने के लिये प्रयास किये गये हैं। 'माध्यमिक शिक्षा-आयोग' ने गतिशील एवं क्रियात्मक शिक्षण-विधियों के प्रयोग पर बल दिया। एक शतक से विभिन्न सेमिनारो, वर्कशापों, अभिनवन कोर्सों तथा समर इन्सटीट्यूट्स के माध्यम से शिक्षको को नवीन शिक्षण-विधियों तथा उनकी गतिशीलता से परिचित कराने का प्रयास किया जा रहा है। फिर भी हमारे अधिकांश विद्यालयो में अभी तक परम्परागत विधियो का अनुसरण किया जा रहा है। आयोग के मतानुसार इसके चार प्रमुख कारण हैं :—

प्रथम—शिक्षकों की निम्न क्षमता, विषय के ज्ञान का छिछलापन, तथा असंतोषजनक व्यावसायिक प्रशिक्षण; द्वितीय—शिक्षण-विधियो के क्षेत्र में शैक्षिक-अनुसन्धान के विकास का अभाव; तृतीय—वर्तमान शिक्षा-प्रणाली का रूढ़िबद्ध होना; तथा चतुर्थ—नवीन एवं गतिशील शिक्षण-विधियो के प्रसारण में प्रशासकीय अधिकारियों की असफलता।

२. शिक्षण-विधियों में सुधार
Improvement in Teaching Methods

आयोग ने शिक्षण-विधियो में सुधार करने के लिए निम्नलिखित सुझाव दिये हैं :—

१. शिक्षण-विधियों मे लचीलेपन तथा गतिशीलता (Elasticity and Dynamism) को स्थान प्रदान किया जाय। इसके लिये शिक्षक वैयक्तिक रूप से महत्त्वपूर्ण कदम उठायें। यदि वे शिक्षण-प्रक्रियाओं में परिवर्तन लाने की भावना रखते हैं, तो उन्हें ऐसा करने के लिये दृढ़ता से कार्य करना चाहिये और प्रशासकीय अधिकारी उन्हें ऐसा करने के लिये प्रोत्साहन दें तथा उपयुक्त सुविधाएँ प्रदान करें।
२ प्रधानाध्यापक तथा अन्य शिक्षा-अधिकारी प्रयोग एवं सुधार के लिये उपयुक्त वातावरण का निर्माण करें।
३. शिक्षा मे गतिशीलता लाने के लिये शिक्षको में पहलकदमी, परीक्षण, तथा सृजनात्मकता के गुणो का विकास किया जाय।
४. नवीन शिक्षण-विधियो के प्रसार के लिये अभिनवन पाठ्य-क्रमो, *वर्कशापो, प्रदर्शनों, परीक्षणो, विचार-सम्मेलनों, सेमिनारो आदि का* आयोजन किया जाए। इनके अतिरिक्त, फिल्म, टेलीविजन, रेडियो, टेपरिकार्डर आदि का प्रयोग किया जाय।
५. अनुसन्धान कार्य के लिये व्यवस्था की जाय।

समीक्षा

आयोग ने शिक्षण-विधियों मे सुधार करने का बहुत बड़ा उत्तरदायित्व शिक्षको पर रखा है। वे ऐसा करने के लिये महत्त्वपूर्ण कदम उठायें, दृढ़ता से कार्य करें एवं उनमें पहलकदमी और सृजनात्मकता आदि के गुण हो। शिक्षक ऐसा कर सकते हैं और वे अपने मे इन गुणों का विकास कर सकते हैं। पर जिन सीमाओं में वे प्रशिक्षण-कार्य करते हैं, उनमें ऐसा किया जाना कठिन ही नहीं वरन् असम्भव है। उनकी योग्यता और कार्य-कुशलता की दो कसौटियाँ हैं : पहली—वे प्रधानाध्यापक और विद्यालय-प्रबंधक को अपनी नौकरी बनाये रखने के लिये कितना प्रयास कर सकते हैं। यहाँ हम ग़ैर-सरकारी स्कूलों के शिक्षको के बारे में लिख रहे हैं, क्योंकि हमारे देश में ऐसे ही स्कूलो की सख्या अधिक है। दूसरी—उनके द्वारा पढ़ाये जाने वाले कितने छात्र परीक्षा मे उत्तीर्ण होते हैं।

इन दोनों बातों का परिणाम क्या होता है ? कक्षा के अन्दर अध्यापक उन विधियों का प्रयोग करते हैं, जिनसे उनके अधिक से अधिक छात्र परीक्षा मे उत्तीर्ण हों। कक्षा से बाहर वे इस बात का प्रयास करते हैं कि वे अपने प्रधानाध्यापक और [illegible] किस प्रकार बन सकते हैं। तो क्या ऐसी परिस्थितियों मे वे

शिक्षण-विधियों में सुधार करने की बात सोच सकते हैं ? यदि जैसा कि आयोग ने लिखा है—सेमिनारो, रेडियो आदि की व्यवस्था कर दी गई, तो भी इनका शिक्षण-विधियों पर कोई प्रभाव नही पडेगा । यदि हम उनमे वास्तव मे सुधार करना चाहते हैं, तो हमें पहले अध्यापकों की स्थिति और परीक्षा-पणाली मे परिवर्तन करना होगा।

३. पाठ्य-पुस्तकें, शिक्षक-निर्देश-पुस्तकें व शिक्षण-सामग्री
Text-books, Teachers' Guides & Materials

आयोग का विचार है—"एक उत्तम पाठ्य-पुस्तक, जो एक योग्य एवं प्रतिभाशाली विशेषज्ञ द्वारा लिखी गई है और मुद्रण, चित्र एव अन्य दृष्टिकोण से उपयुक्त रूप मे प्रकाशित की गई है, छात्रों की रुचियों को प्रेरित करती है तथा शिक्षक को अपने कार्य मे पर्याप्त रूप से सहायता प्रदान करती है । उत्तम पाठ्य-पुस्तकें तथा अन्य शिक्षण-सामग्री शिक्षण के स्तरों को उच्च बनाने मे बहुत ही महत्व-पूर्ण कार्य करती हैं ।" दुर्भाग्यवश हमारे यहाँ विद्यालय के बहुत से विषयो मे पाठ्य-पुस्तकें बडी ही निम्न श्रेणी की हैं । आयोग के अनुसार इसके कारण अधोलिखित हैं :

१. पाठ्य-पुस्तक लिखने मे उच्च श्रेणी के विद्वानो द्वारा अरुचि प्रगट की जाती है । इसलिये सामान्यतः पाठ्य-पुस्तकें उन व्यक्तियों के द्वारा लिखी जाती हैं जिनमे इस कार्य को करने के लिये उपयुक्त योग्यता नहीं होती है ।
२. पाठ्य-पुस्तको के चुनाव मे बहुत-सी बुराइयो का प्रचलन है ।
३. बहुत से प्रकाशको द्वारा बेईमानी और चालाकी का प्रयोग किया जाता है ।
४. पाठ्य-पुस्तको के निर्माण एव प्रकाशन मे अनुसन्धान का अभाव है ।
५. व्यक्तिगत प्रकाशकों द्वारा शिक्षक-गाइड (Teacher's Guide) ऐसी सहायक पुस्तकों का प्रकाशन नहीं किया जाता है ।

आयोग ने पाठ्य-पुस्तकों की निम्न स्थिति मे सुधार करने के लिये अधोलिखित सुझाव दिये :—

१. राष्ट्रीय स्तर पर पाठ्य-पुस्तकों के निर्माण के लिये एक विस्तृत कार्यक्रम तैयार किया जाय ।
२. पाठ्य-पुस्तकों को लिखने के लिये देश के प्रतिभाशाली व्यक्तियों को प्रोत्साहित किया जाय ।
३. 'राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद' (NCERT) द्वारा जिन सिद्धान्तों एव रूपरेखाओं के अनुसार पाठ्य-पुस्तकों के निर्माण के लिये कार्य किया जा रहा है, उन्हीं सिद्धान्तों के अनुसार अन्य क्षेत्रों में भी किया जाय ।
४. 'शिक्षा-मंत्रालय' पाठ्य-पुस्तकों के निर्माण कार्य को मार्गदर्शित और ।

कार्य स्वीकार करे और उसको कार्यान्वित करने के लिये एक 'स्वायत्त-संगठन' (Autonomous Organization) की स्थापना करे। यह संगठन इस कार्य को राष्ट्रीय स्तर पर करे।

५. प्रत्येक राज्य में पाठ्य-पुस्तकों के निर्माण के लिये एक विशेष समिति की नियुक्ति की जाय।

६ पाठ्य-पुस्तकों की तैयारी तथा मूल्यांकन करना—राज्य के शिक्षा-विभाग का दायित्व हो।

७. शिक्षा-विभाग पुस्तकों की बिक्री के कार्य को छात्रों के सहयोगी भण्डारों को सौंपे। वह इस कार्य को स्वयं अपने हाथ में न ले।

८. पाठ्य-पुस्तकों के संशोधन एवं सुधार के लिये एक पृथक् समिति का निर्माण किया जाय।

९. प्रत्येक विषय में ३ या ४ पुस्तकों को प्रस्तावित किया जाय, जिससे विद्यालयों को चुनाव करने का अवसर प्राप्त हो सके।

१०. पाठ्य-पुस्तकों के लेखकों को उदार पारिश्रमिक दिया जाय।

११. पाठ्य-पुस्तकों का उत्पादन-कार्य लाभ-हानि के आधार पर न बनाया जाय।

१२. विभिन्न स्रोतों से पाण्डुलिपियों को प्राप्त किया जाय और व्यावसायिक लोगों तथा शिक्षकों द्वारा उनका चयन किया जाय एवं स्वीकृति दी जाय।

१३. शिक्षक-गाइड तथा अन्य शिक्षण-सामग्री पाठ्य-पुस्तकों की पूर्ति करें।

१४. प्रत्येक श्रेणी के विद्यालयों से शिक्षण-सामग्री तथा साज-सज्जा की न्यूनतम सूची तैयार करायी जायें और उनको समस्त सामग्री प्रदान करने के लिये महत्वपूर्ण कदम उठाये जायें।

१५. शिक्षा-विभाग अखिल भारतीय रेडियो से सम्पर्क स्थापित करके रेडियो-प्रसारणों द्वारा विभिन्न पाठों के अध्यापन की व्यवस्था करें। इसके अतिरिक्त, शिक्षकों की सहायता के लिये पाठ-योजना सम्बन्धी नियमों एवं व्यवहारों, विभिन्न शिक्षण-विधियों के आवश्यक तत्वों तथा उनके प्रयोग की विधियों आदि पर भी रेडियो-प्रसारणों का आयोजन किया जाय।

१६. शिक्षक मितव्ययी शिक्षण-सामग्री तथा स्थानीय परिस्थितियों द्वारा प्रदान की गई वस्तुओं के अनुसार कार्य करने तथा उन पर आस्था रखने के लिये प्रशिक्षित किये जायें।

१७. अधिक मँहगी शिक्षण-सामग्री को आस-पास के सब विद्यालय मिलकर खरीद लें और उसके उपयोग से लाभ उठायें।

समीक्षा

आयोग ने हमारे विद्यालयो मे पढ़ाई जाने वाली पुस्तकों के बारे में जो कुछ लिखा है, वह अक्षरशः सत्य है। वे लिखाई, छपाई, कागज—सभी दृष्टिकोणों से निम्नकोटि की हैं। इसका एकमात्र कारण है—भ्रष्टाचार, जो कुछ समय से शिक्षा के क्षेत्र मे भी दिखाई देने लगा है। खराब पुस्तकें पढ़ाने के लिये चुन ली जाती हैं और अच्छी पुस्तकों की ओर ध्यान भी नहीं दिया जाता है। यह इस बात का जीता-जागता सबूत है कि पुस्तकों के चुनाव का आधार—उनकी श्रेष्ठता नहीं है, वरन् कुछ और ही है। प्रकाशक खराब से खराब कागज पर खराब से खराब छपी हुई पुस्तक को अधिक से अधिक मूल्य पर बेचते हैं। सब वस्तुओं के मूल्यों पर सरकार का अंकुश है, पर पुस्तकों पर नहीं है। ऐसा क्यों है? इसका उत्तर हमारे पास तो है नहीं।

पुस्तकों की इस लज्जाजनक स्थिति में सुधार किया जाना आवश्यक है। यह सुधार आयोग के सुझावों को अपना कर किया जा सकता है। अतः यह आवश्यक है कि इस दिशा में क़दम उठाये जायें।

४ मार्ग-प्रदर्शन और समुपदेशन
Guidance & Counselling

आयोग का विचार है कि मार्ग-प्रदर्शन तथा समुपदेशन को शिक्षा का एक आवश्यक अंग स्वीकार किया जाय। यह सभी बालकों के लिये हो। इसका उद्देश्य—उनको समय-समय पर अपने निर्णयों एवं व्यवस्थापनों (Adjustments) को निर्धारित करने में सहायता प्रदान करना हो। आयोग ने शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर इस सम्बन्ध में अग्रलिखित सुझाव दिये हैं :—

(अ) प्राथमिक स्तर पर मार्ग-प्रदर्शन
Guidance at Primary Stage

१. प्राथमिक विद्यालय की निम्नतम कक्षा से मार्ग प्रदर्शन देना प्रारम्भ किया जाय।
२. प्राथमिक विद्यालयों की संख्या अधिक होने के कारण उनमें पृथक् व्यवस्था करना बहुत कठिन है। अतः उनके शिक्षकों को प्रशिक्षण काल में मार्ग प्रदर्शन सम्बन्धी बातों से अवगत कराया जाय।
३. [illegible] विभिन्न प्रकारों से अवगत कराया जाय।
४. प्राथमिक [illegible] के लिए [illegible] (Guidance [illegible]) का [illegible] किया जाय।
५. [illegible] का निर्माण किया जाय।

६. छात्रों तथा उनके अभिभावकों का आगे की शिक्षा के लिये विषयों का चुनाव करने में सहायता दी जाय।

(ब) माध्यमिक स्तर पर मार्ग-प्रदर्शन
Guidance at the Secondary Stage

इस स्तर पर मार्ग-प्रदर्शन छात्रों की रुचियों एवं योग्यताओं के विकास में सहायता प्रदान करे। माध्यमिक स्तर पर मार्ग-प्रदर्शन प्रदान करने के लिये अधोलिखित व्यवस्था की जाय :—

१. सभी माध्यमिक स्कूलों के लिए न्यूनतम मार्ग-प्रदर्शन कार्यक्रम तैयार किया जाय।
२. १० माध्यमिक विद्यालयों के लिये एक परामर्शदाता (Counsellor) नियुक्त किया जाय। परन्तु विद्यालय के शिक्षक परामर्शदाता को मार्ग-प्रदर्शन के सरलतम कार्यों में सहयोग दें।
३. प्रत्येक जिले में कम से कम एक विद्यालय में मार्ग-प्रदर्शन का विस्तृत कार्य-क्रम सचालित किया जाय, जो उस जिले के सब विद्यालयों के लिये आदर्श हो।
४. माध्यमिक विद्यालयों के सभी शिक्षकों को प्रशिक्षण-काल या सेवा-काल में मार्ग-प्रदर्शन की धारणा से अवगत कराया जाय।
५. उपरोक्त कार्य में सफलता प्राप्त करने के लिये प्रशिक्षण-विद्यालयों में योग्य तथा उपयुक्त शिक्षकों की नियुक्ति की जाय।

(स) सामान्य सुझाव
General Recommendations

मार्ग-प्रदर्शन और समुपदेशन के बारे में आयोग ने निम्नलिखित सामान्य सुझाव दिये हैं :—

१. भारतीय परिस्थितियों में मार्ग-प्रदर्शन से सम्बन्धित समस्याओं पर अनुसंधान कार्य कराया जाय।
२. मार्ग-प्रदर्शन सम्बन्धी साहित्य तैयार कराया जाय।
३ मार्ग-प्रदर्शन कार्य करने वाले व्यक्तियों को व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान करने के लिये प्रशिक्षण कालिजों तथा मार्ग-प्रदर्शन ब्यूरो द्वारा व्यवस्था की जाय।

समीक्षा

आयोग के मार्ग-प्रदर्शन और समुपदेशन सम्बन्धी सुझावों में बहुत काफी वांछनीयता है। ये कार्य प्राथमिक स्तर से ही किये जाने चाहिये, जिससे छात्रों को अपनी योग्यताओं के अनुसार उचित दिशा में आगे बढ़ने और सफलता प्राप्त करने

७. विशेष जाँचो (Tests) के आधार पर प्रतिभा की खोज, छात्रवृत्ति या योग्यता प्रमाण-पत्र प्रदान किये जायें।
८. बाह्य परीक्षाओं के प्रश्न-पत्रों में प्रश्नो को वस्तुनिष्ठ (Objective) बनाने का प्रयत्न किया जाय।
९. कुछ प्रयोगात्मक विद्यालयो (Experimental Schools) की स्थापना की जाय। इन विद्यालयो को अपना पाठ्य-क्रम बनाने, अपनी पाठ्य-पुस्तकें निर्धारित करने, मूल्यांकन के लिये अपनी रीतियों का प्रयोग करने की स्वतन्त्रता दी जाय। इन विद्यालयो को स्वय कक्षा १० की समाप्ति पर परीक्षा लेने का अधिकार दिया जाय और 'राज्य विद्यालय शिक्षा-परिषद्' (State Board of School Education) इन विद्यालयो की सिफारिश पर छात्रों को प्रमाण-पत्र प्रदान करे।
१०. आन्तरिक जाँच (Internal Assessment) व्यापक हो। इसके द्वारा बालको के सभी पक्षों का मूल्यांकन किया जाय। बाह्य परीक्षाओ के साथ-साथ, आन्तरिक जाँचों को प्रमाण-पत्र प्रदान करने का आधार बनाया जाय।
११. आन्तरिक जाँच करते समय विभिन्न रीतियाँ-निरीक्षण (Observation), शिक्षक-निर्मित जाँचो (Teacher-Made Tests), मौखिक परीक्षाओं, प्रयोगात्मक परीक्षाओ, मनोवृत्तियों, रुचियो, योग्यताओ आदि को जाँचने के लिये विभिन्न प्रमापीकृत जाँचों (Standardized Tests) का प्रयोग किया जाय।

समीक्षा

हमारे विद्यालयो मे प्रयोग की जाने वाली मूल्यांकन को विधि अति दोषपूर्ण है। प्रश्न-पत्रो में ऐसे प्रश्न पूछे जाते हैं, जिनके उत्तर निबन्ध के रूप मे लिखने पड़ते हैं। यदि किसी छात्र ने इन उत्तरों को किसी प्रकार पहले से तैयार कर लिया है, तो उसे अच्छे अक मिल जाते हैं—भले ही उसका ज्ञान उस छात्र से कम हो, जिसे कम मिलते हैं। वास्तविकता यह है कि कम या अधिक अक मिलना—परीक्षक और उसकी इच्छा पर निर्भर होता है। अत. जैसा कि आयोग ने सुझाव दिया है—इस परीक्षा-प्रणाली मे परिवर्तन किया जाना और प्रश्न-पत्रो को वस्तुनिष्ठ बनाना आवश्यक है।

आयोग के संचित अभिलेख और आंतरिक जाँच-सम्बन्धी सुझाव अत्युत्तम हैं। इन लेखो से यह ज्ञात हो सकता है कि छात्रो की अन्य क्षेत्रो मे क्या योग्यतायें है। आन्तरिक जाँचो से दो लाभ होंगे—(१) छात्र पूरे वर्ष परिश्रम से अध्ययन करेंगे। (२) इसके अतिरिक्त, उन पर शिक्षक का अधिक प्रभाव रहेगा, जिसके फलस्वरूप वे अनुशासनहीनता के अपराध कम करेंगे। व्यावसायिक शिक्षा-संस्थाओ मे आंतरिक जाँचो की पद्धति है। यही कारण है कि उनके छात्र अनुशासनहीनता के बहुत ही कम कार्य करते हैं।

प्रयोगात्मक विद्यालयों का सुझाव अति उच्च कोटि का है, पर इसको कार्यान्वित करने में कुछ समय लगेगा। कारण यह है कि ऐसे विद्यालयों की स्थापना सरल नहीं है। इनके लिये कुशल प्रशासक के रूप में प्रधानाध्यापक, योग्य शिक्षकों, उपयुक्त शिक्षण-सामग्री और सबसे ऊपर बहुत काफी धन की आवश्यकता होगी। अतः जब तक इन सब चीजों को जुटा न लिया जाय, तब तक इन स्कूलों की स्थापना की बात न सोची जाय।

६. प्रतिभा की खोज एवं उसका विकास
Search for Talent & Its Development

आयोग का विचार है कि राष्ट्रीय जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में योग्य एवं प्रशिक्षित मानव-शक्ति (Man-power) की बहुत कमी है। यह राष्ट्रीय प्रगति के मार्ग में बहुत बड़ी बाधा है। वस्तुतः हम आर्थिक दृष्टिकोण से निर्धन हैं, परन्तु प्रशिक्षित बुद्धिजीवियों के क्षेत्र में आर्थिक दृष्टिकोण से भी अधिक निर्धन हैं। हमें ह्वाइटहेड (*Whitehead*) के इन शब्दों से सदैव शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये—"आधुनिक युग में यह नियम निरपेक्ष है कि यदि कोई प्रजाति प्रशिक्षित बुद्धि को मान्यता प्रदान नहीं करती है तो वह स्वयं को विनाश की ओर ले जा रही है।" अतः हमारे लिये यह आवश्यक है कि भारतीय जनता में छिपी हुई प्रतिभा की खोज की जाय और उसके विकास के लिये महत्त्वपूर्ण कदम उठाये जायें। इस सम्बन्ध में आयोग ने अधोलिखित सुझाव दिये :—

१. प्रत्येक बालक एवं बालिका के लिये ५ वर्ष की उत्तम एवं प्रभावशाली प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था की जाय, जिससे प्रतिभा की खोज के लिये अवसर प्राप्त किया जा सके।
२. प्रतिभा की खोज के लिये विभिन्न विषयों में प्राप्त अंकों को आधार न बनाया जाय, वरन् बालकों के विशेष गुणों एवं प्रतिभाओं की खोज के लिये विभिन्न जाँचों एवं रीतियों का प्रयोग किया जाय। इसके अतिरिक्त, विशेष रुचियों एवं वृत्तियों को देखा जाय।
३. प्रतिभा की खोज के बाद उसके विकास के लिये विभिन्न कार्यक्रमों का निर्माण किया जाय; यथा—
    (i) प्रत्येक स्तर पर प्रतिभाशाली बालकों के लिए छात्रवृत्तियों की व्यवस्था की जाय।
    (ii) प्रतिभाशाली बालकों की शिक्षा की व्यवस्था उत्तम विद्यालयों एवं उत्तम शिक्षकों के अधीन रखी जाय।
    (iii) प्रतिभाशाली छात्रों के लिये समृद्ध कार्यक्रमों का निर्माण किया जाय।
    (iv) विज्ञान [illegible] के प्रतिभाशाली छात्रों के लिए गर्मी की छुट्टियों में ४ या ६ सप्ताह के कार्यक्रम का आयोजन किया जाय, जिनमें

उनको अध्ययन करने के लिये शिक्षकों, पुस्तकालय, प्रयोगशाला आदि की विशेष सुविधाएँ प्रदान की जायें।

(v) प्रयोगशालाओं, अजायबघरों तथा अन्य स्थानों का निरीक्षण कराने के लिये सुनियोजित पर्यटनों की व्यवस्था की जाय।

(vi) प्रतिभाशाली छात्रों को उन व्यक्तियों के सम्पर्क में लाया जाय, जो विभिन्न प्रकार के कार्यों में संलग्न हैं। इनके सम्पर्क में आकर छात्र विभिन्न कार्यों में अपनी रुचियों एवं पसन्दगियों का निर्माण कर सकेंगे।

(vii) उन प्रतिभाशाली छात्रों को आवास की सुविधाएँ प्रदान की जायें, जिनके घरों का वातावरण उपयुक्त नहीं है।

समीक्षा

आयोग ने प्रतिभा की खोज और उसके विकास के सम्बन्ध में जो सुझाव दिये हैं, उनको मान्यता दी जानी अति आवश्यक है। कारण यह है कि आज हमारे समाज के रूप का परिवर्तन हो रहा है। वह दासता की बेड़ियों को काटकर स्वतन्त्रता के पथ पर अग्रसर हो रहा है। वह समाजवादी समाज की स्थापना के प्रयास में संलग्न है। वह कृषि-प्रधान देश न रहकर औद्योगीकरण की ओर बढ़ रहा है। इन परिस्थितियों में विभिन्न क्षेत्रों के लिये प्रतिभाशाली व्यक्तियों की आवश्यकता है, ऐसे व्यक्तियों की आवश्यकता है जो प्रत्येक क्षेत्र में नेतृत्व कर सकें। यह तभी सम्भव है, जब बालकों की प्रारम्भिक आयु से ही उनमें निहित प्रतिभा की खोज की जाय और उसकी खोज करके उसका विकास किया जाय। यह किस प्रकार किया जा सकता है—इसके विषय में आयोग ने व्यापक सुझाव दिये हैं। उनके अनुसार कार्य करके हम अपने कार्य में अवश्य सफलता प्राप्त कर सकते हैं।

७. विद्यालय-भवन
School Building

आयोग का विचार है कि विद्यालय-भवनों की वर्तमान स्थिति बड़ी असंतोष-जनक है। अत: उनके सुधार के लिए आवश्यक कदम उठाये जायें। इस सम्बन्ध में आयोग ने निम्नांकित सुझाव दिये :—

१. छात्रों की बढ़ती हुई संख्या को ध्यान में रखकर विद्यालय-भवनों का विस्तार और नये भवनों का निर्माण किया जाय।
२. केन्द्र तथा राज्य के बजटों में विद्यालय-भवनों के निर्माण के लिये अधिक धनराशि निर्धारित की जाय।
३. व्यक्तिगत विद्यालयों को भवनों के निर्माण के लिये उदार आर्थिक सहायता दी जाय।
४. भवन-निर्माण के व्यय में कमी की जाय।

५. ग्रामीण क्षेत्रों में विद्यालय भवनों के निर्माण के लिये स्थानीय समाज का सहयोग प्राप्त किया जाय।

६. शहरी क्षेत्रों में भवन निर्माण-कार्य में उसी स्थान पर प्राप्त सामग्री का प्रयोग किया जाय।

७. प्रत्येक राज्य में भवनों के निर्माण-कार्य का निरीक्षण करने के लिये 'शिक्षा-भवन विकास समूह' (Educational Building Development Group) की स्थापना 'सार्वजनिक निर्माण-कार्य विभाग' (Public Works Department) के अन्तर्गत की जाय, जो शिक्षा-विभाग के साथ कार्य करे।

८. ऐसा ही समूह राष्ट्रीय स्तर पर स्थापित किया जाय, जो राज्यों के समूहों के कार्यों में समन्वय स्थापित करे।

९. 'शिक्षा-भवन विकास समूह' द्वारा मितव्ययी उपायों की खोज की जाय, जिससे कम व्यय में विद्यालय-भवन का निर्माण किया जा सके।

समीक्षा

हमारे देश में विद्यालय-भवनों की समस्या बहुत जटिल है, जिसके कारण शिक्षा-प्रसार के मार्ग में अत्यधिक कठिनाई का अनुभव किया जा रहा है। देश में केवल ३० प्रतिशत विद्यालय-भवन ही ऐसे हैं, जिन्हें उपयुक्त कहा जा सकता है। शेष सभी विद्यालय किराये के मकानों और इनसे भी अधिक अनुपयुक्त स्थानों में चल रहे हैं।

उपरोक्त परिस्थिति में विद्यालय-भवनों का नवनिर्माण अति आवश्यक है। इसके सम्बन्ध में आयोग ने दो ठोस सुझाव दिये हैं · (१) केन्द्र और राज्य के बजटों में विद्यालय-भवनों के निर्माण के लिये अधिक धनराशि का निर्धारण, और (२) गैर-सरकारी विद्यालय-भवनों के निर्माण के लिये उदार आर्थिक सहायता। ये दोनों सुझाव हैं तो अच्छे, पर क्या केन्द्र और राज्य-सरकारें विद्यालय-भवनों के लिये हाथ खोलकर धन दे सकेंगी? इसमें बहुत सन्देह है। अच्छा तो यह होता कि आयोग विद्यालय-भवनों की समस्या का समाधान करने के लिये पारि-विधि (*Shift System*) का सुझाव देता। इससे एक ही विद्यालय में दूने छात्रों को शिक्षा देने का कार्य सम्भव हो जाता।

८. कक्षा का आकार
Size of Class

आयोग ने लिखा है कि हमारे देश में बहुत समय तक कक्षा में केवल उतने ही छात्रों को रखना असम्भव होगा, जितने कि होने चाहिये। कारण यह है कि पढ़ने वालों की संख्या में दिन-प्रतिदिन वृद्धि हो रही है और हमारे पास इतने विद्यालय

भवन नहीं हैं। इन बातो को ध्यान में रखकर आयोग ने कक्षा के आकार के बारे मे निम्नलिखित सुझाव दिये हैं :—

१. निम्न प्राथमिक स्तर की प्रत्येक कक्षा मे ५० से अधिक छात्र भर्ती न किये जायें।
२ उच्चतर प्राथमिक तथा निम्न माध्यमिक स्तरो की प्रत्येक कक्षा में ४५ से अधिक छात्रो को प्रवेश न दिया जाय।
३. *उच्चतर माध्यमिक स्तर की प्रत्येक कक्षा मे ४० से अधिक छात्रों को न रखा जाय।*

समीक्षा

जैसा कि आयोग ने लिखा है—वर्तमान परिस्थितियो मे कक्षाओ मे छात्रों की सख्या मे वृद्धि करना बहुत आवश्यक है। इस समय प्रत्येक शिक्षक को औसत रूप में एक कक्षा मे ३३ छात्रों को शिक्षा देनी पड़ती है। अनेक पाश्चात्य देशो मे प्रति शिक्षक को शिक्षा देने के लिये कुछ समय पूर्व ३३ से कही अधिक छात्र थे। उदाहरणार्थ—१६२२ तक इगलैंड मे प्रत्येक कक्षा मे छात्रो की सख्या ६० तक थी। १६३२ तक इटली में भी यही सख्या थी। राष्ट्र सघ ने चीन के प्राथमिक विद्यालयो की कक्षाओ के लिये ६० छात्रों की सिफारिश की थी।

आयोग के सुझावों को मान्यता देकर और उपरोक्त देशों के उदाहरणो का अनुकरण करके भारत मे भी प्रत्येक कक्षा में छात्रों की वृद्धि की जा सकती है। इससे विद्यालय-भवनों के अभाव की समस्या का बहुत बड़ी सीमा तक समाधान हो जायगा और देश के बच्चे भी शिक्षा प्राप्त करने के अधिकार से वंचित नहीं रहेंगे।

अध्याय ११

विद्यालय-शिक्षा : प्रशासन और निरीक्षण

SCHOOL EDUCATION : ADMINISTRATION & SUPERVISION

इस अध्याय में आयोग ने निम्नलिखित चार बातों पर प्रकाश डाला है, जिनका वर्णन हम क्रमशः करेंगे :—

१—सार्वजनिक शिक्षा की सामान्य विद्यालय-पद्धति ।

२—विद्यालय-सुधार का राष्ट्रव्यापी कार्य-क्रम ।

३—निरीक्षण ।

४—प्रशासन और निरीक्षण सम्बन्धी सामान्य सिफारिशें ।

१. सार्वजनिक शिक्षा की सामान्य विद्यालय-पद्धति
Common School System of Public Education

आयोग का विचार है कि प्रशासन और निरीक्षण की पद्धतियाँ उचित और सहानुभूतिपूर्ण होनी चाहिये । यदि ऐसा है, तो शिक्षा-सुधार के कार्य को गति प्रदान की जा सकती है । इस समय भारत में प्रशासन और निरीक्षण की ऐसी पद्धतियों का पूर्ण अभाव है । इस अभाव को दूर करने के लिये सार्वजनिक शिक्षा की सामान्य विद्यालय-पद्धति की स्थापना की जाय । इस पद्धति में सब राजकीय विद्यालय, स्थानीय संस्थाओं द्वारा स्थापित सभी स्कूल तथा सभी सहायता-प्राप्त विद्यालयों का समावेश होगा ।

आयोग ने 'कॉमन स्कूल-पद्धति' के निर्माण के लिये अग्रलिखित उपायों को काम में लाने के लिये कहा है :—

१. विभिन्न प्रबन्धकों—सरकार, स्थानीय अधिकारी तथा व्यक्तिगत प्रबन्धक—के अधीन कार्य करने वाले शिक्षकों के बीच जो भेद-भाव प्रचलित है, उसे समाप्त किया जाय।
२. चतुर्थ पंचवर्षीय योजना के अन्त तक प्राथमिक स्तर के बालकों से फीस न ली जाय।
३. पंचम् पंचवर्षीय योजना अन्त तक निम्न माध्यमिक स्तर की फीस समाप्त कर दी जाय।
४. सभी विद्यालयों द्वारा उत्तम शिक्षा के लिये न्यूनतम आवश्यक परिस्थितियाँ प्रदान की जायें।
५. सरकार का यह दायित्व है कि वह सहायता-प्राप्त व्यक्तिगत विद्यालयों का निरीक्षण करे। यदि कोई विद्यालय उपयुक्त ढग से संचालित नहीं किया जा रहा है, तो वह या तो उसका प्रबन्ध स्वय अपने हाथ में ले ले या उसे बन्द कर दे।
६. व्यक्तिगत विद्यालयों की प्रबन्ध-समितियों मे शिक्षा-विभाग के प्रतिनिधि रखे जायें।
७. ग़ैर-सरकारी विद्यालयों में शिक्षकों की नियुक्ति, उनका वेतन एव उनसे सम्बन्धित सभी अन्य बातें सरकारी विद्यालयों के शिक्षकों के समान हों।

समीक्षा

देश के लिये सामान्य विद्यालय की पद्धति बहुत लाभप्रद सिद्ध होगी। आज देश में जो विभिन्न प्रकार के स्कूल दिखाई दे रहे हैं, उनका अन्त हो जायगा। देश के सभी बच्चों के लिये एक ही प्रकार के स्कूल होंगे। किसी को किसी विशेष प्रकार के स्कूल में शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार नहीं रह जायगा। फलस्वरूप सबके लिये शिक्षा प्राप्त करने के अवसर एक-से हो जायेंगे।

प्राथमिक स्तर और निम्न माध्यमिक स्तर पर शिक्षा के नि:शुल्क होने से शिक्षा का प्रसार अति तीव्रगति से होगा। परिणामत १४ वर्ष की आयु तक के सभी बच्चे अनिवार्य रूप से शिक्षा ग्रहण करने लगेंगे।

सामान्य स्कूल-प्रणाली में सभी विद्यालयों की स्थिति प्राय एक-सी होगी, क्योंकि जो विद्यालय उचित ढङ्ग से संचालित नहीं किया जा रहा होगा, उसका कार्य-भार सरकार स्वयं अपने ऊपर ले लेगी। ऐसी दशा में सब विद्यालयों का महत्व समान हो जायगा और छात्र कुछ विशिष्ट विद्यालयों में प्रवेश लेने के लिये लालायित न रह जायेंगे।

सामान्य स्कूलों की स्थापना से शिक्षकों की स्थिति बदल जायगी, क्योंकि ग़ैर-सरकारी स्कूलों के अध्यापकों को वे सभी सुविधाएँ और अधिकार प्राप्त हो जायेंगे जो सरकारी स्कूलों के अध्यापकों को प्राप्त हैं।

सामान्य स्कूल प्रणाली के सुझाव की जितनी ही प्रशंसा की जाय, कम पर हमें इस बात का निश्चय हो गया है कि अब इस प्रणाली को देश में स्थ नहीं मिलेगी। कारण यह है कि शिक्षा-मन्त्री डा० सेन की अध्यक्षता में आयोजि मीटिंग में यह निश्चय किया गया है कि सामान्य स्कूलों का शिलान्यास करें कार्य राज्यों पर छोड़ दिया जाय। साथ ही यह भी स्पष्ट कर दिया गया है कि अ माध्यम से शिक्षा देने वाले पब्लिक स्कूलों को यथावत् चलने दिया जाय।[1] आयोग के अनुसार सार्वजनिक शिक्षा की सामान्य विद्यालय पद्धति की स्थापन जानी आवश्यक है, तो पब्लिक स्कूलों के अस्तित्व का प्रश्न ही नहीं रह है। फिर उनको शिक्षा-मन्त्री द्वारा—जो आयोग के सदस्य थे, चिर जीवन आशीर्वाद क्यों दिया जा रहा है?

२. विद्यालय-सुधार का राष्ट्रव्यापी कार्य-क्रम
Nation-Wide Programme of School Improvement

आयोग ने लिखा है—"स्कूल स्तर पर शिक्षा के स्तरों में सुधार करने विचार से विद्यालय-सुधार के राष्ट्रव्यापी कार्य-क्रम का विकास किया जाय, जि ऐसी दशाओं का निर्माण किया जाय कि प्रत्येक विद्यालय उन सर्वोत्तम परिणामों प्राप्त करने के लिये निरन्तर प्रयास करे, जिनको वह प्राप्त करने के योग्य है।"

विद्यालय-सुधार के राष्ट्रव्यापी कार्य-क्रम को कार्यान्वित करने के लिये आय ने निम्नलिखित सुझाव दिये हैं :—

१. प्रत्येक विद्यालय को एक इकाई के रूप में स्वीकार किया जाय, और उसे अपनी गति से उन्नति की ओर बढ़ने में सहायता दी जाय।
२. भौतिक साधनों के बजाय मानव-साधनों पर बल दिया जाय।
३. न्यूनतम प्रस्तावित स्तर तक सब विद्यालयों को उन्नत बनाया जाय।
४. अगले १० वर्षों में प्रत्येक खण्ड में कम से कम १० प्राथमिक विद्यालय और १ सेकेंडरी स्कूल को उन्नति की सीमा पर पहुँचा दिया जाय।

समीक्षा

पिछले कुछ वर्षों में हमारे विद्यालयों का शिक्षण-स्तर बहुत काफ़ी गिर गया है। अतः उसको उन्नत करने की आवश्यकता का अनुभव किया जा रहा है। इसी विचार से प्रेरित होकर आयोग ने विद्यालय-सुधार के राष्ट्रव्यापी कार्य-क्रम के बारे में सुझाव दिये हैं। शिक्षा-स्तर का उन्नयन करने के लिये इस कार्य-क्रम को लागू किया जाना बहुत आवश्यक है।

1. The Hindustan Times, August 23, 1967.

३. निरीक्षण
Supervision

निरीक्षण के कार्य को आयोग ने दो स्तरों मे बाँटा है—(अ) राज्य-स्तर पर शिक्षा विभागो द्वारा, और (ब) जिला स्तर पर।

(अ) राज्य-स्तर पर निरीक्षण : Supervision at State Level

आयोग ने लिखा है कि प्रत्येक राज्य के शिक्षा-विभाग शैक्षिक मामलो के सम्बन्ध मे प्रमुख साधन हैं। अतः उनको अधोलिखित बातो के लिये उत्तरदायी होना चाहिये :—

१ विद्यालय-सुधार के कार्य-क्रम का विकास एवं उसकी कार्यान्विति :— (Development & Enforcement of School-Improving Programme)।

२. प्रमापो का प्रस्तावन एव उनकी कार्यान्विति (Prescription & Enforcement of Standards)।

३. शिक्षकों का प्रशिक्षण (Training of Teachers)।

४. निरीक्षण एवं परिनिरीक्षण (Inspection & Supervision)।

५. प्रसार-सेवाओं (Extension Services) की व्यवस्था तथा संस्थाओं के गुणात्मक पक्ष की स्थिरता।

६. राजकीय शिक्षा संस्थान (State Institute of Education) की स्थापना।

७. व्यावसायिक और प्राविधिक शिक्षा में सामंजस्य और कालान्तर में उनका उत्तरदायित्व।

(ब) जिला-स्तर पर निरीक्षण . Supervision at District Level

जिला स्तर पर विभागीय संगठन को शक्तिशाली बनाया जाय। इसके लिये अधोलिखित बातों को ध्यान मे रखा जाय :—

१. 'जिला-शिक्षा-अधिकारी' (District Education Officer) को उचित स्थिति प्रदान की जाय।

२ जिला-स्तर को उपयुक्त शक्तियाँ प्रदान की जायें।

३. जिला-स्तर के निरीक्षकों के वेतन-दरो में वृद्धि की जाय।

४. जिला-स्तर पर निरीक्षको, विशेषज्ञो, तथा अन्य अधिकारियो की संख्या मे वृद्धि की जाय।

अध्याय १२

उच्च-शिक्षा : लक्ष्य एवं सुधार

HIGHER EDUCATION : OBJECTIVES & IMPROVEMENT

इस अध्याय में आयोग ने उच्च शिक्षा के निम्नांकित अंगों पर प्रकाश डाला है, जिनका वर्णन क्रमशः किया जा रहा है :—

१—विश्वविद्यालयों के लक्ष्य,
२—वरिष्ठ विश्वविद्यालयों का विकास,
३—अन्य विश्वविद्यालयों और सम्बद्ध कॉलेजों का सुधार,
४—शिक्षण में सुधार,
५—मूल्यांकन में सुधार,
६—शिक्षा का माध्यम,
७—छात्र-सेवाएँ,
८—छात्र-संघ और छात्र-अनुशासन।

१. विश्वविद्यालयों के लक्ष्य
Objectives of Universities

आयोग का विचार है कि आधुनिक युग में भारतीय विश्वविद्यालयों के निम्नलिखित लक्ष्य होने चाहिये :—

१. नवीन ज्ञान की खोज एवं विकास करना।
२. नवीन आवश्यकताओं तथा खोजों के अनुसार प्राचीन ज्ञान का विश्लेषण करना।
३. सत्य की खोज के लिये निर्भय होकर कार्य करना।

४. जीवन के समस्त क्षेत्रों के लिये उचित प्रकार का नेतृत्व प्रदान करना।
५. प्रतिभाशाली नवयुवकों की खोज करके उनकी प्रतिभाओं तथा शक्तियों का विकास करना।
६. समाज को कृषि, कला, चिकित्सा, विज्ञान, प्रौद्योगिकी एवं अन्य व्यावसायों के लिये योग्य एवं प्रशिक्षित स्त्री और पुरुष प्रदान करना।
७. शिक्षा प्रसार के द्वारा समानता एवं सामाजिक न्याय की उन्नति के लिये कार्य करना।
८. सामाजिक तथा सांस्कृतिक विभिन्नताओं को कम करना।
९. *समाज तथा व्यक्तियों में 'सद्जीवन' के विकास के लिये आवश्यक* दृष्टिकोणों (Atitudes) एवं मान्यताओं (Values) को शिक्षकों एवं छात्रों में विकसित करना, जिससे वे समाज में प्रवेश करके उनका प्रसार कर सकें।
१०. राष्ट्रीय चेतना के विकास के लिये कार्य करना।
११. प्रौढ़-शिक्षा के कार्यक्रमों का विकास करना, जिससे अधिकांश प्रौढ़ों को अंशकालीन तथा पत्र-व्यवहार द्वारा शिक्षा प्राप्त करने की सुविधाएँ प्राप्त हो जायें।
१२. विद्यालयों को गुणात्मक रूप से उन्नति करने में सहायता देना।

समीक्षा

आयोग ने विश्वविद्यालयों के जो लक्ष्य बताये हैं, वे उत्तम हैं। पर इन लक्ष्यों की प्राप्ति सरल नहीं है। इन सब को प्राप्त करने के लिये निरन्तर प्रयास और अथक परिश्रम की आवश्यकता है। फिर इन लक्ष्यों तक पहुँचने के लिये विभिन्न प्रकार की सुविधाओं का जुटाया जाना आवश्यक है। यही कार्य कठिन है, क्योंकि आजकल हमारे देश के विश्वविद्यालय राजनीति के अखाड़े बने हुए हैं। प्रायः सभी शिक्षकों के दो ध्येय हैं : (१) अपने दल को संगठित करके शक्तिशाली बनाना, और (२) अपने तथा दूसरे विश्वविद्यालयों से अधिक से अधिक धन प्राप्त करना। जब तक शिक्षकों के इन दृष्टिकोणों में परिवर्तन नहीं किया जायगा, तब तक आयोग द्वारा बताये गये लक्ष्यों की प्राप्ति न हो सकेगी।

२. वरिष्ठ विश्वविद्यालयों का विकास
Development of Major Universities

आयोग का विचार है कि उच्च-शिक्षा में सबसे महत्वपूर्ण सुधार 'वरिष्ठ विश्वविद्यालयों का विकास' करना है, जहाँ सर्वोत्तम प्रकार का स्नातकोत्तर तथा अनुसंधान कार्य किया जा सके, और जो विश्व के किसी भी भाग में स्थित सर्वोत्तम

करते हैं। इङ्गलैंड मे ऑक्सफोर्ड और केम्ब्रिज, संयुक्त राज्य अमेरिका में हरवार्ड आदि सम्पूर्ण ससार मे विख्यात हैं। आयोग इसी प्रकार के छः विश्वविद्यालय भारत में चाहता है, जिनमें सब प्रकार के उत्कृष्ट अनुसधान कार्य के साथ-साथ, स्नातकोत्तर शिक्षा की भी व्यवस्था हो। यदि आयोग का यह स्वप्न साकार हो गया तो भारतीयों को उच्च शिक्षा के लिए विदेशों की यात्रा न करनी पडेगी, जिसके फलस्वरूप भारतीय मुद्रा भारत मे ही रहेगी।

यद्यपि आयोग ने ६ विश्वविद्यालयों का सुझाव दिया है, पर हमारे विचार से प्रारम्भ मे केवल २ विश्वविद्यालय प्रयोगात्मक रूप मे चुने जायँ। एक मे केवल आर्ट्स और साइस की व्यवस्था की जाय, और दूसरे मे व्यावसायिक शिक्षा-सम्बन्धी विषयों की—जैसा कि सयुक्त राज्य मे मेसाचुसेट्स मे है।

३. अन्य विश्वविद्यालयों और सम्बद्ध कॉलेजों का सुधार
Improvement of Other Universities & Affiliated Colleges

वरिष्ठ विश्वविद्यालयों के अतिरिक्त देश के अन्य सभी विश्वविद्यालयो और उनसे सम्बद्ध कॉलेजों के सुधार के बारे मे आयोग ने निम्नांकित सुझाव दिये हैं :—

१. वरिष्ठ विश्वविद्यालय अन्य विश्वविद्यालयों तथा उनसे सम्बद्ध कॉलेजों को उत्तम शिक्षक प्रदान करें।
२. वरिष्ठ विश्वविद्यालयों के प्रतिभाशाली छात्रों मे ऐसी भावना उत्पन्न की जाय कि वे अध्ययन के पश्चात् शिक्षण-व्यवसाय को अपनायें।
३. विश्वविद्यालय तथा सम्बद्ध कॉलेज अपने नव-निर्वाचित शिक्षकों को यथासम्भव कुछ समय के लिये वरिष्ठ विश्वविद्यालयों में भेजें, जहाँ वे अपने विषय से सम्बन्धित नवीन विचारो एव प्रक्रियाओं की जानकारी प्राप्त करें।
४. प्रतिभाशाली विद्वानों तथा वैज्ञानिकों को अनुसन्धान तथा सेमिनारो का संचालन करने के लिए आमन्त्रित किया जाय।
५. विश्वविद्यालयों को 'उन्नत अध्ययन-केन्द्रों' (Centres of Advanced Studies) की स्थापना के लिये प्रत्येक सम्भव सहायता प्रदान की जाय।
६. 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' तीन स्तरों—लेक्चरार, रीडर तथा प्रोफ़ेसर—पर कुछ 'अभिसदस्यतायें (Fellowships) प्रदान करने की योजना बनाये।
७. सम्बद्ध कॉलेजों का वर्गीकरण उनके कार्य के आधार पर किया जाय।
८. यदि किसी विश्वविद्यालय की क्षेत्र-सीमा मे कोई असाधारण सम्बद्ध-कॉलेज है, तो उसे 'स्वायत्त कॉलेज' (Autonomous College) की सज्ञा प्रदान की जाय।

समीक्षा

आयोग ने अन्य विश्वविद्यालयों और उनसे सम्बद्ध कालिजों के सुधार के बारे में जो सुझाव दिये हैं, उनमें कोई विशेष बात नहीं पाई जाती है। इन विश्वविद्यालयों और कालिजों में से अनेकों में सेमिनार अब भी होते हैं और उनका सञ्चालन करने के लिये योग्य विद्वानों को आमंत्रित किया जाता है।

आयोग के केवल दो सुझावों का कुछ महत्त्व है : (१) उन्नत अध्ययन केन्द्रों की स्थापना, और (२) 'स्वायत्त कालिजों' का निर्माण। इस प्रकार के केन्द्र और कालिज अभी तक देश में बहुत कम हैं। अतः आयोग के सुझावों के अनुसार उनकी संख्या में वृद्धि की जानी चाहिये।

४. शिक्षण में सुधार
Improvement of Teaching

आयोग ने शिक्षण-कार्य में सुधार करने के लिये अधोलिखित सुझाव दिये हैं —

१. औपचारिक कक्षा-कार्य एवं प्रयोगशाला कार्य के घन्टों में कमी की जाय, और इस कमी से जो समय बचे उसका प्रयोग एवं निर्देशक (Instructor) के पथ-प्रदर्शन में स्वाध्ययन, निर्धारित कार्य, लेखों को लिखने, समस्याओं के समाधान तथा अनुसन्धान कार्यों को पूर्ण करने के लिये किया जाय।

२. विश्वविद्यालयों तथा कालिजों में पुस्तकालयों को उत्तम बनाने के लिये प्रत्येक सम्भव उपाय काम में लाया जाय।

३. सभी विषयों में रटने की प्रवृत्ति को रोका जाय और मौलिक चिन्तन पर बल दिया जाय।

४. सामान्यतः व्याख्यानों की विषय-सामग्री तथा उनके गुणात्मक पक्ष को उन्नत बनाया जाय।

५. कक्षा-कार्य के बाद छात्रों को ४५ मिनट का अध्ययन समय प्रदान किया जाय, जिससे वे व्याख्यान की सामग्री को याद कर सकें।

६. यह नियम बना दिया जाय कि कोई भी शिक्षक सत्र (Term) में ७ दिन से अधिक के लिये संस्था से बाहर न जाय।

७. सभी नियुक्तियाँ गर्मियों की छुट्टियों में कर दी जायें, जिससे प्रत्येक नियुक्त शिक्षक सत्र के प्रारम्भ में आकर अपने कार्य को करना प्रारम्भ कर दे।

८. यह भी नियम बनाया जाय कि कोई भी शिक्षक सत्र के मध्य में एक संस्था को छोड़कर दूसरी संस्था में न जाय।

९. उच्च शिक्षा में शिक्षण-विधियों की समस्या की अवहेलना की गई है। अतः 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' इस समस्या पर विचार करने के लिये एक विशेष समिति की नियुक्ति करे। इसके अतिरिक्त, शिक्षा-संस्थान (Schools of Education) विश्वविद्यालय तथा कॉलेज-स्तर पर प्रयोग की जाने वाली शिक्षण-विधियों के सम्बन्ध मे विशेष अध्ययन करें।

समीक्षा

हमारे विश्वविद्यालयों और कॉलिजों मे प्रयोग की जाने वाली शिक्षण-विधियां प्राचीन, परम्परागत, अरुचि और घिसी-पिटी हैं। ऐसे अध्यापकों का अभाव नहीं है, जो शिक्षण के लिये किसी प्रकार का परिश्रम नहीं करना चाहते हैं। ऐसे भी अध्यापक हैं, जिन्होंने व्यवसाय मे पदार्पण करते समय अपने विषय पर नोट्स (Notes) बना लिये थे, और उन्हीं का प्रयोग प्रति दिन, प्रति वर्ष अपने सम्पूर्ण शिक्षण-काल मे करते हैं। यदि उनसे पूछा जाता है कि आप ऐसा क्यों करते हैं, तो उनका उत्तर होता है कि इससे अधिक अच्छी विषय-सामग्री और कहीं नहीं मिल सकती है क्योंकि यह बहुत परिश्रम से तैयार की गई है। हमने माना कि यह सत्य है, पर यह भी तो सत्य है कि जब विषय-सामग्री तैयार की गई थी, तब से आज तक विभिन्न विषयों मे निहित ज्ञान कितना आगे बढ़ चुका है। छात्रों का दुर्भाग्य है कि यह नवीन ज्ञान उनको नहीं मिल पाता है।

उपरोक्त स्थिति में यह अनिवार्य है कि आयोग के सुझावों के अनुसार शिक्षण-विधियों मे गुणात्मक उन्नति की जाय, उनको रुचिकर बनाया जाय, उनको नवीनता और गतिशीलता प्रदान की जाय। साथ ही जैसा कि आयोग ने लिखा है—यह भी आवश्यक है कि शिक्षकों को एक सत्र मे ७ दिन से अधिक छुट्टी न दी जाय और ग्रीष्मावकाश मे ही नये अध्यापकों की नियुक्ति कर ली जाय। अधिक लम्बी छुट्टियाँ लेने वाले अध्यापकों को शिक्षण-कार्य मे रुचि नहीं रह जाती है। फलतः उनके शिक्षण का स्तर गिर जाता है। यदि शिक्षकों की नियुक्ति जुलाई के आरम्भ में की जाती है, तो वे एक या दो माह के बाद आते हैं। इससे दोहरी हानि होती है :—(i) जिस संस्था से वे आते हैं, वहाँ उनके पद रिक्त हो जाते हैं और उनको भरने के लिये योग्य शिक्षक नहीं मिलते हैं; (ii) जिस संस्था में वे देर से पहुँचते हैं, वहाँ के छात्र उनके आने तक इधर-उधर भटकते फिरते हैं। दोनों दशायें शिक्षण-स्तर को निम्न करने मे सहायता देती हैं। क्योंकि अध्यापकों को थोड़े समय में अधिक पढ़ाना होता है। इसलिये उनका ध्यान शिक्षण-विधि पर केन्द्रित न रहकर, विषय-सामग्री को समाप्त करने पर केन्द्रित रहता है।

हमें आयोग के इस सुझाव मे कोई तर्क नहीं दिखाई देता है कि शिक्षकों को उत्तर-पुस्तिकाओ को जाँचने का पारिश्रमिक नही दिया जाना चाहिये। भला क्यों? परिश्रम का पारिश्रमिक तो हर कार्य के लिये हर जगह मिलता है। फिर शिक्षक ने क्या अपराध किया है? क्या यह, कि उसने शिक्षण-व्यवसाय को अपनाया है, एक ऐसे व्यवसाय को, जिसमे संलग्न व्यक्तियों के साथ कैसा भी व्यवहार किया जा सकता है—उचित या अनुचित? फैक्ट्री का मजदूर, रेलवे का कर्मचारी, डाकखाने का अधिकारी—जो भी अपने नियत समय के बाद (Overtime) अतिरिक्त कार्य करता है, अतिरिक्त पारिश्रमिक पाता है। यह सरकारी नियम है। तो क्या शिक्षक—मजदूर, कर्मचारी और अधिकारी—सबसे गया-गुजरा है कि उसे अपने अतिरिक्त समय मे अतिरिक्त कार्य करने के लिये पारिश्रमिक न दिया जाय? ऐसा करना तो मूक और असहाय शिक्षक के प्रति अन्याय के सिवा और कुछ न होगा।

६. शिक्षा का माध्यम
Medium of Instruction

आयोग ने विश्वविद्यालय-स्तर पर शिक्षा के माध्यम के विषय मे निम्नांकित सुझाव दिये हैं :—

१. विश्वविद्यालय-स्तर पर क्षेत्रीय भाषाओ (Regional Languages) को १० वर्ष की अवधि में शिक्षा के माध्यम के रूप में ग्रहण किया जाय।

२ पूर्व-स्नातक स्तर पर उच्च-शिक्षा यथासम्भव क्षेत्रीय भाषाओ के माध्यम से दी जाय और स्नातकोत्तर स्तर पर अंग्रेजी के माध्यम से।

३. यथासम्भव उच्च-शिक्षा के क्षेत्र में कार्य करने वाले सभी शिक्षक दो भाषाओं का ज्ञान रखें।

४ स्नातकोत्तर छात्र क्षेत्रीय तथा अंग्रेजी—दोनो भाषाओ मे व्याख्यानो को समझने तथा पठन-सामग्री का प्रयोग करने के योग्य हों।

५. अहिन्दी भाषी क्षेत्रों मे यदि कोई कालिज हिन्दी के माध्यम से शिक्षा प्रदान कर रहा है, तो उसे वैसा करने दिया जाय।

६. आधुनिक भारतीय भाषाओं (जिनमें उर्दू सम्मिलित हो) के विकास के लिये उच्च अध्ययन केन्द्रों की स्थापना की जाय।

७. शास्त्रीय तथा आधुनिक भारतीय भाषाओ को विश्वविद्यालय-स्तर पर वैकल्पिक विषयो के रूप मे रखा जाय। इस स्तर पर किसी भी भाषा को अनिवार्य न बनाया जाय।

८. विश्वविद्यालयो तथा सम्बद्ध कालिजो मे अंग्रेजी के अध्ययन के लिये उपयुक्त सुविधाएँ प्रदान की जायें।

६. अंग्रेजी के अतिरिक्त रूसी भाषा के अध्ययन के लिये भी विस्तृत रूप से सुविधायें प्रदान की जायें।

समीक्षा

इन भाषाओं के बारे में अध्याय ८ में विस्तार पूर्वक प्रकाश डाल चुके हैं। इसलिये यहाँ अधिक लिखना उचित तो नहीं जान पड़ता है, फिर भी समीक्षा के रूप में कुछ शब्दों को अंकित करना अनुचित नहीं होगा।

आयोग ने पूर्व-स्नातक स्तर पर क्षेत्रीय भाषाओं को, और स्नातकोत्तर स्तर पर अंग्रेजी को शिक्षा के माध्यम के स्थान पर आसीन किया है। क्षेत्रीय भाषाओं का सुझाव तर्कपूर्ण है, पर अंग्रेजी का नहीं। हाँ, यदि आयोग यह कहता कि कुछ समय तक—जब तक क्षेत्रीय भाषाओं में पुस्तकें उपलब्ध न हो, विज्ञानों का शिक्षण अंग्रेजी में किया जाय, तब तो कुछ औचित्य था। अन्य देशों के उदाहरण हमारे सामने हैं। जर्मनी, रूस इत्यादि देशों में स्नातकोत्तर शिक्षा का माध्यम उनकी अपनी भाषायें हैं, न कि अंग्रेजी। आप कह सकते हैं कि वे देश उन्नतिशील हैं। पर इस स्थिति में आप भी तो पहुँच सकते हैं, और पहुँचेंगे तभी—जब आप अंग्रेजी से मोह तोड़कर अपनी क्षेत्रीय भाषाओं को अपनायेंगे। ऐसा करने पर ही उनकी प्रगति होगी, वे शिक्षा के माध्यम के योग्य बनेंगी। विश्वास रखिये कि यदि आप अंग्रेजी में लिपटे रहे तो आपकी क्षेत्रीय भाषाओं का विकास नहीं होगा।

इन भाषाओं के विकास को ध्यान में रखकर और शिक्षा के स्तरों का उन्नयन करने के लिये भारत के शिक्षा-मन्त्री डा० सेन ने इस बात का बलपूर्वक समर्थन किया है कि शिक्षा का माध्यम क्षेत्रीय भाषायें होनी चाहिये। विचार तो अच्छा है। अपनी भाषा में पुस्तकें पढ़कर, व्याख्यान सुनकर, प्रश्न-पत्रों के उत्तर देकर छात्रों का हित अवश्य होगा। पर वास्तविकता यह है कि हित की अपेक्षा अहित अधिक होगा। इस सम्बन्ध में चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य के ये शब्द मनन करने के योग्य हैं —"यदि हम चाहते हैं कि भारत पृथक् द्वीपों में विभाजित न हो, तो अंग्रेजी के स्थान पर १४ क्षेत्रीय भाषाओं को स्थापित करना राष्ट्र के लिये बहुत खराब सौदा होगा।"[1]

आयोग का यह सुझाव भी मान्य नहीं है कि विश्वविद्यालय-स्तर पर किसी शास्त्रीय या आधुनिक भारतीय भाषा को अनिवार्य न बनाया जाय। इसका परिणाम तो यह होगा कि अनेकों छात्र बी० ए० और एम० ए० पास कर जायेंगे और उन्हें अपनी भाषाओं का भी पूर्ण ज्ञान नहीं होगा। ऐसी स्थिति में वे जीवन में प्रवेश करने पर क्या करेंगे ? जो भी कार्य वे करेंगे, जिस व्यवसाय को भी वे अपनायेंगे, उसमें उन्हें कुछ-न-कुछ लिखा-पढ़ी तो करनी ही होगी। यह कार्य वे कैसे करेंगे ? आज जब कि विश्वविद्यालय-स्तर पर भाषा का अध्ययन अनिवार्य है, ऐसे छात्रों का अभाव

---

1. C. Rajagopalachari : *The Pitfalls of Fourteen Regional Languages,* The Hindustan Times, August 28, 1967.

नहीं है, जो अपनी भाषा में अपने विचारों को व्यक्त नहीं कर सकते हैं। यदि इन्होंने भाषा का अध्ययन किया होता, तो इनकी स्थिति क्या होती—इसकी तनिक कल्पना तो कीजिये। अतः बुद्धिमानी इसी में है कि विश्वविद्यालय-स्तर पर क्षेत्रीय भाषा का अध्ययन वैकल्पिक न रखा जाकर, अनिवार्य बनाया जाय।

७. छात्र-सेवाएँ
Student Services

आयोग का विचार है कि छात्र-सेवाएँ केवल कल्याणकारी कार्य नहीं है, वरन् शिक्षा की एक अभिन्न अंग हैं। इनके अन्तर्गत स्वास्थ्य सेवाएँ, निवास की सुविधाएँ, मार्ग-प्रदर्शन तथा परामर्श आदि आते हैं। इनके सम्बन्ध में आयोग ने अधोलिखित सुझाव दिये हैं :—

१. विश्वविद्यालयों तथा कॉलेजों में उपयुक्त स्वास्थ्य सेवाएँ स्थापित करने के लिये क़दम उठाये जायँ।
२ छात्रों के लिये स्वास्थ्य-शिक्षा के अध्यापन की उपयुक्त व्यवस्था की जाय।
३. पूर्व-स्नातक स्तर पर २५ प्रतिशत तथा स्नातकोत्तर स्तर पर ५० प्रतिशत छात्रों को निवास-सुविधाएँ प्रदान की जायँ।
४. प्रत्येक १००० छात्रों के लिये एक परामर्शदाता (Counsellor) की नियुक्ति की जाय।
५. प्रत्येक विश्वविद्यालय में सूचना तथा रोजगार केन्द्र (Information & Employment Centre) की स्थापना की जाय। इसका संचालन छात्रों द्वारा किया जाय।
६. छात्रों के लिये पाठ्य-क्रम सहगामी क्रियाओं का कार्यक्रम विकसित किया जाय। ये क्रियाएँ केवल सत्र के लिये ही न हों, वरन् गर्मियों की छुट्टियों के लिये भी इनकी व्यवस्था की जाय।
७. सेवाओं (Welfare Services) के प्रशासन के लिये एक
. का डीन' (Dean of Student Welfare)

अभाव है। यह कहना
-सेवा तो केवल दिखाने के लिये
डाक्टर—दोनों होते
न। से किसी छात्र के साथ कोई
। ले जाना पड़ता है। अतः यह

आवश्यक है कि स्वास्थ्य-सेवाओ को स्थापित करने के लिये, जैसा कि आयोग ने लिखा है—न केवल कदम उठाये जायें, वरन् उन्हें पूर्ण रूप से और आधुनिक ढंग से संगठित भी किया जाय।

जैसा कि आयोग ने लिखा है—निवास-सुविधाओ को बहुत आवश्यकता है। भारत मे शिक्षा-विस्तार के इस युग मे कॉलिज और विश्वविद्यालय तो धड़ाधड़ खुलते जा रहे हैं, पर छात्रों को निवास की सुविधायें देने की ओर किसी का ध्यान नहीं है। अध्ययन तो छात्रो को करना है। फिर वे जहाँ चाहें रहें। यह दृष्टिकोण सर्वथा अनुचित है। जहाँ निवास की लिये छात्रवास हैं, वहाँ एक प्रत्यक्ष दोष यह है कि छात्रों को बहुत काफी धन व्यय करने के बाद भी वांछित सुविधायें नहीं मिलती हैं। या तो भोजन खराब होता है, या एक कमरे मे कई छात्र रहते हैं, या प्रतिबन्ध बहुत होते हैं या पूर्ण स्वतन्त्रता होती है। ये सभी बातें अनुचित हैं। अत निवास-सुविधाओं की व्यवस्था करते समय इस बात का पूर्ण ध्यान रखा जाय कि छात्रो को कोई कष्ट न हो और उन्हे आवश्यकता से अधिक धन व्यय न करना पडे।

छात्रो के विभिन्न गुणों का विकास करने के लिये पाठ्य-क्रम सहगामी क्रियाओं का आयोजन बहुत ही आवश्यक है, जैसा कि आयोग ने लिखा है, और जिनका आज के विश्वविद्यालयो और कॉलेजों में प्रायः पूर्ण अभाव है।

८. छात्र-संघ और छात्र-अनुशासन
Student Unions & Student Discipline

छात्र-संघों के बारे में आयोग के सुझाव निम्नलिखित हैं :—

१. प्रत्येक विश्वविद्यालय यह निर्धारित करे कि छात्र-संघ का संचालन किस प्रकार किया जायगा।
२. छात्र-संघ की सदस्यता स्वतः (Automatic) होनी चाहिये। परन्तु प्रत्येक छात्र को संघ द्वारा संगठित की जाने वाली क्रियाओं में से किसी एक को अवश्य चुनना चाहिये।
३. छात्र-संघ के पदाधिकारियों का चुनाव विश्वविद्यालयों के समुदायों द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से किया जाना चाहिये।
४. छात्रों तथा शिक्षकों की संयुक्त समितियों की स्थापना की जाय, जो छात्रों की वास्तविक कठिनाइयों का अध्ययन करें।
५. 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' विभिन्न विश्वविद्यालयों तथा कॉलिजों के छात्र-संघो के प्रतिनिधियों का वार्षिक सम्मेलन बुलाये।

छात्र-अनुशासन के सम्बन्ध मे आयोग का विचार है कि शिक्षा युवकों को सदाचरण के विभिन्न स्वरूपों को सीखने तथा उन्हें व्यवहार मे लाने के योग्य बनाये। अनुशासनहीनता का दायित्व किसी एक साधन पर नहीं डाला जा सकता है, वरन् इसके लिये सभी शैक्षिक साधन उत्तरदायी हैं। अतः अनुशासनहीनता को दूर करने के

लिये छात्रों, शिक्षकों, अभिभावकों, समाज, सरकार तथा राजनैतिक दल—सभी को मिलकर कार्य करना चाहिये। इसके अतिरिक्त शिक्षा-प्रणाली में जो दोष या कमियाँ हैं, उन्हें दूर करने के लिये ठोस प्रयास किये जाने चाहिये।

समीक्षा

आयोग ने छात्र-संघों को मान्यता प्रदान की है। उसने प्रत्येक विश्वविद्यालय को यह निर्णय करने की स्वतन्त्रता दे दी है कि उसका छात्र-संघ किस प्रकार कार्य करेगा। आयोग को यह स्वतन्त्रता नहीं देनी चाहिये थी। इसके विपरीत, हमारे विचार से आयोग को यह सुझाव देना चाहिये था कि सब विश्वविद्यालयों में छात्र-संघों की कार्य-प्रणाली, कर्त्तव्य और अधिकार समान हों। यह कार्य विशेषज्ञों की एक समिति द्वारा किया जाना चाहिये था। सब छात्र-संघों में समानता स्थापित हो जाने पर एक छात्र-संघ न तो दूसरे का अनुकरण करता, और न उसका उदाहरण ही प्रस्तुत करता।

छात्र-अनुशासनहीनता के बारे में जो थोड़े से शब्द आयोग ने लिखे हैं—वे सारगर्भित हैं। इस बात को आज स्वीकार किया जाने लगा है कि अनुशासनहीनता को दूर करने का दायित्व केवल छात्रों और शिक्षकों पर ही नहीं है, वरन् समाज के सब अंगों पर है।

अध्याय १३

उच्च-शिक्षा : छात्र-संख्या और कार्य-क्रम

HIGHER EDUCATION : ENROLMENTS & PROGRAMMES

इस अध्याय में आयोग ने अग्रलिखित बातों पर विचार किया है, जिनका वर्णन क्रमशः किया जा रहा है :—

१—उच्च-शिक्षा की सुविधाओं का विस्तार,
२—चयनात्मक प्रवेश-प्रणाली,
३—कॉलिज का आकार,
४—नवीन विश्वविद्यालयों की स्थापना,
५—अंशकालीन शिक्षा की सुविधाएँ,
६—स्त्री-शिक्षा का प्रसार।

१. उच्च-शिक्षा की सुविधाओं का विस्तार

Expansion of Facilities in Higher Education

आयोग का विचार है कि उच्च शिक्षा के प्रसार के लिये सुविधाओं आयोजन मानव-शक्ति सम्बन्धी आवश्यकताओं तथा रोजगार के अवसरों को ध्यान रखकर किया जाना चाहिये। आधुनिक आवश्यकताओं पर ध्यान देने से स्पष्ट जाता है कि १९८५-८६ तक पूर्व-स्नातक तथा स्नातकोत्तर स्तरों पर छात्रों की सं ४० लाख कर देनी पड़ेगी।[1] यह संख्या १९६५-६६ में १० लाख है। कृ इन्जीनियरिंग, चिकित्सा आदि व्यावसायिक कोर्सों में अधिकाधिक सुविधाएँ प्रदा करनी पड़ेंगी। यद्यपि उच्च-शिक्षा के लिये बहुत माँग है, पर इस माँग को एक सम

१. पुस्तक के अन्त में तालिका देखिये।

पर ही पूर्ण करना बहुत कठिन है। अतः राष्ट्रीय विकास के लिये मानव-शक्ति-सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूर्ण करना—प्राथमिक लक्ष्य निर्धारित किया जाय और इस माँग की पूर्ति के लिये 'चयनात्मक प्रवेश-प्रणाली' (System of Selective Admissions) को ग्रहण किया जाय।

समीक्षा

आयोग का यह अनुमान ठीक ही जान पड़ता है कि १९६५–६६ की अपेक्षा १९८५–८६ में पूर्व-स्नातक और स्नातकोत्तर स्तरों पर छात्रों की संख्या चार गुनी हो जायगी। क्योंकि देश औद्योगीकरण की ओर बढ़ रहा है, इसलिये आगामी वर्षों में कृषि, इंजीनियरिंग, चिकित्सा आदि विषयों की माँग बढ़ेगी। अतः इनके लिये पर्याप्त सुविधायें देनी पड़ेंगी। पर इसका अर्थ यह नहीं है कि जो भी छात्र किसी व्यावसायिक शिक्षा-संस्था में प्रवेश करना चाहे, उसे ऐसा करने का अवसर दिया जाय। ऐसा करने से व्यावसायिक शिक्षा और साथ ही सामान्य शिक्षा का भी स्तर गिर जायगा। इसलिये प्रवेश चाहने वाले छात्रों में से सर्वोत्तम का चुनाव करना वांछनीय होगा। इसी विचार से प्रेरित होकर आयोग ने 'चयनात्मक प्रवेश-प्रणाली' का सुझाव दिया है।

२. चयनात्मक प्रवेश-प्रणाली
System of Selective Admissions

उच्च शिक्षा-संस्थाओं में प्रवेश चाहने वाले छात्रों का चुनाव किस प्रकार किया जायगा—इसके सम्बन्ध में आयोग के विचार निम्नलिखित हैं :—

१. शिक्षा-संस्थाओं में छात्रों की संख्या का निश्चय—संस्थाओं में उपलब्ध शिक्षण-सुविधाओं और शिक्षकों की संख्या के आधार पर किया जाय।
२. विश्वविद्यालयों द्वारा प्रवेश-योग्यताओं की व्यवस्था की जाय।
३. विश्वविद्यालयों द्वारा प्रवेश चाहने वाले छात्रों में से सर्वोत्तम का चुनाव किया जाय।
४. जब तक नवीन रीतियों का विकास न हो, तब तक प्रवेश के लिये परीक्षाओं में प्राप्त अंकों को आधार बनाया जाय।
५. प्रत्येक विश्वविद्यालय प्रवेश सम्बन्धी समस्त मामलों का निर्णय करने के लिये 'विश्वविद्यालय-प्रवेश-परिषद्' (Board of University Admissions) का निर्माण करे।
६. 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' उच्च-शिक्षा के विभिन्न पाठ्य-विषयों (Courses) में छात्रों के चुनाव के लिये विभिन्न रीतियों एवं प्रक्रियाओं को विकसित करने के विचार से 'केन्द्रीय जाँच संगठन' (Central Testing Organization) की स्थापना करे।

समीक्षा

आयोग ने लिखा है कि छात्रों की संख्या का निश्चय शिक्षा- उपलब्ध सुविधाओं को दृष्टिकोण में रखकर किया जाय। ऐसा किया आवश्यक है। यदि ऐसा न किया गया, तो एक शिक्षक को पढ़ाने के लिये भीड़ मिलेगी। ऐसी दशा में उसके शिक्षण का स्तर गिर जायगा। इसके कमरों में स्थानाभाव के कारण छात्रों में असन्तोष उत्पन्न होगा, जिसके अनुशासनहीनता हो सकती है। यदि छात्रों की संख्या शिक्षण-सामग्री के नहीं होगी, तो भी उपरोक्त परिणाम निकलेंगे। अतः आयोग के सुझाव ही छात्रों को प्रवेश देना विवेकपूर्ण होगा।

आयोग का यह सुझाव भी अच्छा है कि छात्र-प्रवेश की व्यवस्था करं 'विश्वविद्यालय-प्रवेश-परिषद्' और 'केंद्रीय जाँच संगठन' का निर्माण कि इससे सभी परिषदों की कार्य-प्रणाली संगठन के आदेशानुसार एक-सी हो फलतः छात्र कुछ विशिष्ट विश्वविद्यालयों की ओर यह सोचकर नहीं दौड़ेंगे प्रवेश सरल है।

३. कॉलेज का आकार
Size of College

आयोग का विचार है कि बड़े कॉलिजों को स्थापित करने की साम को प्रोत्साहित किया जाय, जो कुशल एवं मितव्ययी हों। एक कॉलिज का ५०० छात्रों तथा अधिकाधिक १००० या इससे अधिक छात्रों के लिये शिक्षण-प्रदान करे। इस दृष्टिकोण से अधोलिखित उपायों को काम में लाया जाय :-

१. 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' यह अध्ययन करे कि छोटे कॉ ध्यान में रखकर बड़े कॉलिजों की स्थापना कहाँ की जाय।
२. विश्वविद्यालय द्वारा कॉलिजों को सम्बद्धता प्रदान करते नये कॉलिजों की स्थापना की अपेक्षा प्रचलित कॉलिजों के विस्तार दिया जाय।
३. नवीन कॉलिजों को मान्यता प्रदान करते समय यह ध्यान में रख कि उनकी स्थापना से प्रचलित कॉलिजों के उपयुक्त विकास पर प्रभाव तो नहीं पड़ेगा।

समीक्षा

आयोग का यह सुझाव बहुत ही उपयुक्त है कि बड़े कॉलिजों की स की जाय, जिनमें छात्रों की संख्या ५०० से कम न हो। इस समय क्या हो रहा कॉलिजों की संख्या टिड्डियों के समान बढ़ रही है और वे टिड्डियों के सम छोटे हैं। आपको ४, ५ या ६ कमरों के कॉलिज बहुत मिलेंगे। इनमें केवल ३ कक्षाओं को शिक्षा देने की व्यवस्था है। यहाँ स्नातकपूर्व शिक्षा की अवधि २

की है, वहाँ २ कक्षायें; और जहाँ यह अवधि ३ वर्ष की है, वहाँ ३ कक्षायें। ऐसे कॉलेज न तो कुशलता पूर्वक कार्य ही करते हैं, और न वे मितव्ययी ही होते हैं। ये तो नाम-मात्र के कॉलेज हैं—किसी सेठ की सम्पत्ति, किसी दल के प्रचार-प्लेटफ़ार्म, किसी महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति के अहंकार के प्रतीक। इनको तो बन्द कर देना ही उचित है। इनके स्थान पर सोच-समझ कर ऐसे कॉलेज स्थापित किये जायें, जिनका शिक्षा-स्तर उच्च हो, जिनमें अध्ययन की सभी सुविधायें हों, और जिन पर छात्र-संख्या के अधिक होने के कारण कम धन व्यय करना पड़े।

४. नवीन विश्वविद्यालयों की स्थापना
Establishment of New Universities

आयोग का विचार है कि नवीन विश्वविद्यालयों की स्थापना करना अनिवार्य है। बम्बई, कलकत्ता, दिल्ली तथा मद्रास में चतुर्थ पंचवर्षीय योजना के अन्त तक दो-दो विश्वविद्यालय होने चाहिये। केरल तथा उड़ीसा राज्यों में अतिरिक्त विश्वविद्यालय स्थापित करने की माँग उचित है। उत्तरी-पूर्वी क्षेत्र के पहाड़ी इलाक़े में एक विश्वविद्यालय की स्थापना की जाय, जिससे वहाँ की आर्थिक और सामाजिक प्रगति हो सके। आयोग के मतानुसार नवीन विश्वविद्यालयों की स्थापना करते समय अधोलिखित सिद्धान्तों को ध्यान में रखा जाय :—

१. कोई नवीन विश्वविद्यालय तब तक स्थापित न किया जाय, जब तक 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' की सहमति तथा आवश्यक धन की व्यवस्था न हो जाय।
२. नवीन विश्वविद्यालय सामान्यतः उस स्थान पर स्थापित न किया जाय, जहाँ कुछ समय से कोई विश्वविद्यालय सचालित नहीं किया जा रहा है।
३. उपकुलपति प्रथम दो या तीन वर्षों तक 'नियोजन-परिषद' (Planning Board) की सहायता से नवीन विश्वविद्यालय का कार्य चलाये। इस अवधि के उपरान्त ही विश्वविद्यालय को स्वयं कार्य चलाने के लिये अनुमति दी जाय।
४. नवीन विश्वविद्यालयों की स्थापना तभी की जाय, जब इस बात का विश्वास हो जाय कि उससे शिक्षा के स्तर में उन्नति होगी और उसमें उच्च स्तर का अनुसधान कार्य किया जायगा।
५. जिस स्थान पर कई स्नातकोत्तर कॉलेज कार्य रहे हैं, उनको संगठित करके विश्वविद्यालय का रूप दिया जाय।
६. सरकार द्वारा 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' को इतना काफ़ी धन दिया जाय कि वह सब नये विश्वविद्यालयों को सुचारु रूप से कार्य करने के लिये आर्थिक सहायता दे सके।

समीक्षा

हमारे विचार से इस समय तक इतने विश्वविद्यालय स्थापित हो चुके
किसी नवीन विश्वविद्यालय की स्थापना आवश्यक नहीं है। उदाहरणार्थ—
प्रदेश मे इस समय ११ विश्वविद्यालय हैं। हमारी समझ से इतने भी विश्ववि
अधिक हैं। अधिक विश्वविद्यालयो की स्थापना से व्यय बढ़ जाता है, क्योंकि
विश्वविद्यालय मे एक उप-कुलपति और एक रजिस्ट्रार का होना आवश्य
यदि ११ के बजाय ३ या ४ विश्वविद्यालय हो, तो इन दोनो पदाधिकारियों
प्रतिवर्ष जो हजारो रुपये व्यय होते हैं, वे सरलता से बच सकते हैं। इस
शिक्षा पर किया जाने वाला व्यय कम हो जायगा और छात्रों को भी परीक्षा
कम देना पड़ेगा। यदि इन दृष्टिकोणों से विचार किया जाय तो नवीन विश्व
का शिलान्यास उस समय तक के लिये रोक दिया जाय, जब तक प्रचलित वि
विद्यालयों को पूर्ण रूप से संगठित न कर दिया जाय। यत्र-तत्र-सर्वत्र विश्ववि
होने चाहिये—इस नीति का अनुकरण किया जाना उचित नहीं है।

५. अंशकालीन शिक्षा की सुविधाएं
Facilities for Part-Time Education

आयोग के मतानुसार अंशकालीन शिक्षा की सुविधाओ का विस्तार
जाना चाहिये। यह शिक्षा दो प्रकार से दी जा सकती है : (१) पत्र व्यवहार,
(२) सांयकालीन कॉलिजो द्वारा। आयोग ने इस बात पर बल दिया है कि अंशक
शिक्षा मे विज्ञान और प्रौद्योगिकी (Technology) को विशेष स्थान दिया ज
उसने यह आशा व्यक्त की है कि १९८६ तक उच्च शिक्षा की सम्पूर्ण छात्र-संख
से ⅓ के लिये अंशकालीन शिक्षा की व्यवस्था हो जायगी।

समीक्षा

आयोग का अंशकालीन शिक्षा का सुझाव प्रशंसनीय है, क्योंकि ऐसे अ
नवयुवक और नवयुवतियां हैं, जो अपना भरण-पोषण करने के लिये कुछ
भी करना चाहते हैं और साथ ही अपने ज्ञान की वृद्धि करने के लिये भी लाल
रहते हैं। ऐसे व्यक्तियों की मनोभिलाषाएँ तभी पूर्ण हो सकती हैं, जब आयो
अनुसार अंशकालीन शिक्षा की समुचित व्यवस्था की जाय।

६. स्त्री-शिक्षा का प्रसार
Expansion of Women's Education

आयोग के मतानुसार इस समय उच्च-शिक्षा में स्त्रियों और पुरुषों
अनुपात १:४ का है, जब कि विभिन्न क्षेत्रो में शिक्षित स्त्रियों की मांग को पूरा क
के लिये यह अनुपात १:३ का होना चाहिये। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये आय
ने निम्नलिखित उपायों का सुझाव दिया है :—

१. पर्याप्त छात्रवृत्तियों की व्यवस्था की जाय।
२. उपयुक्त एवं मितव्ययी छात्रावासों की व्यवस्था की जाय।
३. पूर्व-स्नातक स्तर पर स्त्रियों के लिये पृथक् कॉलेजों की स्थापना की जाय। ऐसा तभी किया जाय, जब इनके लिये स्थानीय माँग हो। स्नातकोत्तर स्तर पर पृथक् कॉलेज स्थापित करने की आवश्यकता नहीं है।
४. स्त्रियों को कला, मानवशास्त्र, विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी आदि पाठ्य-विषयों में से चयन करने की स्वतन्त्रता प्रदान की जाय।
५. गृह-विज्ञान, शिक्षा तथा सामाजिक कार्य (Social Work) के पाठ्य-विषयों को विकसित एवं उन्नत बनाया जाय।
६. एक या दो विश्वविद्यालयों में विशेषतः स्त्रियों की शिक्षा से सम्बन्धित 'रिसर्च यूनिट' (Research Units) स्थापित किये जायें।

समीक्षा

स्वतन्त्र भारत में स्त्रियों को वे सभी अधिकार प्रदान किये गये हैं, जो पुरुषों को प्राप्त हैं। परिणामतः स्त्रियों में जागृति प्रारम्भ हो गई है। वे घरों की चहार-दिवारी के अन्दर न रहकर पुरुषों से प्रतियोगिता करने के लिये विभिन्न क्षेत्रों में प्रवेश करने लगी हैं। उन्हें इस प्रतियोगिता के लिये तैयार करना और उनकी अभिलाषाओं को पूर्ण करने का दायित्व शिक्षा पर है। अतः जैसा कि आयोग ने लिखा है, उनके लिये शिक्षा की सभी प्रकार की सुविधाओं की व्यवस्था किया जाना अनिवार्य है। इस सम्बन्ध में आयोग ने जितने सुझाव दिये हैं, बहुत ही अच्छे हैं, पर एक सुझाव का अभाव खटकता है। स्त्रियों के लिये पृथक् सायंकालीन कॉलेजों की स्थापना की जानी चाहिये, जिससे घर से बाहर कार्य करने वाली स्त्रियाँ अपनी ज्ञान-पिपासा को शान्त कर सकें और बिना किसी विशेष कठिनाई के उच्च-शिक्षा ग्रहण करने का अवसर प्राप्त कर सकें।

अध्याय १४

विश्वविद्यालयों का अभिशासन

GOVERNANCE OF UNIVERSITIES

इस अध्याय में आयोग ने अधोलिखित बातों का विवेचन किया है :—

१—विश्वविद्यालय-स्वाधीनता की आवश्यकता,
२—विश्वविद्यालय-स्वाधीनता-सम्बन्धी-सुझाव,
३—उप-कुलपतियों के कार्य और नियुक्ति,
४—विश्वविद्यालयों का विधान,
५—सम्बद्ध कॉलिज,
६—अन्तर-विश्वविद्यालय-परिषद्,
७—विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग,
८—विश्वविद्यालयों की वित्तीय-व्यवस्था।

१. विश्वविद्यालय-स्वाधीनता की आवश्यकता

Need of University Autonomy

आयोग का विचार है कि विश्वविद्यालयों को अपनी आवश्यकताओं अनुसार प्रशासन एवं संगठन की गतिशील रीतियों का विकास करना चाहिये। इ कार्य में 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' उनकी सहायता करे और वह विश्वविद्याल के प्रशासन एवं संगठन सम्बन्धी समस्याओं का अध्ययन करने के लिये विभि 'अध्ययन समूहों' (Study Groups) की नियुक्ति करे। विश्वविद्यालय की स्वाधीनत (Autonomy)—छात्रों के चुनाव, शिक्षकों की उन्नति, पाठ्य-विषयों, शिक्षण-विधिय तथा अनुसन्धान की समस्याओं एवं क्षेत्रों के निर्धारण में निहित है। अतः विश्व विद्यालयों की स्वाधीनता को कायम रखना परमावश्यक है।

२. विश्वविद्यालय-स्वाधीनता सम्बन्धी सुझाव
Suggestions Regarding University Autonomy

आयोग ने विश्वविद्यालयों की स्वाधीनता के सम्बन्ध में नीचे लिखे सुझाव दिये :—

१. विश्वविद्यालय के 'निकायों' (Bodies) में असाहित्यिक (Non academic) तत्त्वों का प्रतिनिधित्व समाज के व्यापक हितों को व्यक्त करने के लिये आवश्यक है, परन्तु यह उन पर लादा न जाय।
२. विश्वविद्यालयों द्वारा अपने विभागों को पर्याप्त स्वाधीनता प्रदान की जाय।
३. विश्वविद्यालय के प्रशासन में इस सिद्धान्त को ध्यान में रखा जाय कि उत्तम विचारों का जन्म प्राय निम्न स्तरों पर होता है।
४. प्रत्येक विभाग के अध्यक्ष के अधीन एक प्रबन्ध-समिति को व्यापक आर्थिक और प्रशासकीय शक्तियाँ प्रदान की जायें।
५. कॉलिजों की स्वायत्तता एवं स्वतन्त्रता का आदर उसी रूप में किया जाय, जिस रूप मे विश्वविद्यालय अपनी स्वायत्तता का करता है।
६ प्रत्येक कॉलिज के प्रत्येक विभाग मे शिक्षकों एव छात्रों की संयुक्त-समितियाँ (Joint Committees) बनाई जायें। इनके अतिरिक्त, एक केन्द्रीय समिति प्रधानाचार्य की अध्यक्षता मे नियुक्त की जाय, जो सभी समान समस्याओं एव कठिनाइयों का अध्ययन करे।
७. विश्वविद्यालय की साहित्यिक परिषदों (Academic Councils) तथा सभाओं (Courts) मे छात्रों के प्रतिनिधियों को स्थान दिया जाय।
८ 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग', 'अन्तर-विश्वविद्यालय परिषद' (Inter University Board), सरकार और विश्वविद्यालयों के बीच समय-समय पर विचार-विमर्श करने, शिक्षित किये जाने वाले छात्रों की संख्या को निश्चित करने, पाठ्य-विषय एवं प्रयोगात्मक अनुसन्धान की समस्याओं का समाधान करने के लिये एक उपयुक्त ढंग या मार्ग की खोज की जाय।
९. 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग', 'अन्तर-विश्वविद्यालय परिषद' तथा शिक्षित व्यक्ति—विश्वविद्यालयों की स्वाधीनता के सम्बन्ध मे जनमत का निर्माण करें।
१०. विश्वविद्यालयों को अपनी स्वाधीनता को क़ायम रखने के लिये प्रयत्न करते रहना चाहिये। इस सम्बन्ध मे उनका सबसे महत्त्वपूर्ण दायित्व यह है कि वे अपने बौद्धिक तथा सार्वजनिक कार्यों को पूरी लगन से करें।

समीक्षा

आजकल हमारे विश्वविद्यालयो में स्वाधीनता का जो अभाव है, उसका मुख्य कारण वे व्यक्ति हैं, जिनका शिक्षा से कोई सम्बन्ध नहीं है। उनको विश्वविद्यालयों के निकायों मे प्रतिनिधित्व इसलिये दिया जाता है जिससे कि विश्वविद्यालयों के अधिकारियों को यह पता चलता रहे कि समाज के हित क्या हैं, और वह किस प्रकार की शिक्षा का आयोजन चाहता है। विश्वविद्यालयो मे समाज के प्रतिनिधि इन कार्यों को करते नहीं है, वरन् विश्वविद्यालय पर अपना अधिकार स्थापित करने का प्रयास करते हैं और प्रायः वे सफल भी होते हैं। फलस्वरूप विश्वविद्यालयो मे राजनीति का समावेश होता है और वे शिक्षा प्रदान करने के कार्य को उचित प्रकार से नहीं कर पाते हैं। अतः जैसा कि आयोग ने कहा है, समाज के प्रतिनिधियो को केवल समाज के विभिन्न हितो का प्रतिनिधित्व करना चाहिये। उन्हें शैक्षिक मामलो मे हस्तक्षेप करने की आज्ञा नहीं दी जानी चाहिये।

आयोग के अन्य सुझाव भी मान्य हैं। विभागो के अध्यक्षो को शक्तियाँ मिलने से विभागो मे अनिवार्य रूप से सुधार होगा। परिषदो और समाओ में छात्रों को प्रतिनिधित्व अवश्य मिलना चाहिये। वे विश्वविद्यालय के प्रमुख और महत्त्वपूर्ण अंग हैं, पर उन्हीं को प्रतिनिधित्व प्राप्त नहीं है।

३. उप-कुलपतियों के कार्य और नियुक्ति
Role & Appointment of Vice-Chancellors

आयोग ने उप-कुलपतियो के कार्यों और नियुक्ति के बारे मे निम्नलिखित सुझाव दिये :—

१. विश्वविद्यालय-जीवन के प्रारम्भिक वर्षों मे उप-कुलपति की नियुक्ति का अधिकार विज़िटर (Visitor) / चान्सलर के हाथ में होना चाहिये।
२. उप-कुलपति सामान्यतः एक प्रख्यात शिक्षा-शास्त्री या विद्वान् व्यक्ति होना चाहिये। इसके साथ उसे प्रशासकीय अनुभव भी होना चाहिये।
३. उप-कुलपति का कार्यकाल ५ वर्ष होना चाहिये और उसे दो बार से अधिक एक ही विश्वविद्यालय मे इस पद पर नियुक्त नहीं किया जाना चाहिये।
४. उप-कुलपति का पद पूर्णकालीन और सवैतनिक होना चाहिये।
५. उप-कुलपति की सेवा-निवृत्ति (Retirement) की आयु ६५ वर्ष की होनी चाहिये। यदि कोई व्यक्ति असाधारण रूप से योग्य एवं प्रतिभाशाली है तो उसके लिये इस आयु को बढ़ाया जा सकता है।
६. इस समय उप-कुलपति का चुनाव विश्वविद्यालय द्वारा ही किया जाना चाहिये या विश्वविद्यालय 'दिल्ली विश्वविद्यालय' के ढंग को अपना सकते हैं।

७. विश्वविद्यालय के कार्य को सुचारु रूप से चलाने लिये उप-कुलपति को पर्याप्त शक्तियाँ प्रदान की जानी चाहिये।
८. जब उप-कुलपति की सेवा-निवृत्ति की अवधि १ वर्ष रह जाय, तभी उसके उत्तराधिकारी की नियुक्ति हो जानी चाहिये।

समीक्षा

उप-कुलपति के कार्य-काल के बारे मे यह सुझाव बहुत अच्छा है कि वह अपने पद पर ५ वर्ष कार्य करे। इतना समय हर दृष्टि से उपयुक्त है, क्योंकि यदि वह योग्य व्यक्ति है, तो विश्वविद्यालय में अनेकों प्रकार के सुधार कर सकता है। यह सुझाव भी अच्छा है कि उसे ६५ वर्ष की आयु में अपना पद छोड़ देना चाहिये। इस समय आयु पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है। यह प्रतिबन्ध बहुत आवश्यक है, क्योंकि अधिक आयु का व्यक्ति अपने कर्त्तव्यों का कुशलता से पालन नहीं कर सकता है।

यह सुझाव कि एक व्यक्ति दो बार एक विश्वविद्यालय का उप-कुलपति हो सकता है, उचित नहीं प्रतीत होता है। यदि संयोग से कोई उप-कुलपति अयोग्य है, तो विश्वविद्यालय का सत्यानाश हो जायगा। इसके विपरीत, यदि वह योग्य है तो कोई दूसरा विश्वविद्यालय उसकी सेवाओं से वंचित रह जायगा।

४. विश्वविद्यालयों का विधान
Legislation for Universities

आयोग ने विश्वविद्यालयों के विधान या आन्तरिक प्रशासन के सम्बन्ध मे निम्नलिखित सुझाव दिये :—

१ 'कोर्ट' (Court)—विश्वविद्यालय की नीतियाँ बनाने वाला होना चाहिये, जिसमे १०० से अधिक सदस्य नहीं होने चाहिये। इनमें से आधे सदस्य बाहर के होने चाहिये।
२. विश्वविद्यालय की एक कार्यकारिणी-परिषद् (Executive Council) होनी चाहिये, जिसका अध्यक्ष उप-कुलपति होना चाहिये। इस परिषद् के सदस्यों की संख्या १५ से २० तक होनी चाहिये। इस संख्या के आधे सदस्य आन्तरिक तथा आधे बाहर के होने चाहिये।
३. साहित्य-परिषद् (Academic Council) पाठ्य-विषयों तथा स्तरों (Standards) के निर्धारण के लिये एकमात्र अधिकारिक संगठन होना चाहिये।
४. यदि साहित्य-परिषद् को समय-समय पर नहीं बुलाया जा सके, तो उसकी एक स्थायी समिति (Standing Committee) की स्थापना की जानी चाहिये, जो आवश्यक मामलों पर निर्णय दे सके।
५. प्रत्येक विश्वविद्यालय द्वारा प्रतिदिन के प्रशासन से सम्बन्धित स्थायी

योजना तथा मूल्यांकन के लिये एक 'साहित्य-नियोजन-परिषद' (Academic Planning Board) की स्थापना की जानी चाहिये।

६. 'अन्तर-विश्वविद्यालय परिषद' (Inter-University Board) को एक समिति नियुक्त करनी चाहिए, जो कन्वोकेशन कार्यों की प्रक्रियाओं में सुधार लाने के कार्य करे।

७. राज्यों के गवर्नर, राज्य के सभी विश्वविद्यालयों के 'विज़ीटर' (Visitor) होने चाहिए और वे विश्वविद्यालय के कार्यों की जाँच करने के अधिकारी होने चाहिए।

८. 'शिक्षा-मन्त्रालय' तथा 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' भारत में विश्वविद्यालयों के विधान में सुधार लाने के लिये क़दम उठाएँ।

९. विश्वविद्यालयों के विधान ऐसे ढंग से निर्मित किये जाएँ, जिससे उनमें कालान्तर में संशोधन एवं परीक्षण किया जा सके।

१०. 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग', 'शिक्षा-मन्त्रालय' तथा राज्य-सरकारों के बीच विचार-विमर्श के लिये एक उपयुक्त ढंग या मार्ग की खोज की जाय।

११. भारत-सरकार विश्वविद्यालय-स्वाधीनता तथा उच्च-शिक्षा के समुचित विकास के सम्बन्ध में एक उपयुक्त नीति निर्धारित करने के लिये सर्वोच्च न्यायालय से प्रार्थना करे।

समीक्षा

आयोग ने अपने सुझावों द्वारा विश्वविद्यालयों के आन्तरिक प्रशासन को निश्चित रूप देने का प्रयास किया है। 'कोर्ट', 'कार्यकारिणी परिषद', 'साहित्य-परिषद', एवं उसकी 'स्थायी समिति' और 'साहित्य-नियोजन-परिषद' के कार्यों का विभाजन इस प्रकार किया गया है कि उनके कार्य-क्षेत्र एक-दूसरे से बिल्कुल अलग रहें और उनमें किसी प्रकार का संघर्ष उत्पन्न न होने पाये।

आयोग ने इस बात पर विशेष बल दिया है कि विश्वविद्यालय अपनी स्वाधीनता का पूर्ण उपयोग करें और सरकार उन्हें इस कार्य में सहायता देने के लिये सर्वोच्च न्यायालय से एक उपयुक्त नीति को निर्धारित करने के लिए कहे। यदि यह नीति निर्धारित हो गई, तो विश्वविद्यालयों की स्वाधीनता पूर्ण रूप से सुरक्षित हो सकती।

५. सम्बद्ध कॉलेज
Affiliated Colleges

आयोग ने विश्वविद्यालयों से सम्बद्ध कॉलेजों के बारे में निम्नलिखित सुझाव

१. विश्वविद्यालय, राज्य-सरकार से विचार विमर्श करके ही कॉलेजों को सम्बद्धता प्रदान करें।

२. राज्य मे उप-कुलपतियों की एक समिति नियुक्त की जाय, जो कॉलिजों को सहायता-अनुदान प्रदान करने के सम्बन्ध में शिक्षा-विभाग को परामर्श दे।
३ प्रत्येक सम्बद्धक विश्वविद्यालय (Affiliating University) में सम्बद्ध-कॉलिजो की एक परिषद् होनी चाहिए, जो विश्वविद्यालय को सम्बद्धता-सम्बन्धी मामलों में सलाह दे।
४ प्रचलित निरीक्षण-पद्धति को और शक्तिशाली बनाया जाय।
५ सम्बद्धता को एक विशेषाधिकार माना जाय।
६. सम्बद्ध कॉलिजो मे छात्रों की संख्या का निर्णय—उनमें प्राप्त शिक्षण-सुविधाओं के अनुसार किया जाय।

समीक्षा

जैसा कि आयोग ने लिखा है—कॉलिजों को मान्यता देने से पहले विश्वविद्यालयों को इस सम्बन्ध मे राज्य सरकार की सलाह लेनी चाहिए। कारण यह है कि कॉलिजो को सहायता-अनुदान सरकार देती है। प्राय ऐसा होता है कि एक विश्वविद्यालय अपने हित को ध्यान मे रखकर बिना सोचे-समझे अनेकों कॉलिजों को मान्यता दे देता है। सरकार इन सब कॉलिजों को सहायता-अनुदान नहीं दे पाती है। परिणाम यह होता है कि इन कॉलिजों का शिक्षण-स्तर निम्न रहता है। आज ऐसे अनेकों कॉलिज हैं, जिनके बारे में यह बात कही जा सकती है। अतः कॉलिजो को मान्यता देने मे केवल सरकार की सलाह ही न ली जाय, वरन् वह इनकी संख्या पर अंकुश भी रखे।

सम्बद्ध कॉलिजों में छात्रों की सख्या पर अकुश रखना आवश्यक है, क्योंकि सख्या अधिक होने से शिक्षण-स्तर निम्न होता है, और छात्रों मे अनुशासनहीनता की भावना का उदय होता है।

६. अन्तर-विश्वविद्यालय-परिषद्
Inter-University Board

आयोग ने 'अन्तर-विश्वविद्यालय परिषद्' के सम्बन्ध में निम्नलिखित सुझाव दिये :—

१. सभी वैध या मान्य विश्वविद्यालय 'अन्तर-विश्वविद्यालय परिषद्' के सदस्य होने चाहिये।
२. भारत में किसी वैध या मान्य विश्वविद्यालय द्वारा प्रदान की गई उपाधियाँ या डिप्लोमा सभी वैध या मान्य विश्वविद्यालयो द्वारा मान्य होनी चाहिये।
३. 'अन्तर-विश्वविद्यालय-परिषद्' को आर्थिक दृष्टिकोण से दृढ़ बनाया जाय, जिससे वह परामर्श, अनुसन्धान तथा सेवा-सम्बन्धी कार्यों को कर सके।

७. विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग
University-Grants Commission

'शिक्षा-आयोग' ने 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' के लिये निम्नांकित कार्य निर्धारित किये :—

१. सम्पूर्ण उच्च-शिक्षा को एक इकाई माना जाय और 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' इसका प्रतिनिधित्व करे।
२. कृषि, इन्जीनियरिंग तथा मेडिकल शिक्षा के लिये पृथक् रूप में 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' जैसे संगठन स्थापित किये जायें, और इन तीनों प्रकार की शिक्षा में सामंजस्य स्थापित किया जाय।
३. 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' में १२ से १५ तक सदस्य हों, और इस संख्या के १/३ सदस्य सरकार के उच्च कर्मचारी हों।
४. 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' द्वारा 'निरीक्षण-समितियाँ' (Visiting Committees) नियुक्त की जायें, जो ३ वर्ष में एक बार प्रत्येक विश्वविद्यालय के सभी कार्यों का सूक्ष्मातिसूक्ष्म निरीक्षण करें।
५. 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' अपने दायित्वों को पूर्ण करने के लिये स्थायी समितियों की नियुक्ति करे।
६. 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' को सरकार द्वारा पर्याप्त धनराशि प्रदान की जाय।
७. विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' को सामंजस्य स्थापित करने के कार्य में सहायता देने के लिये राज्यों में 'विश्वविद्यालय-अनुदान-समितियाँ' (University Grants Committees) नियुक्त की जायें।

समीक्षा

इस समय 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' बहुत सराहनीय कार्य कर रहा है, फिर भी समीक्षा के दो शब्द लिख देना अनुचित न होगा। 'शिक्षा-आयोग' का सुझाव है कि 'अनुदान-आयोग' के समान तीन और आयोगों का संगठन किया जाय। यह विचार उपयुक्त नहीं जान पड़ता है, क्योंकि ऐसा करने से व्यय कम-से-कम चौगुना हो जायगा। भारत की वर्तमान स्थिति में—जब कि धन का इतना अभाव है, व्यय को व्यर्थ में बढ़ाना विवेकपूर्ण नहीं प्रतीत होता है। हाँ, यह किया जा सकता है कि वर्तमान 'अनुदान-आयोग' में कुछ सदस्य बढ़ा दिये जायें और २ या ३ सदस्यों की समितियाँ बना दी जायें—जो कृषि, इन्जीनियरिंग और मेडिकल शिक्षा की देख-भाल करें।

८. विश्वविद्यालयों की वित्तीय व्यवस्था
University Finances

आयोग ने विश्वविद्यालयों की आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिये अधोलिखित सुझाव दिये :—

१. राज्य-सरकारें, विश्वविद्यालयों को पर्याप्त आर्थिक सहायता दें और उन्हें धन को व्यय करने की पर्याप्त स्वतन्त्रता दें।
२. 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' को इस योग्य बनाया जाय कि वह राज्य के विश्वविद्यालयों को अपने विकास तथा अपनी स्थिति को बनाये रखने के लिये अनुदान प्रदान कर सके।
३. विकास के लिये अनुदानों को देने में राज्य-सरकारें, 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' को सहयोग दें; अर्थात् दोनों इन अनुदानों की धनराशि को वहन करें।
४. राज्य-सरकारें विश्वविद्यालयों को सहायता-अनुदान देने के लिये एक समय में 'सब धन' (Block Grants) देने की पद्धति को अपनायें।
५. विश्वविद्यालयों की वित्तीय व्यवस्था को 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' द्वारा समय-समय पर दिये गये परामर्शों के आधार पर दृढ बनाया जाय।
६. विश्वविद्यालयों को सरकार के प्रत्यक्ष हस्तक्षेप तथा जनता द्वारा प्रत्यक्ष रूप से उसके हिसाब-किताब की जाँच करने से मुक्त रखा जाय।

समीक्षा

आयोग का यह सुझाव तो अच्छा है कि राज्य की सरकारें विश्वविद्यालयों को आर्थिक सहायता दें। पर ऐसा किया जाना सम्भव नहीं दिखाई देता है। कुछ समय पूर्व *विश्वविद्यालयों और उनसे सम्बद्ध कॉलेजों के अध्यापकों की वेतन-वृद्धि* का प्रश्न उपस्थित हुआ था। उस समय श्री चागला शिक्षा-मन्त्री के पद पर थे। उन्होंने आश्वासन दिया था कि वेतन-वृद्धि में जो धन व्यय होगा, उसका कुछ भाग केन्द्रीय सरकार भी देगी, फिर भी कुछ राज्यों ने शिक्षकों के वेतनों को बढ़ाकर अपने व्यय में वृद्धि करना उचित नहीं समझा। इस प्रत्यक्ष उदाहरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि अब भी कुछ राज्यों की सरकारें आयोग के इस सुझाव को स्वीकार नहीं करेंगी कि वे विश्वविद्यालयों को अनुदान दें।

अध्याय १५

कृषि की शिक्षा

EDUCATION FOR AGRICULTURE

इस अध्याय में आयोग ने कृषि-शिक्षा के प्रायः सभी अंगों का वर्णन किया है और उनको अधोलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत रखा है :—

१—कृषि के लिये शिक्षा का कार्य-क्रम,

२—कृषि-विश्वविद्यालय,

३—कृषि-कॉलेज,

४—कृषि के विकास में अन्य विश्वविद्यालयों का योग,

५—कृषि-पॉलिटेक्नीक,

६—विद्यालयों में कृषि-शिक्षा,

७—प्रसार-कार्य-क्रम ।

१. कृषि के लिये शिक्षा का कार्य-क्रम

Programme of Education for Agriculture

आयोग ने लिखा—"कृषि के लिये शिक्षा के कार्य-क्रम को शिक्षण, अनुसंधान और विस्तार के तीन मुख्य तत्वों के प्रभावपूर्ण सामंजस्य पर आधारित करना पड़ेगा । इस दृष्टिकोण को ध्यान में रखकर आयोग ने कृषि-शिक्षा के उत्तम कार्य-क्रम में निम्नलिखित बातों को स्थान दिया है :—

१. अनुसन्धान, प्रशिक्षण तथा प्रसार का कार्य करने के लिये कृषि-विश्वविद्यालयों की स्थापना ।
२. प्रतिभाशाली छात्रों, अन्वेषकों तथा शिक्षकों को कृषि की ओर आकर्षित करना ।
३. कृषि-कॉलेजों का सुधार ।

४. अन्य विश्वविद्यालयों तथा उच्च-शिक्षा के संस्थानों मे कृषि-सम्बन्धी अनुसन्धान, प्रशिक्षण एवं प्रसार के कार्य-क्रमों का विकास ।
५ कृषि से सम्बन्धित व्यक्तियों को प्रशिक्षित करने के लिये पॉलिटेकनिको की स्थापना ।
६ कृषि-सम्बन्धी प्रसार कार्य-क्रमों का विकास ।
७ सफल एवं प्रगतिशील किसानो को विश्वविद्यालयों, कॉलेजो, पॉलिटेक्निको तथा प्राथमिक प्रसार केन्द्रो से सम्बन्धित करना, और उन्हें पर्याप्त सुविधाएँ प्रदान करना ।
८ कृषि-विश्वविद्यालयो और राज्य के कृषि-विभागो के उत्तरदायित्वो का स्पष्टीकरण ।
९ कृषि-विश्वविद्यालयो मे स्नातकोत्तर कार्य पर बल ।

समीक्षा

कृषि के लिये शिक्षा का जो कार्य-क्रम आयोग ने अंकित किया है, वह वास्तव मे अति उत्तम है। इसको कार्यान्वित करने से देश में कृषि-शिक्षा का मार्ग प्रशस्त हो जायगा, और इसके परिणामस्वरूप कृषि की अवश्य उन्नति होगी। इस समय हमारे देश मे कृषि की स्थिति बहुत पिछडी हुई है। सब भारतीयो को न्यूनतम भोजन की मात्रा भी नहीं मिलती है। आज हम दूसरे देशो के अतिरिक्त अनाज पर निर्भर हैं। यह स्थिति स्वय में बडी नाज़ुक है। परन्तु इस स्थिति को और भी नाज़ुक जनसख्या की वृद्धि ने बना दिया है। इसके अतिरिक्त, कृषि की हीन दशा ने औद्योगीकरण के विकास पर भी प्रभाव डाला है। औद्योगीकरण के लिये हमे पर्याप्त विदेशी मुद्रा की आवश्यकता है। परन्तु हमे इस मुद्रा का बहुत बडा भाग अनाज प्राप्त करने के लिये खर्च करना पडता है। अतः हमें अपनी कृषि की दशा को सुधारना है। हम इस कार्य को आयोग द्वारा बताये गये कार्य-क्रम को क्रियान्वित करके कर सकते हैं। अत हमें इस दिशा मे तत्काल और त्वरित क़दम उठाने चाहिये।

२. कृषि-विश्वविद्यालय
Agricultural Universities

आयोग ने देश मे कृषि-विश्वविद्यालयो के बारे मे निम्नांकित सुझाव दिये हैं :

१. प्रत्येक राज्य मे एक कृषि-विश्वविद्यालय खोला जाय ।
२. कृषि-विश्वविद्यालयो तथा राजकीय कृषि-विभागों के दायित्वों का आवश्यक रूप से स्पष्ट वर्णन किया जाय। कृषि-विश्वविद्यालयों द्वारा अनुसन्धान, शिक्षा, तथा प्रसार के कार्य-क्रमो को अपने हाथ मे लिया जाय ।
३. कृषि-विश्वविद्यालयों में स्नातकोत्तर कार्य को उच्च-स्तर का बनाया

जाय। इस कार्य को सन्तोषजनक ढंग से पूर्ण करने के लिए योग्य
प्रतिभाशाली शिक्षकों की नियुक्ति की जाय।

४. केन्द्रीय अनुसन्धान केन्द्र—'अखिल भारतीय कृषि-अनुसन्धान संस्
(Indian Agricultural Research Institute), 'अखिल भार
पशु-अनुसन्धान संस्थान' (Indian Veterinary Research Institu
'राष्ट्रीय दुग्धशाला अनुसन्धान संस्थान' (National Dairy Resear
Institute) तथा कृषि-विश्वविद्यालयों को मिलकर कृषि में स्नातको
कार्य के लिये उपयुक्त केन्द्र स्थापित करने चाहिये। एक ओर तो
संस्थाओं में, तथा दूसरी ओर इनका 'अखिल भारतीय कृषि-अनुसन्धा
परिषद्' (Indian Council of Agricultural Research)
सामंजस्य स्थापित किया जाय।

५. स्नातकोत्तर कार्य के लिये प्रवेश केवल कृषि-स्नातकों के लिये ही सीमि
न रखा जाय, वरन् दूसरे क्षेत्रों के प्रतिभाशाली छात्रों को भी कृ
शिक्षा तथा अनुसन्धान की उन्नति के लिये प्रोत्साहित किया जाय।

६. छात्रों के स्वाध्ययन के लिये प्रत्येक विश्वविद्यालय में एक उत्त
पुस्तकालय की स्थापना की जाय।

७. प्रथम डिग्री कोर्स की अवधि १० वर्ष की विद्यालय-शिक्षा के ब
५ वर्ष की होनी चाहिये।

८. कृषि-विश्वविद्यालयों में कक्षा-शिक्षण के अतिरिक्त, प्रयोगशाला तथ
प्रायोगिक कार्यों पर अधिक बल दिया जाय।

९. 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' द्वारा प्रस्तावित वेतन-क्रमों को कृषि
विश्वविद्यालयों के शिक्षकों को दिया जाय। इसके अतिरिक्त, सेवा
प्रतिबन्धों (Service Conditions) को आकर्षित बनाया जाय।

१०. किसी विभाग (Faculty) की संख्या को शिक्षक-वर्ग के गुणात्मक पक्ष
तथा आवश्यकताओं के अनुसार निश्चित किया जाय।

११. प्रत्येक विभाग में योग्यता को शिक्षकों की उन्नति का आधार बनाया
जाय।

१२. विभागों को साहित्यिक स्वतन्त्रता (Academic Freedom) प्रदान की
जाय।

१३. बाह्य-परीक्षाओं को यथासम्भव समाप्त कर दिया जाय।

१४. शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए ५ या ६ केन्द्रों की स्थापना की जाय।
विज्ञान तथा कृषि के योग्य एवं प्रतिभाशाली स्नातकों को इस ओर
आकर्षित करने के लिए छात्रवृत्तियाँ प्रदान की जायँ।

१५. कृषि-विश्वविद्यालयों के २५ प्रतिशत छात्रों को छात्रवृत्तियाँ प्रदान करने
[illegible] की जाय।

१६. कृषि-स्नातकों को जो वेतन अब दिया जा रहा है, उसमे सुधार किया जाय।
१७. प्रत्येक कृषि-विश्वविद्यालय के पास १,००० एकड भूमि से कम का फार्म न हो, जिसमे कम से कम ५०० एकड भूमि जोतने योग्य हो।
१८. उपाधि प्रदान करने से पूर्व १ वर्ष तक छात्रों से फ़ार्म पर कृषि-कार्य कराया जाय।
१९. प्रत्येक राज्य मे एक कृषि-विश्वविद्यालय की स्थापना करने मे यह भी सम्भावना हो सकती है कि प्रचलित विश्वविद्यालयों मे से किसी एक को कृषि-विश्वविद्यालय मे परिवर्तित करना पड़े। अत: इस सम्भावना तथा परिवर्तन से सम्बन्धित समस्याओं का अध्ययन किया जाय।
२०. यथासम्भव सभी कृषि-विश्वविद्यालय, शिक्षण-विश्वविद्यालय हों।
२१ यदि कोई विश्वविद्यालय किसी कॉलेज का दायित्व लेता है, तो उस कॉलेज का स्तर निर्माणक कॉलेज (Constituent College) जैसा हो।

समीक्षा

'शिक्षा-आयोग' ने कृषि-विश्वविद्यालयो के बारे मे अति व्यापक सुझाव दिये हैं। भारत कृषि-प्रधान देश है। अत: प्रत्येक राज्य मे एक कृषि-विश्वविद्यालय अवश्य होना चाहिये। भारत मे ऐसे अनेकों राज्य हैं, जिनमे ऐसा विश्वविद्यालय नहीं है। अभी तक केवल मैसूर, पंजाब, आध्र, उत्तर प्रदेश और जबलपुर में कृषि-विश्वविद्यालय हैं। जब तक ऐसे विश्वविद्यालय सब राज्यों मे नहीं होगे, तब तक कृषि-शिक्षा का विकास होना असम्भव है।

जैसा कि आयोग ने लिखा है—कृषि के शिक्षकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिये, जिससे उन्हें इस बात की पूर्ण जानकारी हो जाय कि उनको अपने छात्रों को क्या और किस तरह पढ़ाना है। छात्रों को कृषि का अध्ययन करने के लिये छात्रवृत्तियाँ देना आवश्यक है। पर इससे भी अधिक आवश्यक यह है कि शिक्षा समाप्त करने के बाद उनके लिये किसी न किसी व्यवसाय की व्यवस्था की जाय, जिससे कि उन्हें यह पश्चात्ताप न करना पड़े कि कृषि की शिक्षा प्राप्त करने के बाद वे अपना भरण-पोषण नहीं कर सकते हैं।

३ कृषि-कॉलेज
Agricultural Colleges

कृषि के कॉलेजों के सम्बन्ध में आयोग के सुझाव अधोलिखित हैं :—

१. नवीन कृषि-कॉलेजो की स्थापना न की जाय और समस्त पूर्व-स्नातक तथा स्नातकोत्तर कार्य कृषि-विश्वविद्यालयो मे ही किया जाय।

२. जो कृषि-कॉलेज विश्वविद्यालय के विभिन्न कॉलेज (Co
Colleges) हों, उनमें विभिन्न कृषि-सम्बन्धी विषयों की
जाय।

३. प्रत्येक कृषि कॉलेज में २०० एकड़ भूमि का कृषि-फा
रखा जाय।

४. कृषि-कॉलेजों का प्रति पाँचवें वर्ष 'अखिल भारतीय कृषि-अ
परिषद्' तथा 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' द्वारा संयुक्त
निरीक्षण किया जाय।

५. कुछ कॉलेजों व डिग्री कोर्सों के स्थान में उच्च टेक्निशियन (T
cian) स्तर के कोर्सों की व्यवस्था की जाय।

समीक्षा

आयोग ने सुझाव दिया है कि नये कृषि-कॉलेजों की स्थापना न की
और समस्त पूर्व-स्नातक तथा स्नातकोत्तर कार्य कृषि-विश्वविद्यालयों में हो
जाय। क्यों? इसके कई कारण हो सकते हैं। पहला—कॉलेजों का निरीक्षण निय
का हो सकता है। दूसरा—एक राज्य के लिये एक विश्वविद्यालय काफी है
उसमें सम्बद्ध कॉलेजों की आवश्यकता नहीं है। तीसरा—जनता के लोग व्यक्ति
से कृषि-कॉलेजों की स्थापना नहीं करना चाहते हैं, क्योंकि इनमें व्यय अधि
है। हम कारण का अनुमान ही लगा सकते हैं। यदि आयोग इसको स्पष्ट कर
तो अच्छा होता। हमारे विचार में आयोग द्वारा दिया गया यह सुझाव उचि
है। यदि किसी राज्य में आवश्यकता है, तो कृषि-कॉलेजों की स्थापना अवश्य
चाहिये।

४. कृषि के विकास में अन्य विश्वविद्यालयों का योग
Contribution of Other Universities for the Development of Agriculture

आयोग के विचारानुसार यह आवश्यक नहीं है कि केवल कृषि-विश्वविद्या
में ही कृषि की शिक्षा दी जाय। दूसरे विश्वविद्यालय भी इस कार्य को कर सकते
इस सम्बन्ध में आयोग के विचार अधोलिखित हैं :—

१. यदि अन्य विश्वविद्यालय, कृषि-शिक्षा प्रदान करने के लिये उत्सुक
तो उन्हें पूर्ण रूप से सहायता दी जाय।

२. कृषि-विश्वविद्यालयों तथा 'अखिल-भारतीय प्रौद्योगिकी संस्था
(Indian Institute of Technology) के बीच साहित्यिक सम्ब
विकसित किये जायें। यह कार्य छात्रों और शिक्षकों के आदान-प्रद
तथा अध्ययन एवं अनुसन्धान के लिये समान कार्य-क्रम विकसित कर

९. एक या दो 'अखिल भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थानों' (I. I. Ts) में कृषि-विभाग खोलने की व्यवस्था की जाय।

समीक्षा

आयोग ने सुझाव दिया कि कृषि-शिक्षा देने के लिये उत्सुक विश्वविद्यालयों को सरकार द्वारा सहायता दी जाय। इस सुझाव के परिणामस्वरूप कृषि-शिक्षा मे तीव्रता आ जायगी और छात्रो को भी सुविधा हो जायगी। उदाहरण के लिये यदि गोरखपुर विश्वविद्यालय मे कृषि-शिक्षा की व्यवस्था है, तो उत्तर प्रदेश मे बलिया या बस्ती मे रहने वाले छात्र को पन्तनगर मे स्थिति कृषि-विश्वविद्यालय को नहीं जाना पड़ेगा। I. I Ts मे कृषि-शिक्षा का प्रबन्ध हो जाने से इस शिक्षा के विकास मे बहुत काफ़ी योग मिलेगा।

५. कृषि-पॉलिटेकनीक
Agricultural Polytechnics

आयोग ने सुझाव दिया कि कृषि की शिक्षा देने के लिये 'पॉलिटेकनीको' की स्थापना की जाय और उनके सम्बन्ध में निम्नलिखित विचार व्यक्त किये हैं :—

१. मेट्रीकुलेशन-स्तर के उपरान्त कृषि-पॉलिटेकनीको की स्थापना की जाय और इनको कृषि-विश्वविद्यालयो से सम्बद्ध किया जाय।
२. इन पॉलिटेकनीकों में १,००० छात्रो तक को शिक्षा दी जाय।
३. कृषि-शिक्षा की माँग की पूर्ति करने के लिये ग्रामीण क्षेत्रो के समीप स्थित पॉलिटेकनीको मे कुछ समय के लिये कृषि-शिक्षा की व्यवस्था कर दी जाय।
४ इन संस्थाओ मे किसानों तथा कृषि मे विशेष रुचि रखने वाले व्यक्तियों के लिये संक्षिप्त कोर्सों की व्यवस्था की जाय।
५. इन संस्थाओ के शिक्षकों को उत्तम वेतन तथा अन्य सुविधाएँ प्रदान की जायें।
६. इनमे योग्य व्यक्तियों को शिक्षक नियुक्त किया जाय।
७. पॉलिटेकनीको मे कृषि से सम्बन्धित अन्य विषयों की भी शिक्षा दी जाय।
८. इनमें दी जाने वाली शिक्षा पूर्ण होनी चाहिये, जिससे इनमे से निकलने वाले छात्रों को एक निश्चित व्यवसाय मिल सके। साथ ही शिक्षा ऐसी होनी चाहिये कि इसको समाप्त करने के बाद छात्र कृषि की उच्च शिक्षा-संस्थाओं मे प्रवेश कर सकें।

समीक्षा

कृषि-पॉलिटेकनीकों की स्थापना का सुझाव आयोग की समझदारी का प्रतीक है। आज हमारे देश मे जगह-जगह पॉलिटेकनीक खुल गये हैं। इनमे विभिन्न व्यवसायों

की शिक्षा दी जाती है, जिससे कि देश के उद्योगों के लिये प्रशिक्षित कर्मचारियों का अभाव न रहे। ये उद्योग तो अभी अपनी शैशव-अवस्था में हैं। फिर भी [illegible] लिये इतना प्रबन्ध किया जा रहा है। इसके विपरीत, भारत के प्राचीनतम उद्योग— कृषि के बारे में आज तक किसी ने कभी भी यह विचार नहीं किया कि इसके [illegible] के लिये भी पॉलिटेक्नीक खोले जा सकते हैं।

आयोग के सुझाव के अनुसार कृषि-पॉलिटेक्नीक बड़ी संस्थायें होंगी, जिनमें १,००० छात्र शिक्षा ग्रहण कर सकेंगे। यदि इन संस्थाओं की स्थापना हो गई, तो देश का कृषि उद्योग दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति करेगा और हमें [illegible] के लिये दूसरे देशों का मुँह न ताकना पड़ेगा।

६. विद्यालयों में कृषि-शिक्षा
Agricultural Education in Schools

आयोग का विचार है कि कृषि शिक्षा को विद्यालय की सामान्य शिक्षा का अभिन्न अंग बनाया जाय। इस दृष्टिकोण से आयोग ने निम्नलिखित सुझाव दिये हैं :—

१. समस्त प्राथमिक विद्यालयों (शहरी क्षेत्र के विद्यालयों सहित) में कृषि सम्बन्धी जानकारी को सामान्य शिक्षा का अभिन्न अंग बनाया जाय।
२. विद्यालय-स्तर पर कृषि-कार्य के अनुभव को शिक्षा का अंग बनाया जाय।
३. शिक्षक-शिक्षा के कार्यक्रमों में कृषि तथा ग्रामीण समस्याओं से सम्बन्धित अध्ययन को स्थान प्रदान किया जाय।
४. कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में पूर्व-स्नातक और स्नातकोत्तर कक्षाओं के पाठ्यक्रमों में कृषि और ग्रामीण समस्याओं को स्थान दिया जाय।

समीक्षा

[illegible]

७. प्रसार कार्य-क्रम
Extension Programmes

कृषि-सम्बन्धी ज्ञान का प्रसार करने के लिये आयोग ने निम्नांकित सुझाव दिये हैं :—

१. शिक्षा में प्रसार कार्य को सचालित करने के लिये सफल किसानों का अधिकाधिक उपयोग किया जाय।

२ प्राथमिक प्रसार केन्द्रों (Primary Extension Centres) में किसानों को विभिन्न कोर्सों का अध्ययन करने के लिये आमन्त्रित किया जाय और इनका अध्ययन करने के उपरान्त किसानों को अपने-अपने गाँवों में कृषक-अध्ययन केन्द्र (Farmers' Study Circles) खोलने के लिये प्रोत्साहित किया जाय।

३. ग्रामीण समुदाय तथा किसानों को शिक्षित करने के लिये रेडियो, फ़िल्मों तथा अन्य श्रव्य-दृश्य सामग्री का अधिकाधिक प्रयोग किया जाय।

४. प्रत्येक सामुदायिक विकास क्षेत्र में एक 'प्राथमिक प्रसार' केन्द्र की स्थापना की जाय।

५. ग्राम-सेवकों (Village Level Workers) तथा अन्य कार्यकर्ताओं की योग्यताओं एवं क्षमताओं के विकास के लिये कृषि-विश्वविद्यालय तथा पॉलिटेकनीकों द्वारा आवश्यक सहायता प्रदान की जाय।

समीक्षा

कृषकों में कृषि-सम्बन्धी ज्ञान का प्रसार किया जाना आवश्यक है। इसी बात पर आयोग ने बल दिया है। उनके लिये 'प्राथमिक प्रसार-केन्द्र' खोले जायें। उन्हें इनमें अध्ययन करने के लिये आमन्त्रित किया जाय। ये और इस प्रकार के कुछ अन्य सुझाव आयोग ने दिये हैं। सुझाव हैं तो बहुत अच्छे। पर क्या उनको व्यावहारिक रूप दिया जा सकेगा? मान लीजिये कि प्राथमिक प्रसार-केन्द्र खुल भी गये और कृषकों को वहाँ आने के लिये निमन्त्रण भी दे दिया गया। पर क्या वे वहाँ आयेंगे? यदि वे आ गये और अध्ययन में लग गये, तो उनके खेत तो चौपट हो जायेंगे। अपने खेतों की चिन्ता उन्हें पहले है। सोते-जागते, खाते-पीते—सभी समय उनके मस्तिष्क में उनके खेत घूमते रहते हैं। अतः हमें तो आशा नहीं है कि वे प्रसार-केन्द्रों में जायेंगे।

आयोग के सब सुझावों में सब से अच्छा यह है कि रेडियो, फ़िल्मों आदि का प्रयोग किया जाय। यदि इस कार्य-क्रम को सुचारु रूप से सचालित किया जाय, तो महान् सफलता मिल सकती है।

समीक्षा

आयोग ने अर्द्ध-कुशल और कुशल कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण के लिये विभिन्न सुविधाओं पर प्रकाश डाला है । औद्योगिक प्रशिक्षण-संस्थाओं का विस्तार हो जाने से उनमें अधिक कार्यकर्त्ता प्रशिक्षण प्राप्त कर सकेंगे । जैसा कि आयोग ने लिखा है— टेकनिकल स्कूलों में दी जाने वाली शिक्षा पूर्ण प्रकार की होनी चाहिये, चाहे वह थोड़ी ही वर्षों न हो । इससे लाभ यह होगा कि छात्रों को जो भी ज्ञान प्राप्त होगा, वह शिक्षा की एक इकाई होगा और उनको अपने ज्ञान को पूर्ण करने के लिये इधर-उधर नहीं भटकना पड़ेगा । यदि विद्यालयों से शिक्षा समाप्त करने वाले छात्रों के लिये अंशकालीन या किसी अन्य प्रकार की शिक्षा की सुविधा हो जायगी, तो वे अपने ज्ञान में वृद्धि करके अपने व्यवसायों में आगे बढ़ सकेंगे ।

३. शिल्पियों का प्रशिक्षण
Technician Training

उद्योगों के लिये जितनी आवश्यकता उच्च शिक्षा-प्राप्त इंजीनियरों की है, इससे कहीं अधिक शिल्पियों की है, क्योंकि इन्हीं के ऊपर किसी भी उद्योग का अधिकांश भार रहता है, और इन्हीं की कुशलता पर उद्योग की सफलता निर्भर है । अतः इनकी प्रशिक्षण-सुविधाओं का विस्तार करने के लिये आयोग ने लिखा है :—

१. १९८६ तक इन्जीनियरों तथा टेकनिशियनों का अनुपात १:४ कर दिया जाय ।
२. उद्योग के सहयोग से समय-समय पर सर्वेक्षण (Survey) किये जायँ, और उनके आधार पर टेकनिशियनों के प्रशिक्षण के लिये पाठ्य-विषयों का विस्तार एवं पुनःनिरीक्षण किया जाय ।
३. डिप्लोमा प्रदान करने वाले स्कूलों में व्यावहारिक कार्य पर अधिक बल दिया जाय । यह व्यावहारिक कार्य प्रोजेक्ट के रूप में किया जाय ।
४. डिप्लोमा-कोर्सों में औद्योगिक अनुभव पर भी बल दिया जाय ।
५. औद्योगिक क्षेत्रों में पॉलिटेक्निकों की स्थापना की जाय ।
६. जो पॉलिटेक्निक स्कूल ग्रामीण क्षेत्रों में स्थापित हैं, उनमें कृषि तथा कृषि-सम्बन्धी उद्योगों की शिक्षा प्रदान करने की व्यवस्था की जाय ।
७. पॉलिटेक्निक स्कूलों के लिये अधिकांश शिक्षकों की नियुक्ति उद्योगों से की जाय । इन लोगों के लिये शैक्षिक योग्यताओं (Academic Qualifications) में कमी की जाय । इनका वेतन योग्यता के अनुसार निर्धारित न किया जाय, वरन् औद्योगिक अनुभव के आधार पर ।
८. यथासम्भव छात्रों को वास्तविक स्थितियों में प्रशिक्षण प्रदान किया जाय । इसके लिये शिक्षकों तथा छात्रों को छुट्टियों में उत्पादन कार्य करने के लिये प्रोत्साहित किया जाय । इनके द्वारा निर्मित वस्तुओं से

माध्यमिक स्कूलो की प्रयोगशालाओ को सुसज्जित किया जा सकता है या बेचा जा सकता है ।

९. पॉलिटेकनिको के प्रथम दो वर्षों मे विज्ञान तथा गणित के कोर्सों को उन्नत बनाया जाय ।

१० टेकनिशियनो के पाठ्य-विषयो मे औद्योगिक मनोविज्ञान (Industrial Psychology) तथा प्रबन्ध (Managment), परिव्ययांकन तथा परिमापन (Costing and Estimation) नामक विषयो को स्थान दिया जाय ।

११. राष्ट्रीय आवश्यकताओ को ध्यान मे रखकर पालिटेकनिको के कोर्सों को चतुर्थ एव पचम पचवर्षीय योजनाओ मे पुनर्गठित किया जाय ।

१२. पॉलिटेकनिको मे सर्टीफिकेटो तथा डिप्लोमा स्तरो पर बालिकाओं की विशेष रुचि के पाठ्य-विषयों की व्यवस्था की जाय ।

१३. बालिकाओं को निम्न-माध्यमिक स्तर पास करने के उपरान्त इन पाठ्य-विषयो को लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाय ।

१४. पॉलिटेकनिकों मे होने वाले अपव्यय को रोकने और उनको अधिकाधिक उपयोगी बनाने के लिये प्रत्येक सम्भव उपाय को काम मे लाया जाय ।

१५. कुछ पॉलिटेकनिक-विद्यालयो में पोस्ट-डिप्लोमा (Post-Diploma) कोर्सों की व्यवस्था की जाय । इनमे वे टेकनिशियन प्रवेश के अधिकारी हों, जिन्होंने डिप्लोमा प्राप्त करने के पश्चात् कुछ वर्षों का औद्योगिक अनुभव प्राप्त कर लिया हो ।

ोक्षा

आयोग ने शिल्पियों या टेकनिशियनो व डिप्लोमाधारियो को भी स्थान दिया ौर दोनों के प्रशिक्षण के बारे मे अति व्यापक सुझाव दिये हैं । इनका अनुपात ाया जाना आवश्यक है, क्योंकि इस समय इंजीनियरो और टेकनिशियनों का अनु- ा १'१४ है । वैसे तो यह अनुपात कम है, पर एक दृष्टि से अधिक है । कारण है कि इन टेकनिशियनों की अपेक्षा कम पढ़े-लिखे मिस्त्री अधिक अच्छा कार्य करते ौर वेतन भी कम लेते हैं । इसलिये उद्योगपति टेकनिशियनो की अपेक्षा मिस्त्रियो रखना अधिक पसन्द करते हैं और रखते भी हैं । परिणामत: अनेकों टेकनिशियनों र डिप्लोमाधारियो को नौकरी पाने के लिये बहुत काफी दौड लगानी पड़ती है । वश्यकता इस बात की है कि अध्ययन-काल मे टेकनिशियनो को इतना व्यावहारिक न दे दिया जाय कि वे मिस्त्रियों से अधिक योग्य और कुशल सिद्ध हो । यह तभी म्भव है, जब उनको उद्योगों मे प्रतिदिन प्रशिक्षण के लिये भेजा जाय । आयोग ने स सम्बन्ध मे सुझाव देकर अति उत्तम कार्य किया ।

आयोग का यह सुझाव अच्छा है कि बालिकाओं को प्राविधिक कोर्सों के प्रति आकर्षित किया जाय। व्यवसाय-सम्बन्धी ऐसे अनेकों हल्के-फुल्के कार्य होते हैं, जिनको बालिकायें बहुत कुशलता से कर सकती हैं।

४. अन्य व्यावसायिक शिक्षा
Other Vocational Education

आयोग का विचार है कि उच्चतर माध्यमिक स्तर पर विभिन्न प्रकार के पाठ्य-क्रमों की व्यवस्था की जाय। इस स्तर पर पॉलिटेकनिकों के साथ-साथ शिक्षा-प्रणाली को अधिकाधिक व्यावसायिक एवं विशेषीकृत बनाया जाय। उच्चतर माध्यमिक स्तर पर वाणिज्य, वैज्ञानिक तथा औद्योगिक कार्यों के विभिन्न पाठ्य-क्रमों की व्यवस्था की जाय। इस स्तर पर कुछ पाठ्य-विषय अपने अन्तिम रूप में भी प्रदान किये जा सकते हैं। बालिकाओं के लिये गृहविज्ञान, पोषण (Nutrition), नर्सिङ्ग, सामाजिक-कार्य आदि क्षेत्रों में २ से ४ वर्ष की अवधि के कोर्स प्रदान किये जायें। इनके अतिरिक्त कुछ व्यवसायों—प्रसार कार्य-कर्त्ताओं, नाविकों (Seamen), वाणिज्य-कला तथा डिजाइन (Commercial Art & Design), वितरण सम्बन्धी व्यापार आदि के लिये विशेष स्कूलों की स्थापना की जाय।

टेकनिकल हाई स्कूलों तथा पॉलिटेकनिकों से पास करने वाले छात्रों को स्वयं अपने छोटे-छोटे उद्योग स्थापित करने के लिये प्रोत्साहित किया जाय या दूसरों के साथ मिलकर लघु उद्योग, वर्कशाप तथा अन्य आवश्यक कार्य करने के लिये सहायता दी जाय।

समीक्षा

अन्य व्यवसायों के सम्बन्ध में आयोग के सुझाव अति अभिनन्दनीय हैं। माध्यमिक स्तर पर शिक्षा-प्रणाली को व्यावसायिक रूप दिया जाना वाञ्छनीय है। इससे विभिन्न व्यवसायों को कार्य-कर्त्ता मिल सकेंगे, सामान्य शिक्षा देने वाली उच्च-शिक्षा-संस्थाओं में छात्रों की भीड़ कम हो जायगी और वे छात्र जो उच्च-शिक्षा प्राप्त नहीं कर सकते हैं, किसी धन्धे में लग जायेंगे।

यह बहुत आवश्यक है कि प्राविधिक शिक्षा-प्राप्त छात्रों को स्वतन्त्र रूप से अपना निजी कारोबार करने के लिये प्रोत्साहित किया जाय। इससे देश में उत्पादन बढ़ेगा और उनके द्वारा निर्मित वस्तुओं का मूल्य भी कम होगा, जिससे जनता को बहुत सन्तोष मिलेगा।

५. इन्जीनियरों की शिक्षा
Education of Engineers

इंजीनियरों की शिक्षा से सम्बन्धित आयोग के सुझाव निम्नलिखित हैं :—

१. इंजीनियरिंग की कुछ शाखाओं, जैसे—विद्युत-अणु-सम्बन्धी (Electronics) और उपकरण-सम्बन्धी (Instrumentation) शिक्षा के लिये योग्य एवं प्रतिभाशाली बी० एस-सी० पास छात्रों को चुना जाय।

२. डिग्री कोर्स के छात्रों के लिए तृतीय वर्ष में व्यावहारिक प्रशिक्षण प्रदान किया जाय।
३. वर्कशाप-प्रैक्टिस (Workshop Practice) में उत्पादन कार्य पर अधिकाधिक बल दिया जाय।
४. परिवर्तित आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये पाठ्य-क्रमों को विभिन्न प्रकार का बनाया जाय।
५. पाठ्य-विषयों को विशेषज्ञ समितियों के परामर्श से संशोधित किया जाय।
६. रासायनिक प्रौद्योगिकी (Chemical Technology), विमान-विद्या (Aeronautics), नक्षत्र-विज्ञान (Astronautics) आदि पाठ्य-विषयों का विकास किया जाय।
७. टेकनॉलॉजी के संस्थानों और कॉलेजों द्वारा उद्योगों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये कार्य किया जाय।
८. शिक्षकों के लिये व्यापक रूप से 'समर इन्सटीट्यूट्स' (Summer Institutes) की व्यवस्था की जाय।
९. प्रचलित इन्जीनियरिंग कॉलिजों में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी विभागों के शिक्षकों को अन्य विभागों के शिक्षकों से कम वेतन मिलता है। इस स्तर-भेद को समाप्त किया जाय।
१०. शिक्षण-व्यवसाय को आकर्षक बनाने के लिये उपयुक्त वेतन-क्रम लागू किये जायें।
११. टेकनॉलॉजी-संस्थान, स्नातक तथा स्नातकोत्तर छात्रों के लिये व्यापक आधार पर शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रम सचालित करें। इन कोर्सों में विश्व की दूसरी आधुनिक भाषा, जैसे—रूसी या जर्मन को स्थान दिया जाय।
१२. टेकनॉलॉजिकल क्षेत्रों में उन्नत अध्ययन केन्द्रों की स्थापना की जाय।
१३. सरकारी कॉलेजों में शिक्षकों के बार-बार स्थान-परिवर्तन की प्रणाली को रोका जाय।
१४. स्नातकोत्तर पाठ्य-विषयों में रुढ़िवदता को स्थान न दिया जाय, क्योंकि ये उद्योग की समस्याओं से सम्बन्धित हैं।
१५. उच्च स्तर के विशेषीकृत पाठ्य-विषयों की व्यवस्था एवं उनका संचालन राष्ट्रीय स्तर पर किया जाय।

समीक्षा

आयोग ने इन्जीनियरों को दी जाने वाली प्रायः सभी प्रकार की शिक्षा पर प्रकाश डाला है। 'विद्युत-अणु-विज्ञान' एक नया विज्ञान है। हर देश में इसके अध्ययन को

ओर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। भारत को भी ऐसा करना है, अन्यथा वह पीछे रह जायगा। विज्ञान की प्रयोगशालाओं और उद्योगों में प्रयोग किये जाने के लिये नाना प्रकार के उपकरणों की आवश्यकता पड़ती है। भारत को अभी अधिकांश उपकरण विदेशों से मँगाने पड़ते हैं, जिससे बहुत-सी भारतीय मुद्रा देश से बाहर चली जाती है। इसको रोकने के लिये देश में अधिक से अधिक उपकरण बनाये जाने का प्रयास किया जाना आवश्यक है।

व्यावहारिक प्रशिक्षण का सुझाव अति उपयुक्त है, क्योंकि अभी तक इस प्रकार के प्रशिक्षण की कोई व्यवस्था नहीं है। वर्कशाप-प्रैक्टिस में उत्पादन-कार्य पर बल दिया जाना चाहिये, क्योंकि अधिकांश इंजीनियरों का सम्बन्ध उत्पादन से होता है। पाठ्य-क्रमों में संशोधन और परिवर्तन की आवश्यकता है, क्योंकि विज्ञान की प्रगति के साथ-साथ उत्पादन की विधियाँ निरन्तर बदलती चली जा रही हैं। रासायनिक प्रौद्योगिकी का, और विशेष रूप से विमान-विद्या एवं नक्षत्र-विज्ञान के पाठ्य-क्रमों का विकास आवश्यक है, क्योंकि भारत इन विषयों में बहुत पिछड़ा हुआ है। *इन्जीनियरिंग कॉलेजों के शिक्षकों, उनकी वेतन-दरों और उनके प्रशिक्षण के बारे में* आयोग ने जो सुझाव दिये हैं, उनको मान्यता दी जानी चाहिये, क्योंकि ऐसा करने से इन्जीनियरिंग कॉलेजों का शिक्षण स्तर ऊँचा उठेगा।

६. पत्राचार पाठ्य-क्रम
Correspondence Courses

आयोग ने इस बात पर बल दिया है कि पत्राचार द्वारा व्यावसायिक, प्राविधिक और इन्जीनियरिंग-शिक्षा देने की व्यवस्था की जाय। उसने लिखा है कि यह कार्य तत्काल ही शुरू कर देना चाहिये। पर इसका अभिप्राय यह नहीं है कि बिना सोचे-समझे इस कार्य को प्रारम्भ कर दिया जाय। इसके विपरीत, पहले पूर्ण तैयारी की जाय, तैयारियों का परीक्षण किया जाय, और फिर कार्य को प्रारम्भ किया जाय।

समीक्षा

भारत में पत्राचार द्वारा व्यावसायिक शिक्षा देने की उचित व्यवस्था नहीं है। कुछ देशी और विदेशी फर्में, जिन्होंने अपने को कॉलेज या इंस्टीट्यूट की संज्ञा दी है, इस कार्य को कर रहे हैं, पर उनका ध्येय अधिक से अधिक कमाना है। इसलिए उनकी शिक्षा व्यक्तियों को बहुत मँहगी पड़ती है। उन्हें धन देना तो थोड़ा-थोड़ा पड़ता है, पर देना पड़ता है काफी। अतः साधारण आय का व्यक्ति पत्राचार की इस शिक्षा से लाभ नहीं उठा पाता है। अतः जैसा कि आयोग का सुझाव है—यह कार्य सरकार द्वारा अपने हाथ में लिया जाना चाहिये। साथ ही इस शिक्षा के लिये व्यक्तियों से कम फीस लिया जाना चाहिए, जिससे सभी लोग इससे लाभान्वित

७ व्यावहारिक प्रशिक्षण में उद्योगों का सहयोग
Co-operation of Industry in Practical Training

आयोग का विचार है कि व्यावहारिक प्रशिक्षण की सुविधाओं का विस्तार किया जाय। इस समय विभिन्न उद्योगों में केवल ३,००० प्रशिक्षणार्थियों को प्रतिवर्ष प्रशिक्षण प्रदान करने के लिये सुविधाएँ प्राप्त हैं। इन सुविधाओं को बढ़ाकर कम से कम ५,००० प्रशिक्षणार्थियों को प्रतिवर्ष उद्योगों से प्रशिक्षण दिया जाना चाहिये। सरकार उन उद्योगों का चुनाव करे, जिनमें छात्रों को उपयुक्त प्रकार से व्यावहारिक प्रशिक्षण प्रदान किया जा सकता है। केन्द्रीय सरकार, औद्योगिक संस्थाओं को सहायता प्रदान करे, जिससे वे योग्य प्रशिक्षण अधिकारी नियुक्त कर सकें। ये प्रशिक्षण-अधिकारी, छात्रों को सर्वोत्तम प्रकार का प्रशिक्षण प्रदान करें।

८. व्यावसायिक, प्राविधिक व इन्जीनियरिंग-शिक्षा का प्रशासन
Administration of Vocational, Technical & Engineering Education

आयोग ने व्यावसायिक, प्राविधिक और इन्जीनियरिंग-शिक्षा के विषय में अधोलिखित सुझाव दिये हैं :—

१. 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' जैसा संगठन स्थापित किया जाय, जिसमें 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग', व्यावसायिक संगठनों, उद्योगों तथा सम्बन्धित मन्त्रालयों को प्रतिनिधित्व प्राप्त हो। इस संगठन का एक पूर्णकालीन अध्यक्ष हो।
२. यह संगठन 'नियोजन आयोग' (Planning Commission) तथा 'इन्सटीट्यूट ऑफ एप्लाइड मैनपॉवर रिसर्च' (Institute of Applied Manpower Research) के पूर्ण सहयोग से कार्य करे।
३. टेकनॉलॉजी-संस्थानों (Institutes of Technology) को विश्वविद्यालयों की स्थिति प्रदान की जाय।
४. सभी राज्यों में 'डाइरेक्टोरेट ऑफ़ टेकनीकल एजूकेशन (Directorate of Technical Education) स्थापित की जायें। इनको शिक्षा-संस्थाओं के लिये आवश्यक शिक्षकों की नियुक्ति, अन्य विषयों के संचालन एवं नियन्त्रण के सम्बन्ध में पूर्ण अधिकार दिये जायें।
५. कॉलेजों के प्रिंसिपलों को अपनी संस्थाओं में शैक्षिक सुविधाएँ प्रदान करने के सम्बन्ध में अपना निर्णय प्रयोग में लाने का अधिकार दिया जाय।
६. प्रिंसिपल या उसका मनोनीत सदस्य उन सभी उपसमितियों का अध्यक्ष हो, जो पाठ्य-विषयों के विकास तथा अनुशासनात्मक कार्यों को चलाने के लिये नियुक्त की जायें।

अध्याय १७

विज्ञान-शिक्षा और अनुसंधान
SCIENCE EDUCATION & RESEARCH

इस अध्याय में आयोग ने जिन बातों का वर्णन किया, वे इस प्रकार हैं —

१—विज्ञान-प्रगति-सम्बन्धी सामान्य सिद्धान्त,

२—विज्ञान-शिक्षा की प्रगति,

३—विश्वविद्यालयों में विज्ञान-अनुसन्धान,

४—विश्वविद्यालयों में अनुसन्धान-व्यय,

५—विज्ञान सम्बन्धी राष्ट्रीय नीति।

१. विज्ञान-प्रगति-सम्बन्धी सामान्य सिद्धान्त
General Principles Regarding Progress of Science

आयोग का विचार है कि राष्ट्र की सुरक्षा, प्रगति एवं कल्याण, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की शिक्षा तथा अनुसन्धान की तीव्र प्रगति, नियोजित विकास तथा उसके गुणात्मक पक्ष पर निर्भर है। यह बड़े दु:ख की बात है कि भारत आज इस सम्बन्ध में सबसे निम्न श्रेणी में आता है। इसके अतिरिक्त, भारत अपने नागरिकों की शिक्षा पर जो धनराशि *व्यय करता है, वह भी दूसरे देशों की तुलना में बहुत कम है।* वस्तुत: भारत के पास सीमित साधन हैं। सीमित साधनों से ही हमें अपने राष्ट्र को प्रगति की ओर ले जाना है। इन साधनों को ध्यान में रखकर आयोग ने विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्रों में तीव्र प्रगति करने के लिये अधोलिखित सुझाव दिये हैं —

१. छात्रों को विज्ञान की शिक्षा देने के लिये 'चयनात्मक प्रणाली' (Selective Approach) को ग्रहण किया जाय, अर्थात् सर्वोत्तम छात्रों को ही चुना जाय।

२. स्नातकोत्तर अध्ययन तथा अनुसन्धान में विषयों का चुनाव बड़ी सतर्कता से किया जाय और कुछ ऐसे केन्द्रों की स्थापना की जाय, जहाँ सर्वोत्तम प्रकार का कार्य किया जा सके।

३. वैज्ञानिक मानव-शक्ति (Scientific Manpower) के उपयोग में उच्च कुशलता को प्राप्त करने का लक्ष्य निर्धारित किया जाय।
४. विज्ञान का विकास राष्ट्रीय, सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक विरासत की अवहेलना करके न किया जाय, वरन् इसको आधार बनाकर।
५. विज्ञान की शिक्षा में उसके मूलभूत सिद्धान्तों एवं प्रक्रियाओं के विवेकपूर्ण तथा सृजनात्मक चिन्तन पर बल दिया जाय।

२. विज्ञान-शिक्षा की प्रगति
Progress of Science Education

आयोग ने विज्ञान की शिक्षा के विकास के लिये अधोलिखित सुझाव दिये हैं :—

१. विज्ञान तथा गणित में स्नातकोत्तर पाठ्य-विषयों के स्तर को केवल उच्च ही न बनाया जाय, वरन् इस स्तर पर छात्रों की संख्या में भी वृद्धि करने के लिए पर्याप्त सुविधाएँ प्रदान की जाएँ जिससे उद्योगों की आवश्यकताओं की पूर्ति की जा सके।
२. विज्ञान तथा गणित के उच्च अध्ययन केन्द्रों की स्थापना की जाय। इन केन्द्रों में योग्य एवं प्रतिभाशाली व्यक्तियों को शिक्षक नियुक्त किया जाय। यदि सम्भव हो तो कुछ व्यक्ति अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के हों।
३. कुछ 'विज़िटिंग प्रोफेसरों' (Visiting Professors) को समझौते के आधार पर २ से ३ वर्ष की अवधि के लिए नियुक्त किया जाय। 'विश्वविद्यालय-अनुदान आयोग' एक अखिल-भारतीय समिति नियुक्त करे, जो विज़िटिंग प्रोफेसरों की व्यवस्था करे।
४. भारत के कुछ अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के वैज्ञानिक विदेशों में कार्य कर रहे हैं। 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' उन्हें तथा अन्य विदेशी वैज्ञानिकों को आमन्त्रित करे।
५. विज्ञान की शिक्षा के विकास में क्षेत्रीय असमानताओं को कम किया जाय।
६. राज्य में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी का विकास उसके आर्थिक विकास से सम्बन्धित किया जाय।
७. विज्ञान में पूर्व-स्नातक तथा स्नातकोत्तर पाठ्य-विषयों को आमूल रूप से संशोधित किया जाय।
८. विज्ञान-विभागों में प्रायोगिक तथा सैद्धान्तिक पक्षों में सन्तुलन स्थापित किया जाय। प्रायोगिक भौतिकशास्त्र तथा रसायनशास्त्र के विकास पर विशेष ध्यान दिया जाय।
९. प्रत्येक कॉलेज तथा विश्वविद्यालय में विज्ञान की समुचित रूप से

सुसज्जित वर्कशाप हो। छात्रों को इन वर्कशापों के यन्त्रों का उचित प्रयोग करना सिखाया जाय।

१०. औद्योगिक कार्य-कर्त्ताओं को पत्राचार द्वारा शिक्षा तथा सायंकालीन कक्षाओं के माध्यम से इन वर्कशापों का प्रयोग करने के लिये सुविधाएँ दी जायें।

११. वैज्ञानिक विषयों के छात्रों को सांख्यिकी (Statistics) का सामान्य ज्ञान प्रदान किया जाय।

१२. मिश्रित पाठ्य-विषय, जिसमे एक प्रमुख विषय तथा दूसरा सहायक विषय हो, प्रदान किये जायें।

१३. विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी को शिक्षा-प्रणाली का अभिन्न अंग बनाया जाय क्योंकि यह आज के युग की महत्त्वपूर्ण माँग है।

१४. दो वर्ष के एम० एस-सी० कोर्स के अतिरिक्त एक वर्ष या कम अवधि के कुछ विशेष कोर्स प्रदान किये जायें जो वर्तमान वैज्ञानिक, औद्योगिक तथा अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकें। इन पाठ्य-विषयों का सचालन विश्वविद्यालयो के विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी विभागो, इन्जीनियरिंग तथा कृषि-संस्थानो या राष्ट्रीय प्रयोगशालाओ मे किया जाए।

१५. विश्वविद्यालय तथा इन्जीनियरिंग संस्थान योग्य औद्योगिक कार्य-कर्त्ताओ को पत्र-व्यवहार द्वारा शिक्षा तथा सायंकालीन कक्षाओ के लिये भर्ती करें। इन संस्थानों मे डिप्लोमा तथा डिग्री कोर्सों के अतिरिक्त मिस्त्रियों (Mechanics), प्रयोगशाला-शिल्पियों (Laboratory Technicians) तथा अन्य कुशल कार्य-कर्त्ताओं (Skilled Operators) के लिये विशेष एवं लघु कोर्सों का भी आयोजन किया जाय।

१६. एम० एस-सी० स्तर के आगे एक नवीन उपाधि की व्यवस्था की जाय। इस नवीन उपाधि का कोर्स वैकल्पिक आधार पर प्रदान किया जाय।

१७. विज्ञान के 'समर इन्सटीट्यूट्स' (Summer Institutes) की व्यवस्था की जाय। इनमे स्कूलो, कॉलिजों तथा विश्वविद्यालयों के शिक्षको को आमन्त्रित किया जाय। इनके द्वारा देश की विज्ञान-शिक्षा में महत्त्वपूर्ण सुधार किया जा सकता है।

१८. 'अन्तर-विश्वविद्यालय-परिषद्' और 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' पूर्व-स्नातक तथा स्नातकोत्तर स्तरो के लिये चतुर्थ पंचवर्षीय योजना के अन्त तक देश में विज्ञान की महत्त्वपूर्ण पुस्तकों के निर्माण करने के लिये महत्त्वपूर्ण क़दम उठायें।

१९. भारतीय भाषाओं में वैज्ञानिक शब्दावली (Scientific Terminology)

बढ़ाने के लिये जो कदम उठाये गए हैं, वे अपर्याप्त हैं। अतः इस संबंध में और अधिक महत्वपूर्ण प्रयास किये जायें।

ii)

विज्ञान शिक्षा की प्रगति के लिये आयोग के सुझाव बहुमूल्य हैं। इन सुझावों को कार्यान्वित करने से विज्ञान की प्रगति अवश्य होगी—ऐसा हमारा विश्वास है। प्रगति के साथ-साथ विज्ञान के स्तर को उच्च बनाना भी अनिवार्य है। कारण यह है कि केवल संख्यात्मक प्रगति से काम नहीं चलेगा। विज्ञान की गुणात्मक प्रगति भी करनी होगी। ऐसा करके ही भारत उन देशों के साथ पग से पग मिलाकर चल सकेगा, जिनको आज विज्ञान के क्षेत्र में अग्रगण्य माना जाता है।

विज्ञान-शिक्षा की सुविधाओं में विस्तार, विज्ञान के उच्च केन्द्रों की स्थापना, अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के वैज्ञानिकों को निमंत्रण, विज्ञान के पाठ्य-विषयों में आमूल परिवर्तन, सैद्धान्तिक और व्यावहारिक पक्षों में सन्तुलन, सुसज्जित वर्कशाला, पत्राचार द्वारा शिक्षा, ग्रीष्मकालीन कक्षाओं की व्यवस्था इत्यादि—ये ऐसे सुझाव हैं, जिनकी श्रेष्ठता पर तनिक भी संदेह नहीं किया जा सकता है। संदेह केवल इस बात पर किया जा सकता है कि—क्या इन सब सुझावों को कार्यान्वित किया जा सकेगा? यदि हाँ, तो इनके लिये धन कहाँ से आयेगा? यह एक ऐसा प्रश्न है, जिसका उत्तर केवल सरकार दे सकती है। यदि वह चाहे तो साधनों को जुटा सकती है, और इस प्रकार देश में विज्ञान की प्रगति का सेहरा अपने सिर पर बाँध सकती है।

३. विश्वविद्यालयों में विज्ञान-अनुसंधान
University Research in Science

आयोग का विचार है कि भारतीय शिक्षा तथा अनुसन्धान की प्रमुख निर्बलता इस बात में निहित है कि भारतीय विश्वविद्यालयों ने अनुसन्धान के क्षेत्र में समुचित कार्य नहीं किया है। अतः अब वह समय आ गया है, जब विश्वविद्यालयों में उच्च-अध्ययन तथा अनुसन्धान को प्रोत्साहन देना—हमारी राष्ट्रीय नीति का मूलभूत लक्ष्य हो। इस बात को ध्यान में रखकर आयोग ने विश्वविद्यालयों में अनुसन्धान-कार्य को प्रोत्साहन देने के लिये अधोलिखित सुझाव दिये हैं :—

१. किसी भी देश के सृजनात्मक वैज्ञानिक तथा इन्जीनियर उसकी बहुमूल्य सम्पत्ति होते हैं। अतः इनको विश्वविद्यालयों में स्थान प्रदान किया जाय, जिससे उनका प्रभाव अधिकाधिक बढ़े। ये लोग केवल वैज्ञानिक अनुसन्धान में ही योग नहीं देंगे, वरन् नवीन प्रतिभाओं का भी निर्माण करेंगे।

२. विश्वविद्यालयों के छात्र तथा शिक्षक उत्तम प्रकार का अधिक से अधिक अनुसन्धान कार्य करें।

३. विश्वविद्यालयों का प्रत्येक अनुसन्धान कर्त्ता, शिक्षक हो और प्रत्येक शिक्षक, अनुसन्धान-कर्त्ता।
४. पूर्व-स्नातक स्तर के प्रतिभाशाली छात्रों को किसी न किसी प्रकार अनुसन्धान-कार्य मे लगाया जाय।
५. विश्वविद्यालय-शिक्षकों की व्यावसायिक उन्नति के लिये उनके अनुसन्धान-सम्बन्धी प्रकाशनो को प्रमुख आधार माना जाय।
६. विभिन्न अनुसन्धान संस्थाओ मे कार्य करने वाले वैज्ञानिको को शिक्षण तथा अनुसन्धान कार्य में भाग लेने के लिए आमन्त्रित किया जाय।
७. स्नातकोत्तर छात्रो को अध्ययन-काल मे अपनी रुचि के विषय में विशेष योग्यता प्राप्त करने के लिये दूसरे विश्वविद्यालयों या संस्थानों में भेजने की व्यवस्था की जाय।
८. विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग द्वारा शिक्षकों, अनुसन्धान-कर्त्ताओं तथा प्रयोगशाला टेकनिशियनो को दूसरे विश्वविद्यालयों तथा अनुसन्धान-केन्द्रो का निरीक्षण करने के लिये पर्याप्त रूप से सुविधाएँ प्रदान की जायें।
९. विश्वविद्यालय के गुणात्मक पक्ष मे सुधार करने के लिये सामूहिक-कार्य Team-work) का विकास किया जाय।
१०. *किसी अध्यक्ष या शिक्षक के अधीन किये जाने वाले अनुसन्धानों की* संख्या को सीमित रखा जाय।
११. पी० एच-डी० करने के लिये आवश्यक-योग्यताओं को उच्च बनाया जाय।
१२. इस समय देश में बहुत से संस्थानो मे अनुसन्धान-कार्य किया जा रहा है। परन्तु वे विश्वविद्यालयों से अलग कार्य कर रहे हैं। अत इन संस्थानों को विश्वविद्यालयों के क्षेत्र मे लाने के लिये महत्वपूर्ण कदम उठाये जायें।
१३. विदेशों द्वारा प्रदान की जाने वाली अभिसदस्यताओं (Fellowships) के अतिरिक्त भारत-सरकार द्वारा विदेशों में उच्च अध्ययन करने के लिये कम से कम १०० फ़ैलोशिपों की प्रतिवर्ष व्यवस्था की जाय। ये फ़ैलोशिप असाधारण योग्यता वाले व्यक्तियों को प्रदान की जायें। परन्तु उनमे यह समझौता कर लिया जाय कि वे उच्च अध्ययन या अनुसन्धान कार्य करने के उपरान्त अपने देश मे आकर कार्य करेंगे।

समीक्षा

विश्वविद्यालयों का मुख्य कार्य है—अनुसन्धान। इसी से उनकी ख्याति बढ़ती ... है देश-विदेशों से छात्र आकर्षित होते हैं। दुःख के साथ लिखना पड़ता ... । को छोड़कर और किसी का भी ध्यान अनुसन्धान पर

नहीं है। इसके दो प्रमुख कारण हैं—धन और योग्य शिक्षकों का अभाव। यदि किसी विश्वविद्यालय में दोनों चीजें उपलब्ध हैं, तो भी अनुसन्धान करने वाले छात्र के मार्ग में एक विचित्र बाधा उपस्थित होती है। अनुसन्धान कराने वाला अध्यापक उसको अपने अधीन कार्य करने देता है या नहीं, यह बिल्कुल अध्यापक पर निर्भर है। छात्र की विशेष योग्यता उसके लिये बिल्कुल व्यर्थ है। वह पथ-प्रदर्शित होता है—विभिन्न बातों से, जिन पर किसी तरह का प्रतिबंध लगाया जाना असम्भव है। अतः यदि आयोग यह सुझाव देता, तो अधिक अच्छा होता—अनुसन्धान-केन्द्रों की पृथक् स्थापना की जाय और छात्रों को योग्यता के आधार पर उनमें प्रवेश दिया जाय।

आयोग का सर्वोत्तम सुझाव यह है कि योग्य व्यक्तियों को विदेशों में अध्ययन करने के लिये अभिसदस्यतायें दी जायें। यहाँ भी एक संकट है। योग्य व्यक्ति कौन समझे जायेंगे—जो वास्तव में योग्य होंगे या जिनको चुनाव करने वाले योग्य समझेंगे? इसका उत्तर आप स्वयं दे सकते हैं।

४. विश्वविद्यालयों में अनुसंधान-व्यय
Expenditure on University Research

आयोग ने विश्वविद्यालयों में अनुसंधान-कार्य से सम्बन्धित व्यय के बारे में अधोलिखित विचार व्यक्त किये हैं :—

१. विश्वविद्यालय के सम्पूर्ण व्यय का ⅓ भाग अनुसन्धान-कार्य पर व्यय किया जाय।
२. 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' द्वारा अनुसन्धान-कार्य को प्रोत्साहन देने के लिये विश्वविद्यालयों को पृथक् रूप से धनराशि प्रदान की जाय।
३. अनुसन्धान-कार्य को प्रोत्साहित करने के लिये पर्याप्त विदेशी मुद्रा की व्यवस्था की जाय।

समीक्षा

आयोग के पहले दो सुझाव तो अच्छे हैं, पर तीसरा उचित नहीं जान पड़ता है। हम इस पक्ष में नहीं हैं कि अनुसंधान कार्य के लिये विदेशी मुद्रा ली जाय। आखिर, यह विदेशी मुद्रा किस-किस कार्य के लिये ली जायगी। अभी तक शिक्षा-कार्य इससे बहुत-कुछ बचा हुआ था, पर क्योंकि आयोग ने रास्ता दिखा दिया है, इसलिये सम्भव है कि भारत-सरकार उस पर अच्छी तरह चलने लगे।

५. विज्ञान-सम्बन्धी राष्ट्रीय नीति
National Science Policy

आयोग ने इस बात पर बल दिया कि सरकार विज्ञान के सम्बन्ध में एक राष्ट्रीय नीति का निर्माण करे। इस विषय में आयोग के सुझाव निम्नांकित हैं :—

१. सरकार को वैज्ञानिक मामलों में परामर्श देने के लिये सलाहकार समितियों की स्थापना करनी चाहिये। इन समितियों में विश्व-

विद्यालयों, अनुसन्धान-सस्थानों, उद्योगो तथा सार्वजनिक जीवन के व्यक्तियो को प्रतिनिधित्व दिया जाना चाहिये। इन समितियो में वैज्ञानिको तथा प्रौद्योगिकी से सम्बन्धित व्यक्तियो को ही स्थान न दिया जाय—वरन् अर्थशास्त्रियों, समाजशास्त्रियो तथा उन व्यक्तियो को भी स्थान दिया जाय, जिन्हें उद्योग तथा प्रबन्ध का अनुभव प्राप्त है।

२. 'मंत्रिमडल (Cabinet) से सम्बन्धित 'वैज्ञानिक सलाहकार समिति' (Scientific Advisory Committee) को उपरोक्त सिद्धान्तो के अनुसार पुनर्गठित किया जाय। इस समिति का एक कुशल एव प्रभावशाली सचिवालय हो तथा इसे देश की वैज्ञानिक आवश्यकताओ को निश्चित करने का अधिकार दिया जाय। यह राष्ट्रीय अनुसन्धान-नीति का भी पुनर्निरीक्षण करे।

३. अनुसंधान-कार्यों की प्राथमिकता निश्चित करते समय हमे अपनी राष्ट्रीय आवश्यकताओ द्वारा पथ-प्रदर्शित होना चाहिये।

४. 'राष्ट्रीय अनुसन्धान-नीति' (National Research Policy) तथा विश्वविद्यालयों की नीतियो का प्रमुख कार्य—अनुसन्धान के लिये उपयुक्त वातावरण का निर्माण करना होना चाहिये।

५. 'राष्ट्रीय विज्ञान-सस्थान' (National Institute of Science) को पुनर्गठित किया जाय, तभी वह 'राष्ट्रीय एकादमी' (National Academy) के दायित्वो को पूर्ण करने मे समर्थ होगा।

६. एक 'विज्ञान एकादमी' (Science Academy) की स्थापना की जाय।

समीक्षा

आयोग का यह सुझाव है कि वैज्ञानिक मामलो मे सरकार को सलाह देने के लिये सलाहकार समितियों की स्थापना की जाय। हमे इसमें कोई लाभ नही दिखाई देता है। कारण यह है कि इन सलाहकारों से सलाह तो कभी-कभी ली जायगी, पर इनको लम्बे वेतन प्रति मास देने पड़ेंगे। अतः ये सलाहकार समितियाँ बहुत मँहगी पड़ेंगी। इससे अधिक अच्छा तो यह होगा कि आवश्यकता पड़ने पर शिक्षा-मन्त्रालय के परामर्श से योग्य व्यक्तियो को सलाह देने के लिये आमन्त्रित किया जाय। इसमें व्यय भी कम होगा और सलाह भी अधिक अच्छी मिलेगी।

४. निरक्षरता को समाप्त करने के लिये दोहरा कार्य-क्रम बनाया जाय, जिसमे चयनात्मक (Selective) तथा सार्वभौमिक पद्धति को अपनाया जाय।

५. चयनात्मक पद्धति के अन्तर्गत उन विशेष प्रौढ़ों की शिक्षा की व्यवस्था की जाय, जिनको सरलता से साक्षर बनाया जा सकता है। इनको साक्षर बनाने के लिये बड़े फार्मों, वाणिज्य, औद्योगिक केन्द्रों, ठेका लेने वालो तथा अन्य क्षेत्रो के मालिको को उत्तरदायी बनाया जाय। यदि आवश्यकता पड़े तो इनके लिये अधिनियम बनाया जाय। इन मालिकों को इस कार्य में प्रोत्साहन देने के लिये स्वयं सरकार कदम उठावे। सर्वप्रथम, यह सार्वजनिक क्षेत्रो मे कार्य करने वाले निरक्षर प्रौढ़ों को साक्षर बनाये और साक्षरता-योजना के पाठ्य-क्रमो मे उन तत्वों को स्थान प्रदान करे, जो आर्थिक तथा सामाजिक विकास के लिये आवश्यक है। इस प्रकार सरकार नेतृत्व प्रदान करके सार्वजनिक क्षेत्रों के प्रौढ़ों को साक्षर बनाने के लिये यह अधिनियम बना सकती है कि प्रत्येक फर्म या उद्योग का मालिक प्रत्येक निरक्षर कार्यकर्ता को नियुक्ति के समय से ३ वर्ष के अन्दर साक्षर बना दे।

६. सार्वभौमिक पद्धति के अन्तर्गत देश के समस्त शिक्षित स्त्रियों एवं पुरुषों को इस कार्य मे लगाया जाय। सार्वभौमिक आन्दोलन के संगठनों मे शिक्षकों, छात्रों तथा समस्त शिक्षा-संस्थाओं को सक्रिय रूप से सम्मिलित किया जाय। उच्चतर प्राथमिक, निम्न माध्यमिक, उच्चतर-माध्यमिक, व्यावसायिक विद्यालयों, कॉलेजों तथा विश्वविद्यालयों के पूर्व-स्नातक स्तर के सभी छात्रों को प्रौढ़ों को पढ़ाने का कार्य सौंपा जाय। छात्रों से यह कार्य अनिवार्य राष्ट्रीय सेवा के कार्य-क्रम के अभिन्न अंग के रूप में कराया जा सकता है। प्रत्येक शिक्षा-संस्था अपने क्षेत्र की निरक्षरता को दूर करने के लिए कार्य करे।

७. निरक्षरता को दूर करने के लिए विद्यालयों को सामुदायिक जीवन के केन्द्रों में परिवर्तित किया जाय।

८. कोई भी साक्षरता-आन्दोलन पूर्व-नियोजन के अभाव में आरम्भ न किया जाय।

९. स्त्रियों में साक्षरता की उन्नति के लिए केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड (Central Social Welfare Board) [illegible] (Co- [illegible] Council) का सहयोग लिया जाय और [illegible] की नियुक्ति की जाय।

१०. साक्षरता को बनाये रखने के लिये अनुसरण कार्य-क्रम (Follow-up), पुस्तकालय का प्रयोग तथा पठन-सामग्री का उत्पादन किया जाय।

समीक्षा

वयस्कों मे निरक्षरता का उन्मूलन करने के लिये आयोग ने अति व्यापक और विवेकपूर्ण सुझाव दिये हैं। सार्वभौमिक और अशकालीन शिक्षा की व्यवस्था, चयनात्मक और सार्वभौमिक पद्धतियाँ, विद्यालयों का सामुदायिक जीवन के केन्द्रों मे परिवर्तन और ग्राम-सेविकाओं की नियुक्ति—ये सभी सुझाव अति उत्तम हैं। इनको स्वीकार करके और इनके अनुसार कार्य करके वयस्क-निरक्षरता का उन्मूलन अवश्य किया जा सकता है। पर अधिनियम बनाना और छात्रों को साक्षरता का प्रसार करने के लिये बाध्य करना—ये दो बातें हमको उचित नहीं जान पड़ती हैं। इन सुझावों को देकर आयोग ने सरकार के कंधो से वयस्क-शिक्षा का भार बहुत-काफी हल्का कर दिया है।

वास्तविकता यह है कि निरक्षरता का उन्मूलन करने का दायित्व सरकार पर है, और सरकार ने इस दिशा में अभी तक कोई ठोस कदम नहीं उठाया है। सरकार ने वयस्को के लिये उपयुक्त पाठ्य-क्रम का निर्माण नहीं किया है, प्रौढ़ो के लिये उपयुक्त शिक्षण-पद्धतियों की खोज नहीं की है, प्रौढ़-शिक्षा के अध्यापकों की समस्या का समाधान नहीं किया है, वयस्को के लिये उपयुक्त साहित्य का निर्माण नहीं किया है और धनाभाव का बहाना किया है। ये सब कार्य सरकार के द्वारा ही किये जाते हैं—छात्रों, साधारण व्यक्तियों, मिल-मालिकों आदि के द्वारा नहीं। अतः आयोग को निरक्षरता-उन्मूलन का उत्तरदायित्व सरकार पर रखना था। फिर भी सरकार ने यह निश्चय करके कि २० वर्ष में भारत मे निरक्षरता का उन्मूलन कर दिया जायगा, अपनी विशाल हृदयता का परिचय दिया है।[1] पर सरकार ने यह स्पष्ट नहीं किया है कि इस विशाल कार्य को इतने अल्प समय मे किस प्रकार किया जायगा।

४. अनवरत शिक्षा
Continuation Education

आयोग ने शिक्षित वयस्कों की शिक्षा को जारी रखने के लिये निम्नलिखित सुझाव दिये हैं :—

१. सभी प्रकार तथा सभी स्तरों की शिक्षा-संस्थाएँ नियमित समय के पश्चात् उन व्यक्तियों के लिये, जो पढ़ने की इच्छा रखते हैं, विभिन्न पाठ्य-विषयों के शिक्षण की व्यवस्था करने के लिये प्रोत्साहित की जायें।
२. शिक्षा-संस्थाओं मे ऐसे पाठ्य-विषयों का आयोजन किया जाय, जिनके द्वारा वयस्को के सामान्य ज्ञान एवं अनुभव मे वृद्धि की जा सके, जिससे वे अपने जीवन की समस्याओं को हल करने मे समर्थ हो सकें।

1. The Hindustan Times, August 23, 1967.

३. कार्य-कर्त्ताओं (Workers) को जीवन के दृष्टिकोण को विस्तृत बनाते तथा अपनी कुशलताओ के विकास के लिये आगे शिक्षा प्रदान की जाय। इसके लिये विशेष अंश-कालीन पाठ्य-विषयो का आयोजन किया जाय।
४. 'केन्द्रीय समाज-कल्याण-परिषद' द्वारा संचालित प्रौढ़ स्त्रियों के लिये सस्थाएँ तथा मैसूर राज्य मे स्थित विद्यापीठो के समान विशेष सस्थाएँ स्थापित की जायँ।

समीक्षा

अनवरत शिक्षा को प्रौढ़-शिक्षा का सबसे महत्त्वपूर्ण अङ्ग कहना अनुचित न होगा। आयोग का यह सुझाव ठीक है कि वयस्को के लिये अनवरत शिक्षा की व्यवस्था की जाय, क्योंकि यदि ऐसा नही किया गया, तो साक्षर होने के कुछ समय बाद वयस्क फिर निरक्षर हो जायँगे। पर अनवरत शिक्षा के विषय मे आयोग द्वारा दिये गये सुझावो मे कई बातो का अभाव है।

निरन्तर शिक्षा के लिये अप्रलिखित बातो की बहुत आवश्यकता है—ऐसी पुस्तको, चार्टों, समाचार-पत्रो, मासिक और साप्ताहिक पत्रिकाओं, चित्रो आदि की व्यवस्था की जाय, जो वयस्को की रुचि के अनुकूल हो। एक ऐसी मासिक पत्रिका का प्रकाशन किया जाय—जिसमे खेल-कूद, कृषि तथा विश्व से सम्बन्धित समाचार हों; क्योंकि नव-साक्षरो के लिये इस प्रकार की पत्रिका की अत्यधिक आवश्यकता है। आयोग इस प्रकार के सुझावो के बारे मे मौन है। सम्भवतः वह ऐसे सुझाव देकर सरकार का व्यय बढ़ाना नही चाहता था।

५ पत्राचार पाठ्य-क्रम
Correspondence Courses

आयोग ने वयस्क-शिक्षा का प्रसार करने के लिये 'पत्राचार द्वारा शिक्षा' पर बल दिया है, जिसमे उसने निम्नांकित बातो को स्थान दिया है :—

१. उन लोगो के लिये पत्राचार-कोर्सों की व्यवस्था की जाय जो अंश-कालीन कोर्सों का भी अध्ययन करने मे असमर्थ है।
२. जो व्यक्ति पत्राचार-कोर्स लें, उन्हें कभी-कभी शिक्षकों से मिलने के अवसर प्रदान किये जायँ।
३. पत्राचार-कोर्सों का रेडियो तथा टेलीविजन कार्य-क्रमों से सामञ्जस्य स्थापित किया जाय।
४. पत्राचार-कोर्स उन व्यक्तियों के लिए भी आयोजित किये जायँ जो अपने जीवन को सांस्कृतिक तथा लोकोपयोगिक महत्त्व के विषयों का अध्ययन करके समृद्ध बनाना चाहते है।
५. पत्राचार-कोर्स कृषि, उद्योग तथा अन्य क्षेत्रों के कार्य-कर्त्ताओं के लिए भी व्यवस्थित किये जायँ।

समीक्षा

वयस्क-शिक्षा प्रसार के लिए 'पत्राचार-कोर्स' बिल्कुल व्यर्थ जान पड़ते हैं। ऐसा जान पड़ता है कि आयोग को इस प्रकार के कोर्सों से विशेष प्रेम है, क्योंकि हर जगह उसने इन पर बल दिया है। तनिक सोचिये तो सही कि ये कोर्स वयस्क शिक्षा के लिए किस प्रकार लाभदायक सिद्ध हो सकते हैं। १९६१ की जन-गणना के अनुसार भारत में निरक्षर व्यक्तियों की संख्या ६६.३% है। इनमें से लगभग ७०% ग्रामों में रहते हैं। इसके अतिरिक्त, देश में ८२६ भाषायें तथा बोलियाँ बोली जाती हैं। पहली बात तो यह है कि निरक्षर व्यक्तियों के लिए पत्राचार-कोर्स अर्थ ही नहीं रखते हैं। दूसरी यह कि इतनी भाषाओं में इन कोर्सों को तैयार कौन करेगा? आखिर, साक्षर तो सभी निरक्षर व्यक्तियों को बनाया जाना है।

हम यह मान सकते हैं कि नव-साक्षरों के लिए 'पत्राचार-कोर्स' हितकर हो सकते हैं। पर वे इनको पढ़ेंगे क्यों और कैसे? अधिकांश नव-साक्षरों के पास इन पर व्यय किये जाने के लिए न तो धन है, न अवकाश है, और न इच्छा ही है। आप नगर में निवास करने वाले किसी निरक्षर व्यापारी को ले लीजिए। वह पढ़ने को—समय नष्ट करना समझता है। जितना समय वह पढ़ने में नष्ट करेगा, उसका सद् उपयोग वह धन का अर्जन करके करेगा।

इन सब बातों को देखते हुए हम कह सकते हैं कि वयस्क-शिक्षा में पत्राचार-कोर्सों की लेश मात्र भी उपयोगिता नहीं है।

६. पुस्तकालय
Libraries

आयोग ने प्रौढ़-शिक्षा में पुस्तकालयों के कार्य के विषय में अधोलिखित सुझाव दिये हैं:—

१. 'पुस्तकालय-सलाहकार-समिति' (Advisory Committee on Libraries) ने समस्त देश में पुस्तकालयों का एक जाल बिछाने का जो सुझाव दिया है, उसे कार्यान्वित किया जाय।

२. विद्यालयों के पुस्तकालयों को सार्वजनिक पुस्तकालयों के रूप में संगठित किया जाय और उनमें बच्चों तथा नव-साक्षरों (Neo-Literates) की रुचियों के अनुसार पठन-सामग्री को स्थान दिया जाय।

३. पुस्तकालय गतिशील होने चाहिए और उन्हें वयस्कों को शिक्षित तथा आकर्षित करना चाहिए।

७ प्रौढ़-शिक्षा में विश्वविद्यालयों का कार्य
Role of Universities in Adult Education

आयोग का विचार है कि विश्वविद्यालयों को प्रौढ़ों को शिक्षित करने के विषय में अपने दायित्व को ग्रहण करना चाहिये। विश्वविद्यालयों को समुदाय के सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक तथा सांस्कृतिक विकास के लिये कार्य करना चाहिये। विश्वविद्यालय पत्राचार-कोर्सों, प्रसार व्याख्यानों, सेमिनारों, स्वच्छता, जनसंख्या पर नियन्त्रण तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य-सम्बन्धी समस्याओं पर विचार करके उन विचारों को जनता तक पहुँचाने के लिये विभिन्न आन्दोलनों का संचालन कर सकते हैं। आयोग का मत है कि प्रौढ़-शिक्षा के कार्य-क्रमों को संचलित करने के लिये प्रत्येक विश्वविद्यालय प्रौढ़-शिक्षा-विभाग खोले और प्रौढ़-शिक्षा से सम्बन्धित कार्य-क्रमों को चलाने के लिये सरकार द्वारा विश्वविद्यालयों को आर्थिक सहायता दी जाय।

८. प्रौढ़-शिक्षा का संगठन तथा प्रशासन
Organization & Administration of Adult Education

आयोग ने प्रौढ़-शिक्षा के संगठन और प्रशासन के सम्बन्ध में निम्नलिखित विचार प्रस्तुत किये हैं :—

१. 'राष्ट्रीय प्रौढ़-शिक्षा-परिषद्' (National Board of Adult Education) की स्थापना की जाय, जिसमें समस्त सम्बन्धित मन्त्रालयों तथा साधनों को प्रतिनिधित्व प्राप्त हो। शिक्षा-मन्त्रालय इस परिषद् की स्थापना के लिये क़दम उठाये। इस परिषद् के अधोलिखित कार्य होने चाहिये —
   - (अ) औपचारिक प्रौढ़-शिक्षा तथा प्रशिक्षण के विषय में केन्द्र-तथा राज्य-सरकारों को परामर्श देना, तथा उनके लिये विभिन्न कार्य-क्रमों का निर्माण करना।
   - (ब) प्रौढ़-शिक्षा के लिये आवश्यक साहित्य तथा पठन-सामग्री के लिए आवश्यक साधनों एवं सेवाओं को प्रोत्साहन देना।
   - (स) विभिन्न मन्त्रालयों तथा सरकारी एवं ग़ैर-सरकारी साधनों में सामंजस्य स्थापित करना।
   - (द) समय-समय पर प्रौढ़-शिक्षा के क्षेत्र में हुई प्रगति की जाँच करना और उसकी उत्तरोत्तर उन्नति के लिए सुझाव देना।
   - (य) प्रौढ़-शिक्षा के क्षेत्र में अनुसन्धान-कार्य को प्रोत्साहित करना।

२. राज्य-स्तर पर ऐसी परिषदों का निर्माण किया जाय और ज़िला स्तर पर ऐसी समितियाँ ज़िला-परिषदों का अंग बना दी जायें।

३. प्रौढ़-शिक्षा के क्षेत्र में जो ऐच्छिक साधन कार्य कर रहे हैं, उन्हें आर्थिक एवं प्राविधिक सहायता तथा प्रोत्साहन प्रदान किया जाय।

अध्याय १९

शिक्षा का नियोजन एवं प्रशासन

EDUCATIONAL PLANNING
&
ADMINISTRATION

इस अध्याय में आयोग ने शिक्षा के नियोजन और प्रशासन पर अपने विचार व्यक्त किये हैं। साथ ही उसने अपने सुझाव भी दिये हैं। हम आगे की पंक्तियों में इनका वर्णन कर रहे हैं।

१. शिक्षा का नियोजन
Educational Planning

आयोग का विचार है कि भारत में शिक्षा-नियोजन का प्रमुख कार्य—शिक्षा की राष्ट्रीय नीति का विकास करना है। वस्तुतः यह एक कठिन कार्य है, क्योंकि एक तो शिक्षा संविधान के अनुसार राज्यों का विषय है। दूसरे, विभिन्न स्तरों पर बहुत से अधिकारी किसी विषय या परिस्थिति के विषय में निर्णय करते हैं। इस विविधता के परिणामस्वरूप एक-सी नीति का विकास करना कठिन है। आयोग ने राज्यों तथा केन्द्र की प्रथम तीन पंचवर्षीय योजनाओं का अध्ययन किया और योजना-सम्बन्धी कुछ रीतियों के विकास एवं सुधार के लिये सुझाव दिये, जिनसे शिक्षा की राष्ट्रीय नीति का विकास किया जा सके। ये सुझाव निम्नलिखित हैं :—

१. अभी तक छात्रों की संख्या की वृद्धि पर बल दिया गया है। परन्तु अब शिक्षा के विस्तार के साथ-साथ, मुख्य रूप से गुणात्मक उन्नति पर बल दिया जाना चाहिए।
२. अभी तक यह नीति रही है कि प्रत्येक क्षेत्र के प्रत्येक कार्य-क्रम में कुछ न कुछ कार्य किया जाय। इससे हमारे सीमित साधन बहुत बड़े

७. प्रौढ़ शिक्षा में विश्वविद्यालयों का कार्य
Role of Universities in Adult Education

आयोग का विचार है कि विश्वविद्यालयों को प्रौढ़ों को शिक्षित करने के विषय में अपने दायित्व को ग्रहण करना चाहिये। विश्वविद्यालयों को [illegible] के सांस्कृतिक, आर्थिक, [illegible] तथा आधुनिक विकास के लिए कार्य करना चाहिए। विश्वविद्यालय पत्राचार-कोर्सों, प्रसार व्याख्यानों, सेमिनारों, सम्मेलनों, [illegible] का विश्लेषण तथा सार्वजनिक [illegible] समस्याओं पर विचार करके एवं विचारों को जनता तक पहुँचाने के लिये विभिन्न कार्यक्रमों का संचालन कर सकते हैं। आयोग का मत है कि प्रौढ़ शिक्षा के कार्य-क्रमों को संगठित करने के लिए प्रत्येक विश्वविद्यालय प्रौढ़ शिक्षा विभाग खोले और प्रौढ़-शिक्षा के सर्वांगीण कार्य क्रमों को चलाने के लिये सरकार द्वारा विश्वविद्यालयों को आर्थिक सहायता दी जाय।

८. प्रौढ़-शिक्षा का संगठन तथा प्रशासन
Organization & Administration of Adult Education

आयोग ने प्रौढ़ शिक्षा के संगठन और प्रशासन के सम्बन्ध में निम्नलिखित विचार प्रस्तुत किये हैं :—

१. 'राष्ट्रीय प्रौढ़ शिक्षा-परिषद्' (National Board of Adult Education) की स्थापना की जाय, जिसमें समस्त सम्बन्धित मन्त्रालयों तथा साधनों को प्रतिनिधित्व प्राप्त हो। शिक्षा-मन्त्रालय इस परिषद् की स्थापना के लिये कदम उठाये। इस परिषद् के अधोलिखित कार्य होने चाहिये —
   (अ) औपचारिक प्रौढ़-शिक्षा तथा प्रशिक्षण के विषय में केन्द्र तथा राज्य-सरकारों को परामर्श देना, तथा उनके लिये विभिन्न कार्य-क्रमों का निर्माण करना।
   (ब) प्रौढ़-शिक्षा के लिये आवश्यक साहित्य तथा पठन-सामग्री के लिए आवश्यक साधनों एवं सेवाओं को प्रोत्साहन देना।
   (स) विभिन्न मन्त्रालयों तथा सरकारी एवं गैर-सरकारी साधनों में सामञ्जस्य स्थापित करना।
   (द) समय-समय पर प्रौढ़-शिक्षा के क्षेत्र में हुई प्रगति की जाँच करना और उसकी उत्तरोत्तर उन्नति के लिए सुझाव देना।
   (य) प्रौढ़-शिक्षा के क्षेत्र में अनुसन्धान-कार्य को प्रोत्साहित करना।
२. राज्य-स्तर पर ऐसी परिषदों का निर्माण किया जाय और जिला स्तर पर ऐसी समितियाँ जिला-परिषदों का अंग बना दी जायें।
३. प्रौढ़-शिक्षा के क्षेत्र में जो ऐच्छिक साधन कार्य कर रहे हैं, उन्हें आर्थिक एवं प्राविधिक सहायता तथा प्रोत्साहन प्रदान किया जाय।

अध्याय १६

शिक्षा का नियोजन एवं प्रशासन

EDUCATIONAL PLANNING & ADMINISTRATION

इस अध्याय मे आयोग ने शिक्षा के नियोजन और प्रशासन पर अपने विचार व्यक्त किये हैं। साथ ही उसने अपने सुझाव भी दिये हैं। हम आगे की पंक्तियों में इनका वर्णन कर रहे हैं।

१. शिक्षा का नियोजन
Educational Planning

आयोग का विचार है कि भारत मे शिक्षा-नियोजन का प्रमुख कार्य—शिक्षा की राष्ट्रीय नीति का विकास करना है। वस्तुतः यह एक कठिन कार्य है, क्योंकि एक तो शिक्षा संविधान के अनुसार राज्यों का विषय है। दूसरे, विभिन्न स्तरों पर बहुत से अधिकारी किसी विषय या परिस्थिति के विषय मे निर्णय करते हैं। इस विविधता के परिणामस्वरूप एक-सी नीति का विकास करना कठिन है। आयोग ने राज्यो तथा केन्द्र की प्रथम तीन पंचवर्षीय योजनाओं का अध्ययन किया और योजना-सम्बन्धी कुछ रीतियो के विकास एवं सुधार के लिये सुझाव दिये, जिससे शिक्षा की राष्ट्रीय नीति का विकास किया जा सके। ये सुझाव निम्नलिखित हैं :—

१. अभी तक छात्रों की संख्या की वृद्धि पर बल दिया गया है। परन्तु अब शिक्षा के विस्तार के साथ-साथ, मुख्य रूप से गुणात्मक उन्नति पर बल दिया जाना चाहिए।
२ अभी तक यह नीति रही है कि प्रत्येक क्षेत्र के प्रत्येक कार्य-क्रम में कुछ न कुछ कार्य किया जाय। इससे हमारे सीमित साधन बहुत बड़े

क्षेत्र पर फैले; जिससे कुछ अपव्यय भी हुआ। परन्तु अब इस बात की आवश्यकता है कि कुछ महत्त्वपूर्ण कार्य-क्रमों पर ही ध्यान दिया जाय।

३. शिक्षा-मन्त्रालय 'Asian Institute of Educational Planning' के सहयोग से विभिन्न राज्यों में शैक्षिक नियोजन से सम्बन्धित विषयों का अध्ययन करे और विभिन्न स्तरों के नियोजन-अधिकारियों के प्रशिक्षण के लिये पाठ्य विषयों का संचालन करे।

४. 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' शिक्षा नियोजन, प्रशासन तथा वित्त से सम्बन्धित विषयों का अध्ययन करने के लिये उच्च केन्द्र स्थापित करने की सम्भावनाओं पर विचार करे।

५. समीप लोकतन्त्र में विभिन्न स्तरों—राष्ट्रीय, राज्यीय तथा स्थानीय—पर प्राथमिकताओं की पद्धति (System of Priorities) को ग्रहण किया जाय।

६. केन्द्रीकरण तथा विकेन्द्रीकरण के बीच सन्तुलन स्थापित किया जाय। इसके लिये विद्यालय शिक्षा को स्थानों तथा राज्यों की साझेदारी और उच्च शिक्षा को केन्द्र तथा राज्यों की साझेदारी माना जाय।

समीक्षा

शिक्षा के नियोजन के सम्बन्ध में आयोग ने बहुत ही महत्त्वपूर्ण सुझाव दिये हैं। यह सत्य है कि अब तक शिक्षा का जो नियोजन किया गया है, उसमें सफलता नहीं मिली है। छात्रों की संख्या पर बल दिये जाने से गुणात्मक पक्ष की अवहेलना हुई है और हमारे देश में शिक्षा के स्तर बहुत गिर गये हैं। अतः गुणात्मक पक्ष पर बल देकर स्तरों को ऊँचा करने की बहुत आवश्यकता है।

शिक्षा के नियोजन में शिक्षा-सम्बन्धी प्रत्येक क्षेत्र को सम्मिलित किया गया है। फलस्वरूप हमारे साधन बहुत बड़े क्षेत्र पर फैल गये हैं। ऐसा किया जाना अनुचित है, क्योंकि हमारे साधन सीमित हैं। अतः जैसा कि आयोग ने कहा है—हमें शिक्षा के विशेष कार्य-क्रमों को ही प्राथमिकता देनी चाहिये।

आयोग द्वारा प्रस्तावित प्राथमिकता की पद्धति, केन्द्रीकरण और विकेन्द्रीकरण के भी सुझाव अच्छे हैं। शिक्षा के नियोजन में इनको स्थान दिये जाने से शिक्षा की सर्वांगीण उन्नति होगी।

३. शिक्षा में विभिन्न साधनों के कार्य

Role of Different Agencies in Education

शिक्षा के विभिन्न साधनों के संदर्भ में आयोग ने [illegible] की चर्चा की

(अ) व्यक्तिगत साधनों के कार्य,
(ब) स्थानीय संस्थाओं के कार्य, तथा
(स) केन्द्रीय सरकार के कार्य ।

(अ) व्यक्तिगत साधनों के कार्य
Role of Private Enterprise

आयोग का विचार है कि शिक्षा मे व्यक्तिगत साधनो के कार्य अधोलिखित सिद्धान्तों पर निर्धारित किये जाएँ :—

१. अभी तक शिक्षा के विकास मे व्यक्तिगत साधनों ने महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। अत' राज्य को शिक्षा के विकास के लिये उनसे प्राप्त प्रत्येक प्रकार की सहायता का सभी सम्भव उपायो से उपयोग करना चाहिए ।
२. अब राज्य ने सभी आवश्यक शैक्षिक सुविधाओ को प्रदान करने का दायित्व ग्रहण कर लिया है। अत भविष्य में व्यक्तिगत साधनो के कार्य सीमित कर दिये जायें ।

(ब) स्थानीय संस्थाओं के कार्य
Role of Local Authorities

आयोग का विचार है कि सामान्यत: स्थानीय सस्थाएँ शिक्षा के प्रशासन के अधिकार को दो शर्तों—उत्तम प्रशासन तथा शिक्षा की उन्नति—के आधार पर प्राप्त करती हैं। यदि कोई स्थानीय सस्था उपरोक्त शर्तों की पूर्ति न कर पाये तो उससे इस अधिकार को छीना जा सकता है। भविष्य मे स्थानीय सस्थाओ के कार्य इस प्रकार होंगे :—

१. अन्तिम उद्देश्य के रूप में यह आवश्यक है कि विद्यालय तथा उनके स्थानीय समुदाय शिक्षा की प्रक्रिया में एक-दूसरे के साथ मिलकर कार्य करें।
२. इस सम्बन्ध में हमारा तात्कालिक उद्देश्य यह होना चाहिये कि ग्रामीण क्षेत्रों में ग्राम पचायतें तथा शहरी क्षेत्रो मे नगरपालिकाएँ स्थानीय स्कूलों को सहायता-अनुदान-प्रणाली के माध्यम से चलायें। इस उद्देश्य को सभी राज्यों मे राष्ट्रीय नीति के रूप में ग्रहण किया जाय।
३. जिला-स्तर पर एक कुशल 'स्थानीय शिक्षा-संस्था' (Local Education Authority) की स्थापना की जाय। इस शक्ति को 'जिला-विद्यालय-परिषद्' (District School Board) के नाम से पुकारा जा सकता है। इस परिषद् को जिले मे विश्वविद्यालय स्तर से नीचे की शिक्षा का विकास एवं सचालन करने का अधिकार दिया जाय। इस सिद्धान्त को राष्ट्रीय नीति के रूप में ग्रहण किया जाय।

४. शिक्षा तथा स्थानीय अधिकारियों के सम्बन्ध मे इस बात का ध्यान रखा जाय कि स्थानीय अधिकारियों द्वारा शिक्षकों को परेशान न किया जाय, और न शिक्षक स्थानीय गुटबन्दियों तथा राजनीति मे भाग लें।
५. 'जिला-विद्यालय-परिषद्' के क्षेत्राधिकार मे बड़ी नगरपालिकाओं को छोड़कर जिले का सम्पूर्ण क्षेत्र होना चाहिये। इस परिषद् में नगर-पालिकाओं, जिला-परिषदों, शिक्षा-शास्त्रियों तथा सम्बन्धित विभागों को प्रतिनिधित्व प्राप्त होना चाहिये। राज्य-सरकार का एक उच्च-अधिकारी इस परिषद् का पूर्ण-कालीन सचिव हो।
६. जिले की समस्त स्कूल-शिक्षा—सामान्य तथा व्यावसायिक—इस परिषद् के अधीन होनी चाहिये। यह जिले के समस्त राजकीय तथा स्थानीय संस्थाओं के विद्यालयों का प्रशासन करे।
७. यह परिषद् जिले मे विद्यालय-शिक्षा के विकास की योजना बनाये और उन योजनाओं को कार्यान्वित करे।
८. प्रत्येक विद्यालय परिषद् द्वारा शिक्षा का फण्ड स्थापित किया जाय।
९. शिक्षकों की नियुक्ति एवं उनका तबादला—एक विशेष समिति द्वारा किया जाय, जिसमें परिषद् का अध्यक्ष, सचिव तथा जिला-शिक्षा-अधिकारी होने चाहिये।

(स) केन्द्रीय सरकार के शिक्षा-कार्य
Role of Central Government

संविधान ने केन्द्रीय सरकार को बहुत से शैक्षिक दायित्व सौंपे हैं। संघीय तथा समवर्ती सूचियों मे केन्द्रीय सरकार के शैक्षिक दायित्वों का वर्णन मिलता है। उनको संक्षेप मे नीचे दिया जा रहा है :—

धारा ६३ के अनुसार—संविधान के लागू होने के समय बनारस, अलीगढ़ तथा दिल्ली विश्वविद्यालय और उन अन्य शिक्षा-संस्थानों का भार, जिन्हें संसद अधिनियम द्वारा राष्ट्रीय महत्व का घोषित कर दे।

धारा ६४ के अनुसार—भारत सरकार द्वारा वैज्ञानिक या प्राविधिक शिक्षा की उन संस्थाओं को पूर्ण रूप से या आंशिक रूप से आर्थिक सहायता दी जायगी जिन्हें संसद अधिनियम द्वारा राष्ट्रीय महत्व की घोषित कर दे।

धारा ६५ के अनुसार—निम्नलिखित के लिये संघीय संस्थाएँ :—
१. पेशेवर, व्यावसायिक या प्राविधिक प्रशिक्षण के लिये। इसमें पुलिस-अधिकारियों का प्रशिक्षण सम्मिलित होगा।
२. विशेष अध्ययनों या अनुसन्धान के लिये।
३. खोज (Investigation) मे वैज्ञानिक या प्राविधिक सहायता के लिये।

धारा ६६ के अनुसार—उच्च शिक्षा या अनुसन्धान तथा वैज्ञानिक और प्राविधिक संस्थाओं के स्तरों (Standards) का निर्धारण तथा उनमें सामंजस्य स्थापित करना।

समवर्ती सूची के अनुसार—केन्द्रीय सरकार श्रमिकों के व्यावसायिक तथा प्राविधिक प्रशिक्षण (Vocational & Technical Training of Labour) के लिये उत्तरदायी है।

भारत सरकार उपरोक्त कार्यों के अतिरिक्त अधोलिखित शैक्षिक कार्यों के लिये भी उत्तरदायी है :—

१ राष्ट्रीय नियोजन (National Planning) करना।

२. दूसरे देशों से शैक्षिक तथा सांस्कृतिक सम्बन्ध (Educational and Cultural Relation with other Countries) स्थापित करना।

३ संघीय क्षेत्रों में शिक्षा की वित्तीय व्यवस्था, संचालन एवं नियंत्रण करना।

४. हिन्दी का प्रचार, विकास तथा उसको समृद्ध बनाना।

५. राष्ट्रीय संस्कृति का संरक्षण एवं उन्नति करना।

६. यूनेस्को (UNESCO) जैसे अन्तर्राष्ट्रीय सङ्गठनों के साथ कार्य करना।

७. विभिन्न प्रकार की छात्रवृत्तियाँ प्रदान करने की व्यवस्था करना।

आयोग का विचार है कि 'शिक्षा' राष्ट्रीय महत्व का विषय होना चाहिये। अत. इस दृष्टिकोण से भारत-सरकार को शिक्षा के विकास के लिये निम्नलिखित कार्य करने चाहिये :—

१ केन्द्रीय सरकार शिक्षकों की स्थिति तथा शिक्षक-शिक्षा के सुधार के लिये कार्य करे।

२. कृषि, इन्जीनियरिंग, चिकित्सा आदि महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों में मानवशक्ति का नियोजन करे।

३. शैक्षिक सुविधाओं की समानता स्थापित करने के लिये कार्य करे, जिससे उन्नत वर्गों तथा निम्न वर्गों के बीच की खाई को कम किया जा सके।

४. संविधान के अनुसार निर्धारित आयु तक निःशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था करे।

५. माध्यमिक शिक्षा को व्यावसायिक रूप देने में सहयोग दे।

६. शिक्षा के स्तरों को सुधारे।

७. उच्च शिक्षा तथा अनुसन्धान कार्य के विकास के लिये कार्य करे।

८. वैज्ञानिक तथा शैक्षिक अनुसन्धान की उन्नति करे।

९ कृषि तथा उद्योग में व्यावसायिक शिक्षा के विकास में सहयोग दे।

१०. शिक्षा के क्षेत्र में नेतृत्व प्रदान करे।

समीक्षा

आयोग ने शिक्षा मे विभिन्न साधनों के कार्यों का स्पष्टीकरण किया है और उनको इन कार्यों के लिये उत्तरदायी बनाया है। जैसा कि आयोग ने लिखा है— व्यक्तिगत साधनों के कार्यों को सीमित किया जाना आवश्यक है। समय इसका साक्षी है। लार्ड रिपन (Lord Ripon) के समय से प्राथमिक शिक्षा के प्रसार का कार्य डिस्ट्रिक्ट बोर्डों और म्युनिसिपल बोर्डों के द्वारा किया जा रहा है। उससे भी पहले से माध्यमिक और उच्च-शिक्षा के विकास-कार्य में मिशनरी और भारतीय—दोनों संलग्न हैं। इन सब के द्वारा सचालित अधिकांश स्कूलों और कालिजों की हालत खराब है। यदि आप शिक्षा का विकृत और पतित रूप देखना चाहते हैं, तो इन स्कूलों और कालिजों को देखिये। व्यक्तिगत शिक्षा-संस्थायें व्यक्तियों की जमींदारियाँ और ठेकेदारियाँ हैं। सरकार ने भूपतियो और नरेशों को समाप्त कर दिया, पर शिक्षा के जमींदार और ठेकेदार अब भी मौजूद हैं। क्यों? यदि उचित दिशा में शिक्षा का विकास और विस्तार किया जाना है, तो आज और अभी एक अध्यादेश (Ordinance) के द्वारा इनको समाप्त कर दिया जाय।

हमने ऊपर जो-कुछ लिखा है—उसके आधार पर हम बलपूर्वक कह सकते हैं कि शिक्षा के व्यक्तिगत साधनों के साथ-साथ, डिस्ट्रिक्ट बोर्डों और नगरपालिकाओं ऐसी स्थानीय संस्थाओ को भी समाप्त कर दिया जाय। ब्रिटिश सरकार ने अपने देश की काउन्टी कौंसिलो (County Councils) का अनुकरण करके और अपने को शिक्षा के व्यय तथा दायित्व से बचाने के लिये शिक्षा का भार इन स्थानीय संस्थाओं को सौंप दिया था। अब देश मे न तो ब्रिटिश सरकार है और न शिक्षा के व्यय से बचने की बात। शिक्षा तो राज्य का दायित्व है। हमारा राज्य इगलैंड का अनुकरण क्यो करता है, रूस का क्यों नही करता?

आयोग का यह सुझाव ठीक जान पडता है कि विश्वविद्यालय-स्तर से नीचे की सब प्रकार की शिक्षा का भार 'जिला-विद्यालय-परिषद' कहलाने वाली केवल एक संस्था को दे दिया जाय। इससे शिक्षा को विकास-नीति में समानता आ जायेगी। इस समय प्राथमिक विद्यालयों का सम्बन्ध शिक्षा के उप-निरीक्षको से, और माध्यमिक शिक्षा का जिला-शिक्षा-निरीक्षको से है। अपनी-अपनी शिक्षा के विकास के सम्बन्ध मे दोनों की नीतियाँ भिन्न हैं। इन दोनो मे समानता और सामंजस्य स्थापित किया जाना आवश्यक है। यह तभी हो सकता है, जब प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा के लिये केवल एक संस्था उत्तरदायी हो।

आयोग ने केन्द्रीय सरकार पर शिक्षा के बहुत दायित्व रख दिये हैं। ऐसा किया जाना सर्वथा उचित है। यदि केन्द्रीय सरकार अपने को देश के सभी महत्वपूर्ण कार्यों के लिये उत्तरदायी मानती है, तो शिक्षा के दायित्व से क्यो बचना चाहती है? वस्तुतः उसे तो सम्पूर्ण देश के लिये शिक्षा की राष्ट्रीय नीति का निर्माण करके शिक्षा के सब स्तरों का भार अपने ऊपर लेना चाहिये। तभी तो शिक्षा का विस्तार होगा,

अन्यथा शिक्षा अपनी उसी मन्थर गति से आगे बढ़ती रहेगी, जिससे वह स्वाधीनता के इन लम्बे वर्षों में बढ़ी है।

३. राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षा का प्रशासन
Educational Administration At The National Level

राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षा के प्रशासन का सम्बन्ध निम्नलिखित ३ साधनों से है :—

(अ) शिक्षा-मंत्रालय।

(ब) विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग।

(स) राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण-परिषद्।

आयोग ने इन तीनों साधनों के प्रशासन-कार्यों का उल्लेख किया है, जिनका विस्तृत ब्यौरा हम नीचे दे रहे हैं। यथा—

(अ) शिक्षा-मंत्रालय
Ministry of Education

आयोग ने 'शिक्षा-मंत्रालय' के संगठन और कार्यों के विषय में निम्नांकित सुझाव दिये हैं .—

१. भारत-सरकार के शिक्षा-सचिव की नियुक्ति के सम्बन्ध में जो परम्परा; *अर्थात्—प्रख्यात शिक्षा-शास्त्री को इस पद पर नियुक्त करना*, प्रचलित है, उसे क़ायम रखा जाय।

२. यह अधिकाल पद (Tenure Post) होना चाहिये। प्रथम बार में इस पद की अवधि ६ वर्ष होना चाहिये। इस अवधि को असाधारण मामलों में ३ या ४ वर्ष के लिये और बढ़ाया जा सकता है। परन्तु इससे आगे अवधि को न बढ़ाया जाय।

३. अतिरिक्त या संयुक्त सचिवों के आधे पदों की पूर्ति राज्यों के शिक्षा-विभागों के अधिकारियों में से उन्नति के आधार पर, तथा शेष पदों की पूर्ति विश्वविद्यालय तथा विद्यालयों के योग्य शिक्षकों तथा प्रख्यात शिक्षा-शास्त्रियों में से चुनकर की जानी चाहिये।

४. शिक्षा-मंत्रालय विविध प्रकार के आवश्यक अध्ययनों का परीक्षण करने के लिये एक समिति नियुक्त करे। यह समिति विभिन्न अध्ययनों को संचालित करने के लिये कार्यक्रम भी बनाये।

५. 'केन्द्रीय शिक्षा-सलाहकार परिषद्' को उसकी स्थायी समितियों के साथ सत्वात्मक रूप से शक्तिशाली बनाया जाय।

६. शिक्षा-मंत्रालय में एक सांख्यकीय विभाग (Statistical Section) की स्थापना की जाय। यह विभाग शिक्षा नियोजन, नीति-निर्धारण तथा मूल्यांकन के लिये कार्य करे।

७. राज्यों के शिक्षा-विभागों में भी सांख्यिकीय यूनिटों को पुनर्संगठित कर शक्तिशाली बनाया जाय।

(ब) विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग
University Grants Commission

इसके संगठन और कार्यों का वर्णन अध्याय १३ में किया जा चुका है।

(स) राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण-परिषद्
National Council of Educational Research & Training

आयोग ने इसके संगठन और कार्यों के बारे में अधोलिखित सुझाव दिये हैं :—

१. 'राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण-परिषद्' विद्यालय-शिक्षा की उन्नति के लिये राष्ट्रीय स्तर पर कार्य करने वाला प्रमुख साधन होना चाहिये।
२. इस परिषद् को विद्यालय-शिक्षा की उन्नति के लिये 'राष्ट्रीय विद्यालय-शिक्षा-परिषद्' (National Board of School Education), राज्यों के शिक्षा-विभागों तथा 'राज्य-शिक्षा-संस्थानों' (State Institutes of Education) के सहयोग से कार्य करना चाहिये।
३. इस परिषद् की कार्यकारिणी समिति का रूप अखिल-भारतीय होना चाहिये। इसमें ग़ैर-सरकारी व्यक्तियों का बहुमत होना चाहिये। इसमें माध्यमिक तथा प्राथमिक स्तर के प्रतिभाशाली शिक्षकों को प्रतिनिधित्व दिया जाय।
४. परिषद् का पूर्णकालीन संचालक तथा संयुक्त संचालक (Joint Director) होना चाहिये। संचालक एक प्रख्यात शिक्षा-शास्त्री हो, और उसकी स्थिति उपकुलपति के समकक्ष होनी चाहिये। उसका कार्य-काल ५ वर्ष होना चाहिये, और उसे दूसरी बार भी चुना जा सकता है। परन्तु उसे तीसरी बार नहीं चुना जाना चाहिये। संयुक्त-संचालक का कार्य—संचालक को प्रशासकीय मामलों में सहायता प्रदान करना होना चाहिये।
५. परिषद् के अधीन कार्य करने वाले 'केन्द्रीय शिक्षा-संस्थान' (Central Institute of Education) को दिल्ली विश्वविद्यालय से सम्बद्ध कर दिया जाय।
६. राज्यों के शिक्षा-विभागों तथा परिषद् के अधिकारियों का आदान-प्रदान होना चाहिये।
७. परिषद् के क्षेत्र (Campus) को विकसित किया जाय और भवन-निर्माण कार्य को प्राथमिकता प्रदान की जाय।

समीक्षा

'शिक्षा-मन्त्रालय' के बारे मे आयोग ने २ नये सुझाव दिये हैं . (१) आवश्यक अध्ययनों का परीक्षण करने के लिये एक समिति की नियुक्ति, और (२) सांख्यकीय विभाग की स्थापना । इन दोनो सुझावो को क्रियान्वित करने से 'शिक्षा-मन्त्रालय' का कार्य अधिक कुशल हो जायगा और वह शिक्षा के प्रति अपने दायित्व का अधिक अच्छी प्रकार से निर्वाह कर सकेगा ।

आयोग के सुझाव के अनुसार 'राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसधान एवं प्रशिक्षण-परिषद' का रूप अखिल-भारतीय होना आवश्यक है। ऐसा होने से देश के विभिन्न भागों में शिक्षा से सम्बन्धित व्यक्ति इसके सदस्य हो सकेंगे। फलत सम्पूर्ण देश को आवश्यकताओं को घ्यान मे रखकर शिक्षा के कार्यों को करना सम्भव हो जायगा। यदि इस परिषद् मे माध्यमिक और प्राथमिक शिक्षा के अध्यापकों को प्रतिनिधित्व दे दिया जाय, तो इन स्तरो से सम्बन्धित शैक्षिक कार्य-क्रमो के नियोजन मे बहुत सरलता हो जायगी। यदि राज्यो के शिक्षा-विभागों के अधिकारी और परिषद् के अधिकारी समय-समय पर एक-दूसरे स्थान पर कार्य करेंगे, तो उनको वास्तविक स्थिति का पूर्ण ज्ञान हो जायेगा। इससे परिषद् को अपनी नीतियों के निर्धारण में सहायता मिलेगी ।

४. राज्यों के स्तर पर शैक्षिक प्रशासन
Educational Administration At The State Level

राज्यो के स्तर पर शिक्षा-योजनाओं के निर्माण एव विकास के लिए शिक्षा-विभाग प्रमुख साधन हैं। बडे खेद का विषय है कि इन विभागों के उपयुक्त विकास के लिये कोई प्रयास नहीं किया गया है। इनका ढाँचा अभी तक ब्रिटिशकालीन बना हुआ है। इनके कार्यक्रम तथा प्रक्रियाएँ परम्परागत हैं और इनके अधिकारियों का दृष्टिकोण कठोर तथा अनुदार है। यह सत्य है कि शिक्षा-विभागों का कुछ विस्तार अवश्य हुआ है। परन्तु परम्परागत ढंग मे ही हुआ है। यह संख्यात्मक विस्तार भी माँग के अनुसार नहीं हो पाया है। अत. आयोग ने इन दोषों को दूर करने के लिये अधोलिखित सुझाव दिये :—

१. राज्यों के स्तर पर एक ऐसी संस्था का निर्माण किया जाय, जो शैक्षिक कार्य-क्रमों में सामंजस्य स्थापित करे ।
२. राज्यों के स्तर पर एक वैधिक शिक्षा-परिषद् (Statutory Council of Education) का निर्माण किया जाय। इसका अध्यक्ष राज्य का शिक्षा-मंत्री हो। इसमें राज्य के विश्वविद्यालयों, शिक्षा के विभिन्न अंगों के डायरेक्टरो तथा कुछ प्रख्यात शिक्षा-शास्त्रियों को प्रतिनिधित्व दिया जाय ।

३. इस शिक्षा-परिषद् का प्रमुख कार्य—विद्यालय-शिक्षा मे सम्बन्धित मामलो में राज्य-सरकार को परामर्श देना, होना चाहिये।
४. इस परिषद् की वार्षिक रिपोर्ट उसके सुझावों सहित राज्य विधान-सभा के समक्ष प्रस्तुत की जाय।
५. शिक्षा-सचिव भारत सरकार के शिक्षा-सलाहकार की भाँति एक प्रख्यात शिक्षा-शास्त्री होना चाहिये। अतः शिक्षा-सचिव की नियुक्ति प्रशासकीय अधिकारियों मे से न की जाय। इसकी नियुक्ति को अधिकाल पद (Tenure Post) बनाया जाना उपयुक्त होगा।
६. शिक्षा-सचिवालय (Education Secretariat) का प्रमुख कार्य—शिक्षा-सम्बन्धी समस्याओं को प्रशासकीय, वित्तीय तथा सरकारी नीतियों के दृष्टकोण से परीक्षित करना होना चाहिये।
७. सचिवालय प्राविधिक मामलो मे सचालक के विचारों को पर्याप्त रूप से महत्त्व प्रदान करे और उसे विभाग के अध्यक्ष के रूप मे प्रभावशाली ढंग से कार्य करने मे सहायता प्रदान करे।
८. उच्चतर स्तर पर थोडे ही अधिकारी नियुक्त किये जायें, जिससे प्रशासकीय मामलों के व्यय मे कमी की जा सके, परन्तु ये अधिकारी योग एवं कुशल व्यक्ति होने चाहिये।

समीक्षा

सभी राज्यों मे शिक्षा के संचालन और प्रशासन का दायित्व शिक्षा-विभागों पर है। जैसा कि आयोग ने लिखा है—इन विभागो का ढाँचा ब्रिटिशकालीन बना हुआ है, क्योकि अंग्रेजो के द्वारा ही इनका निर्माण किया गया था। इसके अतिरिक्त, इन विभागो के अध्यक्ष अभी तक वही व्यक्ति बने हुए हैं, जो अंग्रेजो का राज्य-काल और उनकी शिक्षा-नीतियो को देख चुके हैं। अतः वे भारत की आधुनिक माँगो और परिस्थितियों की ओर ध्यान न देकर, पुराने पिसे-पिटे मार्ग का अनुसरण कर रहे हैं। स्वतन्त्र भारत मे, जिसका लक्ष्य—समाजवादी समाज की स्थापना करना है, यह सर्वथा अनुचित है। अतः आयोग के सुझावों को मान्यता देकर शिक्षा-विभागो का पुनर्संगठन किया जाना परम आवश्यक है।

आयोग द्वारा दिया गया 'शिक्षा-परिषद' की स्थापना का सुझाव मौलिक है। यह परिषद् शिक्षा-विभागों और शिक्षा-मंत्रालय को जोडने वाली कडी के रूप मे कार्य करेगी। आयोग का सर्वोत्तम सुझाव यह है कि शिक्षा-सचिव प्रतिद्ध शिक्षा-शास्त्री होना चाहिये। अभी तक ऐसा नही किया गया है। राज्य मे शक्ति-प्राप्त राजनैतिक दल एक ऐसे व्यक्ति को शिक्षा-मन्त्रि बनाता है, जो अन्य विभागो के मन्त्रि पद के लिये उपयुक्त नहीं समझा जाता है। पर क्योकि उसे मन्त्री बनाया जाना है, इसलिये उसे शिक्षा-सचिव के पद पर प्रतिष्ठित कर दिया जाता है।

ऐसे व्यक्ति से शिक्षा की उन्नति की आशा करना व्यर्थ है। अत. शिक्षा-सचिव के पद पर विख्यात शिक्षा-शास्त्री का होना अनिवार्य है। यदि ऐसा नहीं किया गया, तो शिक्षा की रूप-रेखा दिन-प्रतिदिन विकृत होती चली जायगी, उसमे व्यर्थ के परीक्षण किये जायेंगे और अन्त में उसे धूल-धूसरित कर दिया जायगा।

५. शैक्षिक कर्मचारी-दल
Educational Personnel

शैक्षिक कर्मचारी-दल के अन्तर्गत आयोग ने निम्नलिखित को स्थान दिया है :—

(अ) राजकीय शैक्षिक सेवा, तथा

(ब) शिक्षा-प्रशासकों का प्रशिक्षण।

हम निम्नांकित पंक्तियों मे इन पर प्रकाश डाल रहे हैं :—

(अ) राजकीय शैक्षिक सेवा
State Educational Service

राजकीय शैक्षिक सेवा के सम्बन्ध मे आयोग के सुझाव अधोलिखित हैं .—

१. प्रथम तथा द्वितीय श्रेणियो के अधिकारियों की संख्या मे वृद्धि की जाय।
२. जिला-विद्यालय-परिषदो के सचिव प्रथम श्रेणी के अधिकारी हों।
३. प्रथम श्रेणी के अधिकारियों मे ७५ प्रतिशत नवीन व्यक्ति (Freshers) तथा २५ प्रतिशत उन्नति-प्राप्त हों।
४. द्वितीय श्रेणी के अधिकारियों मे आधे नवीन तथा आधे उन्नति-प्राप्त हों।
५. शिक्षण तथा प्रशासकीय क्षेत्र मे कार्य करने वाले व्यक्तियों के वेतन-क्रम समान हो।
६. विभागीय व्यक्तियों (Departmental Staff) के वेतन-क्रमो को 'विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग' द्वारा निर्धारित विश्वविद्यालय-शिक्षकों के वेतन-क्रमों से सम्बन्वित किया जाय।

(ब) शिक्षा-प्रशासकों का प्रशिक्षण
Training of Educational Administrators

आयोग ने शिक्षा प्रशासकों के प्रशिक्षण के सम्बन्ध मे निम्नांकित सुझाव दिये हैं :—

१. प्रशासकीय तथा निरीक्षण-सम्बन्धी क्षेत्रो में कार्य करने वाले समस्त अराजपत्रित (Non-gazetted) प्रशासकों के लिये राज्य-शिक्षा-संस्थानो (State Institutes of Education) द्वारा सेवा-कालीन कार्य-क्रम सगठित किये जायँ।

२. राज्य-शिक्षा-संस्थान राजपत्रित (Gazetted) प्रशासकों के लिये सम्मेलनों, सेमिनारों तथा विचार-गोष्ठियों का आयोजन करें।
३. शिक्षा-प्रशासकों को अपनी योग्यताओं में वृद्धि करने के लिये प्रेरणा दी जाय।
४ शिक्षा-मंत्रालय राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षा-प्रशासकों के प्रशिक्षण के लिये 'राष्ट्रीय स्टाफ कॉलेज' (National Staff College for Educational Administrators) की स्थापना करे।
५. इस कॉलेज द्वारा दो प्रकार के कोर्सों का संचालन किया जाय :—
   (i) ३-६ सप्ताह का कोर्स—उन व्यक्तियों के लिये जो सेवा कर रहे हैं।
   (ii) दीर्घकालीन कोर्स—उन व्यक्तियों के लिये जो नये भर्ती किये गये हैं।

समीक्षा

आयोग ने राजकीय शैक्षिक सेवा के विषय में जो सुझाव दिये हैं, उनमें ोई विशेष बात नहीं है। उसने केवल इस बात का स्पष्टीकरण करने का प्रयास ेया है कि किस तरह के अधिकारी कहाँ होने चाहिये और नये तथा पुराने अधिारियों का अनुपात क्या होना चाहिये। इन बातों के बारे में सबका एक मत नहीं ो सकता है। इनका प्रमुख आधार—राज्य की आवश्यकताएँ और उपलब्ध धनाशि है।

प्रशासकों के प्रशिक्षण-सम्बन्धी सुझाव अवश्य अच्छे हैं। प्रशासन एक विशिष्ट ार्य है। सब व्यक्ति प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद भी अच्छे प्रशासक सिद्ध नहीं होते । फिर भी उन्हें अपने कर्त्तव्यों और कार्य-प्रणाली से अवगत कराने के लिये प्रशिक्षण ा आवश्यक है।

अध्याय २०

शिक्षा की वित्तीय व्यवस्था
EDUCATIONAL FINANCE

शिक्षा की वित्तीय-व्यवस्था के सम्बन्ध मे आयोग के विचार निम्न-लिखित हैं :—

१. शैक्षिक व्यय में वृद्धि : Increase in Educational Expenditure

अगले २० वर्षों मे प्रति व्यक्ति पर शिक्षा का व्यय ४½ गुना बढ़ा दिया जाय। १९६५-६६ में प्रति व्यक्ति पर शैक्षिक व्यय १२ रु० था। इस व्यय को १९८५-८६ में बढाकर ५४ रु० कर दिया जाय। यदि शिक्षा का विकास और राष्ट्र की प्रगति की जाती है, तो ऐसा किया जाना आवश्यक है।

२. धन-राशि का बँटवारा : Allocation of Funds

शिक्षा पर व्यय किये जाने वाले धन का बँटवारा निम्नलिखित प्रकार से किया जाय :—

१. धनराशि का ⅔ भाग विद्यालय-शिक्षा पर व्यय किया जाय।
२. शेष ⅓ भाग उच्च शिक्षा पर व्यय किया जाय।
३. १९६५ से १९७५ तक विद्यालयों के शिक्षकों के वेतनों में वृद्धि करने पर अधिक धन व्यय किया जाय।
४. १९७५ से १९८५ तक ७ वर्ष की प्राथमिक शिक्षा, विद्यालय-स्तर पर १ वर्ष की बढ़ी हुई शिक्षा, और माध्यमिक शिक्षा को व्यावसायिक रूप देने के लिये अधिक धन व्यय किया जाय।
५. १९८५ के बाद उच्च शिक्षा पर अधिक धन व्यय किया जाय।

३. शिक्षा के लिये धन के स्रोत : Sources of Educational Finance

शिक्षा के लिये धन की व्यवस्था करना राज्यों का कर्तव्य है। पर क्योंकि राज्य इस कार्य को अकेले नहीं कर सकते है, इसलिये निम्नलिखित उपायों को अपना कर धन का संग्रह किया जाय :—

१. स्थानीय व्यक्तियो, संगठनों और समुदायों से धन प्राप्त करने का प्रयास किया जाय।
२. समय-समय पर शिक्षा-सम्मेलनों का आयोजन किया जाय, उनमें व्यक्तियों को आमंत्रित किया जाय और उनसे शिक्षा की सुविधाओं में योग देने की प्रार्थना की जाय।
३. जिला-परिषदों को मालगुजारी पर शिक्षा-कर (Education Cess) लेने का अधिकार दिया जाय। राज्य-सरकार द्वारा निश्चय किया जाय कि यह कर कितना होना चाहिये।

४. जिला-परिषदों को सहायता-अनुदान : Grant-in-Aid to Zila-Parishads

राज्यों द्वारा जिला-परिषदों को निम्नलिखित सिद्धान्तो के आधार पर सहायता-अनुदान दिया जाय :—

१. शिक्षको के वेतनों, भत्तों और प्रशासकीय कार्यों के लिये पूरी धन-राशि।
२. विद्यालयों मे अध्ययन करने वाले प्रत्येक छात्र के लिये सहायता-अनुदान।
३. पुस्तकालयों, इमारतों, फ़र्नीचर आदि के लिये कुल व्यय का $\frac{3}{4}$ भाग।

५. नगरपालिकाओं को सहायता-अनुदान : Grant-in-Aid to Municipalities

१. नगरपालिकाओ को शिक्षा के कुछ व्यय का भार लेने के लिये बाध्य किया जाय।
२. नगरपालिकाओ द्वारा शिक्षा के व्यय के लिये भूमि और भवनों पर कर लगाया जाय।
३. राज्य द्वारा नगरपालिकाओ को सहायता-अनुदान उनकी धन-सम्पन्नता के अनुसार दिया जाय। निर्धन नगरपालिकाओ को अधिक सहायता-अनुदान दिया जाय।
४. सब निगमों (Corporations) को प्राथमिक शिक्षा के व्यय का भार अपने ऊपर लेने के लिये बाध्य किया जाय।

अध्याय २१

आयोग का मूल्यांकन

CRITICAL ESTIMATE OF THE COMMISSION

देश मे 'शिक्षा-आयोग' द्वारा शिक्षा के प्रस्तावों का मिश्रित स्वागत किय गया है। दूसरे शब्दों मे, इन प्रस्तावो को उचित और अनुचित—दोनो बताया गय है। हम इन नीचे प्रकाश डाल रहे हैं :—

(अ) पक्ष में तर्क : Arguments For

१. शिक्षकों का महाधिकार-पत्र Teachers' Magna Charta—श्री चगल (M. C. Chagla) ने कहा—आयोग द्वारा वेतन-दरों मे की जाने वाली सिफारिश—शिक्षको का महाधिकार-पत्र है। मुझे आशा है कि हम इस सिफारिश को क्रियान्वित कर सकेंगे। हमें दुःख है कि आज श्री चगला शिक्षा-मन्त्री के पद को सुशोभित नहीं कर रहे हैं।

२. शिक्षा के लिये नवीन योजना . New Plan for Education—"The Hindustan Times" ने अपने १ जुलाई, १६६६ के अक मे लिखा—आयोग ने विभिन्न स्तरों पर सम्पूर्ण शिक्षा-प्रणाली मे सुधार करने के लिये एव नई योजना प्रस्तुत की है। इस योजना का मुख्य उद्देश्य है—शिक्षा के परिचित दोषो को दूर करना और आधुनिक ससार के सदर्भ मे भारत की नवीन आवश्यकताओं की पूर्ति करना।

३. शिक्षा के भावी विकास का रूप · Form of Future Development of Education—"The Patriot" ने अपने २ जुलाई, १६६६ के अक मे लिखा—अपने सुझावो द्वारा आयोग ने निश्चित रूप से प्रचलित शिक्षा-प्रणाली के दोषो को अंकित किया है और शिक्षा के भावी विकास के रूप को चित्रित किया है।

४. शिक्षकों की वेतन-वृद्धि : Increase in Teachers' Salaries—आयोग
स्कूलों के शिक्षकों के वेतनों में वृद्धि करने के लिये बलपूर्वक सिफारिश की है। इस
म्बन्ध में "The Tribune" ने अपने १ जुलाई, १९६६ के अंक में लिखा—शिक्षा
विस्तार का अर्थ है—शिक्षकों की सख्या मे वृद्धि। आयोग का सुझाव है कि जो
शिक्षक कार्य कर रहे हैं, उनकी सेवाओं से लाभ उठाया जाय और अधिक बड़ी सख्या
लोगों को शिक्षा-व्यवसाय के प्रति आकर्षित किया जाय। ये दोनों कार्य सरकारी
और गैर-सरकारी स्कूलों में शिक्षकों को अधिक वेतन देकर किया जाय।

५. क्रान्तिकारी योजना : A Revolutionary Plan—"The Times of
India" ने अपने ३ जुलाई, १९६६ के अंक में आयोग द्वारा प्रस्तावित शिक्षा-योजना
को क्रान्तिकारी योजना बताते हुए लिखा—पिछले समय में अनेकों आयोगों ने स्कूल
या विश्वविद्यालय-शिक्षा में कुछ सुधारों के लिये सुझाव दिये। पर 'शिक्षा-आयोग'
ही ऐसा आयोग है, जिसने पहली बार शिक्षा के सब स्तरों में सुधार करने के लिये
सुझाव दिये हैं। वस्तुतः आयोग ने शिक्षा की जो योजना प्रस्तुत की है, वह क्रान्ति-
कारी है। इसका उद्देश्य—शिक्षा के माध्यम से राष्ट्रीय लक्ष्यों को प्राप्त करना है।

६. ऐतिहासिक लेख : A Historical Document—'शिक्षा-आयोग' के
प्रतिवेदन को 'ऐतिहासिक लेख' की संज्ञा देते हुए, "The Educational India" ने
अपने जुलाई, १९६६ के अङ्क में लिखा—आयोग का प्रतिवेदन एक ऐतिहासिक लेख
है। आयोग के अध्यक्ष के शब्दों में यह प्रतिवेदन देश में शैक्षिक क्रान्ति प्रारम्भ करने
की दिशा में पहला क़दम है।

७. व्यावहारिक सुझाव . Practical Suggestions—"The Progress of
Education" ने अपने जुलाई, १९६६ के अक में लिखा—आलोचक चाहे कुछ भी
कहें, पर यह बात स्वीकार करनी पड़ेगी कि आयोग ने शिक्षा के सब स्तरों पर
समस्याओं का अध्ययन किया है और उनके समाधान के लिये व्यावहारिक सुझाव
दिये हैं।

८. शिक्षा का जीवन से सम्बन्ध : Relation of Education to Life—
आयोग ने इस बात पर बल दिया है कि शिक्षा का जीवन से सम्बन्ध स्थापित किया
जाय। इस विषय में अपने विचारों को व्यक्त करते हुए चंडीगढ़ से प्रकाशित होने
वाले "Awaz-i-Ustad" ने अपने ७ जुलाई, १९६६ के अक में लिखा—आयोग ने
शिक्षा के सब स्तरों के बारे में क्रान्तिकारी सुझाव दिये हैं। यदि इनको कार्यान्वित
कर दिया जाय, तो शिक्षा का सम्पूर्ण ढाँचा बदल जायगा। आयोग ने इस बात पर
बल दिया है कि शिक्षा का व्यक्तियों के जीवन और आवश्यकताओं तथा हमारी
विकास-योजनाओं से सम्बन्ध स्थापित किया जाय।

९. आदर्शवाद और व्यावहारिक यथार्थवाद का मिश्रण : Synthesis of
Idealism & Practial Realism—"National Solidarity" ने अपने जुलाई,

१९६६ के अंक में लिखा—अपनी सिफारिशों का निर्माण करते समय आयोग ने भारत की भावी आवश्यकताओं और वर्तमान जरूरतों का पूरा विचार रखा है। ये सिफारिशें—आदर्शवाद और व्यावहारिक यथार्थवाद का प्रभावशाली मिश्रण है।

१०. **विज्ञान की शिक्षा पर बल : Emphasis on Science Education**—'बिहार राज्य के विज्ञान-शिक्षक-परिषद्' (Bihar State Science Teachers' Association) ने आयोग द्वारा प्रस्तावित विज्ञान की शिक्षा का स्वागत किया। उन्होंने एक प्रस्ताव मे यह पास किया कि विज्ञान पर आधारित शिक्षा के कार्य को शीघ्र ही प्रारम्भ किया जाय।

११. **शिक्षकों की प्रतिक्रिया : Reaction of Teachers**—शिक्षक इस बात से प्रसन्न हैं कि आयोग ने उनके लिये वेतन की अच्छी दरें निश्चित की हैं, और इस बात की सिफारिश की है कि वे ६५ वर्ष की आयु तक अपने पदों पर कार्य कर सकते हैं।

१२. **अभिभावकों की प्रतिक्रिया · Reaction of Parents**—अभिभावक इस बात से प्रसन्न हैं कि छात्रों को विद्यालय-स्तर पर अंग्रेजी और हिन्दी मे से एक विषय को चुनने की स्वतन्त्रता मिलेगी।

१३. **डा० डी० एस० रेड्डी का विचार . View of Dr. D. S Reddi**—उस्मानिया विश्वविद्यालय के उपकुलपति डा० रेड्डी का विचार है कि आयोग ने त्रि-भाषा के फार्मूले मे संशोधन करके एक अति जटिल समस्या का समाधान किया है।

(ब) विपक्ष मे तर्क : Arguments Against

१. **सुझावों की कार्यान्विति असम्भव · Implementation of Suggestions Impossible**—योजना-आयोग (Planning Commission) के सदस्य, डा० वी० के० आर० वी० राव (V. K. R. V Rao) को इस बात का पूर्ण विश्वास नहीं है कि आयोग के सुझावों को क्रियान्वित किया जा सकेगा, क्योंकि ऐसा करने से बहुत अधिक धन व्यय होगा। उनका कहना है—"मुद्रा मूल्य घटने के कारण हम कठिन परिस्थिति मे हैं। हमे इस बात से प्रसन्नता होगी कि चौथी पंचवर्षीय योजना में शिक्षा के लिये जो धन-राशि निश्चित की गई है, उसी मे हम अपना कार्य कर सकें।"

२. **शिक्षकों के लिये सुरक्षा का अभाव : No Security for Teachers**—'अखिल-भारतीय माध्यमिक शिक्षक-संघ' (All-India Secondary Teachers Federation) के जनरल सेक्रेटरी, श्री आर० पी गुप्त (R. P. Gupta) का कथन है—"आयोग शिक्षकों को अधिक सुरक्षा देने के लिये निश्चित उपायों का सुझाव देने में असफल रहा है। माध्यमिक विद्यालयों मे काम करने वाले शिक्षकों में से ८० प्रति

प्राप्त सहायता-अनुदान प्राप्त विद्यालयों में कार्य कर रहे हैं और उनके बारे में कोई सिफारिश नहीं की गई है।"

३. विश्वविद्यालय-शिक्षकों का असंतोष : Dissatisfaction of University Teachers—'विश्वविद्यालय-शिक्षक-संघ' (University Teachers' Association) के अध्यक्ष डा० आर० सी० मजूमदार (R. C. Majumdar) का मत है—"विश्वविद्यालय-शिक्षकों के वेतनों के बारे में जो सिफारिशें हैं, उनसे उनको लाभ नहीं होगा।"

४. बेसिक शिक्षा की मृत्यु का अनुमति-पत्र : Death Certificate of Basic Education—आयोग ने लिखा है कि शिक्षा के किसी भी स्तर को 'बेसिक शिक्षा' न कहा जाय। आयोग के इस दृष्टिकोण की कटु आलोचना करते हुए जी० एन० आचार्य (G. N. Acharya) ने "Blitz" के ६ जुलाई, १९६६ के अंक में लिखा—आयोग का प्रतिवेदन बेसिक शिक्षा की मृत्यु का अनुमति-पत्र है।

५. श्री प्रकाशवीर शास्त्री के विचार : *Views of Shri Prakash Vir Shastri*—"नवभारत टाइम्स" के १ जुलाई, १९६६ के अंक में श्री शास्त्री ने आयोग की सिफारिशों और सुझावों की अति कटु आलोचना की। उन्होंने 'शिक्षा-आयोग' के प्रतिवेदन पर शिक्षा-जगत की प्रतिक्रिया प्रकट करते हुए कहा कि भारत में अनिश्चित काल तक अंग्रेजी को बनाये रखने की सिफारिश करके आयोग ने एक अन्तर्राष्ट्रीय षड्यन्त्र से नाता जोड़ लिया है। यह प्रतिवेदन चौंकाने वाला तो है पर हैरानी में डालने वाला नहीं, क्योंकि जिस ढङ्ग से आयोग का निर्माण किया गया, उससे अधिक आशा भी क्या की जा सकती थी।

विश्वविद्यालयों में संस्कृत की कोई उपयोगिता न मानकर आयोग ने संस्कृत के उन्मूलन का प्रबन्ध करना चाहा है। जो संस्कृत अंग्रेजी राज्य में 'मृत भाषा' कहे जाने पर भी जीवित रही, स्वतन्त्र भारत में अब उसको भी समाप्त करने की योजना सामने आ गयी है।

स्पष्ट और अस्पष्ट दोनों —ही ढंगों से आयोग ने जो अंग्रेजी की वकालत की है उससे स्पष्ट है, उसका एक प्रमुख ध्येय ही यह था। आयोग ने राजभाषा हिन्दी की पूरी तरह अवहेलना ही नहीं की, अपितु भारतीय भाषाओं के साहित्य के लिये रोमन-लिपि का सुझाव देकर कमीशन की उस मनोवृत्ति का सूचक है। भारत के सब ही राज्यों के [illegible] देवनागरी लिपि को सामान्य लिपि स्वीकार कर चुके हैं, परन्तु आयोग की दृष्टि में राष्ट्रीय निर्णयों का भी कोई विशेष महत्त्व नहीं रहा।

अध्यापकों का वेतन-क्रम और उनकी सुख-सुविधा की दृष्टि से सरकार जितनी भी [illegible] [illegible] विश्वास नहीं, [illegible] कम है। आयोग ने [illegible] [illegible] वेतन [illegible] को [illegible] है, [illegible] नहीं हुआ है [illegible] [illegible]

लिया गया था अथवा बाद में। आज की कमर-तोड़ मँहगाई के युग में इस वेतन का क्या औचित्य है, यह तो समय ही अच्छा बतायेगा।

शिक्षा का स्तर ऊँचा करने के लिये भी आयोग ने कुछ विचित्र ही सुझाव दिये हैं। कुछ केन्द्रीय विश्वविद्यालयों की स्थापना और उनमें अंग्रेज़ी को माध्यम बनाकर आगे बढ़ने की प्रवृत्ति ही आयोग की अपनी मनोवृत्ति की सूचक है। एक ओर देश में छोटे-छोटे वर्ग समाप्त करने की चर्चा चल रही है और दूसरी ओर शिक्षा-क्षेत्र में उसकी नयी बुनियाद रखी जा रही है। अच्छा होता यदि आयोग शिक्षा का स्तर ऊँचा करने के लिये भेद-भाव-पूर्ण सुझाव देने के बजाय शिक्षा के उद्देश्य की ओर अधिक ध्यान देता, जिससे राष्ट्रीय एकता को बल मिलता।

(स) निष्कर्ष

उपरोक्त पंक्तियों में 'शिक्षा-आयोग' की सिफारिशों और सुझावों पर बहुत काफी प्रकाश डाला गया है। सिफारिशों में गुण भी हैं और दोष भी। अब प्रश्न रह जाता है—निष्कर्ष का। इस पर पहुँचने से पहले हमें आयोग के कार्यों को न्याय और विवेक की तराजू में तोलना पड़ेगा।

आयोग ने अनेकों अच्छे सुझाव दिये हैं; जैसे—शिक्षकों के वेतन-दरों में वृद्धि, उनको ६५ वर्ष तक कार्य करने की अनुमति, विज्ञान पर आधारित शिक्षा, शिक्षा का जीवन से सम्बन्ध, आदि। ये सभी सुझाव अभी कागज़ पर ही लिखे हुए हैं। यदि ये कार्यान्वित हो गये, तब तो ये हितकर सिद्ध होंगे, अन्यथा जैसे पिछले आयोगों के सुझाव अभी तक उनकी रिपोर्टों में लिखे हुए हैं, उसी प्रकार ये भी लिखे रह जायेंगे।

आयोग की सिफारिशों से लाभ जो भी हो, पर यदि उनको मान्यता दे दी गई, तो हानि अधिक होगी। बेसिक शिक्षा, जिस पर करोड़ों रुपये व्यय किये गये हैं, और जो हमको अपने राष्ट्रपिता महात्मा गांधी से विरासत में मिली है, उसकी दाह-क्रिया हो जायगी। अंग्रेज़ी पर बल देने से उसका प्रभुत्व यथावत् बना रहेगा और भारतीय भाषाओं का विकास रुक जायगा। संस्कृत का अध्ययन न करने के कारण हम अपनी प्राचीन संस्कृति और सभ्यता को भूल जायेंगे। विज्ञान और प्रौद्योगिकी की शिक्षा पर अनावश्यक बल देकर हम आध्यात्मिकता से दूर हो जायेंगे।

उपरोक्त के आधार पर हम कह सकते हैं कि आयोग की सिफ़ारिशों को सारगर्भित और महत्त्वपूर्ण कहना उचित न होगा। हममें इस बात पर मतभेद नहीं होना चाहिये। आयोग का गठन जिस प्रकार किया गया था, उससे और अधिक आशा नहीं की जा सकती थी। इसके अनेकों सदस्य विदेशी थे, जिनको यहाँ की शिक्षा में कोई रुचि नहीं थी। इसके अतिरिक्त, सबसे बड़े खेद की बात यह है कि भारत में शिक्षा का नियोजन करने के लिये विदेशियों से परामर्श लिया गया। क्या भारत में

प्राप्त सहायता-अनुदान प्राप्त विद्यालयों में कार्य कर रहे हैं और उनके बारे में कोई सिफ़ारिश नहीं की गई है।"

३. विश्वविद्यालय-शिक्षकों का असंतोष : Dissatisfaction of University Teachers—'विश्वविद्यालय-शिक्षक-संघ' (University Teachers' Association) के अध्यक्ष डा० आर० सी० मजूमदार (R. C. Majumdar) का मत है—"विश्वविद्यालय-शिक्षकों के वेतनों के बारे में जो सिफ़ारिशें हैं, उनसे उनको लाभ नहीं होगा।"

४. बेसिक शिक्षा की मृत्यु का अनुमति-पत्र : Death Certificate of Basic Education—आयोग ने लिखा है कि शिक्षा के किसी भी स्तर को 'बेसिक शिक्षा' न कहा जाय। आयोग के इस दृष्टिकोण की कटु आलोचना करते हुए जी० एन० आचार्य (G. N. Acharya) ने "Blitz" के ६ जुलाई, १९६६ के अंक में लिखा—आयोग का प्रतिवेदन बेसिक शिक्षा की मृत्यु का अनुमति-पत्र है।

५. श्री प्रकाशवीर शास्त्री के विचार : *Views of Shri Prakash Vir Shastri*—"नवभारत टाइम्स" के १ जुलाई, १९६६ के अंक में श्री शास्त्री ने आयोग की सिफ़ारिशों और सुझावों की अति कटु आलोचना की। उन्होंने 'शिक्षा-आयोग' के प्रतिवेदन पर शिक्षा-जगत की प्रतिक्रिया प्रकट करते हुए कहा कि भारत में अनिश्चित काल तक अंग्रेज़ी को बनाये रखने की सिफ़ारिश करके आयोग ने एक अन्तर्राष्ट्रीय षड्यन्त्र से नाता जोड़ लिया है। यह प्रतिवेदन चौंकाने वाला तो है पर *हैरानी में डालने वाला नहीं, क्योंकि जिस ढङ्ग से आयोग का निर्माण किया* गया, उससे अधिक आशा भी क्या की जा सकती थी।

विश्वविद्यालयों में संस्कृत की कोई उपयोगिता न मानकर आयोग ने संस्कृत के उन्मूलन का प्रबन्ध करना चाहा है। जो संस्कृत अंग्रेज़ी राज्य में 'मृत भाषा' कहे जाने पर भी जीवित रही, स्वतन्त्र भारत में अब उसको भी समाप्त करने की योजना सामने आ गयी है।

स्पष्ट और अस्पष्ट दोनों—ही ढंगों से आयोग ने जो अंग्रेज़ी की वकालत की है उससे लगता है, उसका एक प्रमुख ध्येय ही यह था। आयोग ने राजभाषा हिन्दी की पूरी तरह उपेक्षा ही नहीं की, अपितु भारतीय भाषाओं के साहित्य के लिये रोमन-लिपि का सुझाव देकर अंग्रेज़ियत की उस मनोवृत्ति का सूचक है। भारत के राज्यों के मुख्यमंत्री कई वर्ष पूर्व एक मत से देवनागरी लिपि को [illegible] स्वीकार कर चुके हैं, परन्तु आयोग की दृष्टि में राष्ट्रीय निर्णयों का महत्त्व नहीं रहा।

अध्यापकों का वेतन मान और उनकी सुख-सुविधा की दृष्टि को आगे करके ये [illegible] [illegible] भले, उसका कम है। आयोग [illegible] को देखा जाता है, यह पता नहीं [illegible]

परिशिष्ट

तालिका १

राज्यों में प्रशिक्षित अध्यापकों की संख्या व प्रतिशत (१९६५-६६)

राज्य का नाम	शिक्षकों की कुल संख्या व प्रतिशत		
	माध्यमिक स्तर	उच्च प्राथमिक स्तर	निम्न प्राथमिक स्तर
१. आंध्र प्रदेश	३४,२१५ (८२.४)	१५,६२५ (८०.५)	८६,५०१ (९०.०)
२. आसाम	९,२१० (१८.६)	१४,८१० (२२.४)	३७,५०० (५५.०)
३. बिहार	२४,३९८ (५०.२)	३२,९१८ (७२.५)	९९,६६३ (८२.७)
४. गुजरात	२२,२९० (६६.४)	८३,६४० (६१.४)	यह संख्या उच्च प्राथमिक में सम्मिलित है
५. जम्मू व काश्मीर	४,६१३ अ (२५.६)	३,४६७ अ (५४.२)	४,८७४ अ (५४.०)
६. केरल	२२,०३१ (८९.०)	३९,४०६ (८२.७)	५९,७०३ (९३ ०)
७. मध्य प्रदेश	१९,७०० ब (६९.०)	२७,९६१ ब (७२.०)	६७,९०९ ब (८०.०)
८. मद्रास	४८,१९४ ब (८६.३)	५९,४४० ब (९३.१)	७६,६३८ ब (९६.७)
९. महाराष्ट्र	४८,५९० (७१.४)	१५१,५०० (७४.८)	यह संख्या उच्च प्राथमिक मे सम्मिलित है
१०. मैसूर	१०,३३४ (५९.३)	९१,९५२ (५९ ९)	,,
११. उड़ीसा	८,४६१ ब (५२.०)	१०,३२२ ब (३१.०)	४८,३३९ ब (६०.०)
१२. पंजाब	२६,२३४ ब (९६.०)	१४,९११ ब (८८.०)	३४,८६३ ब (८९.०)
१३. राजस्थान	१२,६७१ ब (६०.०)	१८,३५२ ब (७१.०)	४१,६०० (७५.०)
१४. उत्तर प्रदेश	३३,३११ (८१.९)	४६,८१९ (८७.१)	१६२,४७२ (७३.५)
१५. पश्चिमी बंगाल	४०,२३८ (३५.६)	१२,०४१ (१६.३)	९८,३०६ (३८.३)

नोट—कोष्टक की संख्यायें प्रतिशत व्यक्त करती हैं। (अ) संख्यायें १९६१-६२ की हैं। (ब) संख्यायें अनुमानित हैं। (स) संख्यायें १९६४-६५ की हैं। (द) संख्यायें १९६३-६४ की हैं।

जरूरतें ऐसे बातों का अभाव था ? एक बात और है। आयोग के विदेशी सदस्य भारत में स्थायी रूप से नहीं रहे। वे आते-जाते रहे। मास्को के प्रोफेसर शुमोवस्की (Shumovsky), जो आयोग के सदस्य थे, केवल रिपोर्ट पर हस्ताक्षर करने के लिये भारत आये। इन उदाहरणों से स्पष्ट हो जाता है कि विदेशी सदस्यों का भारत में शिक्षा के नियोजन में कितनी रुचि थी। इस स्थिति में उनके मन में जो भी आता होगा, उन्होंने कह दिया होगा और उसी को आयोग के सचिव ने मेल-बद्ध कर लिया होगा, भले ही उसमें कोई उपयोगिता, कोई सार्थकता, कोई औचित्य हो या न हो। इस परिस्थिति में आप स्वयं आयोग के कार्यों और उसके सुझावों का मूल्यांकन कर सकते हैं। ऐसा करने पर आप उसी निष्कर्ष पर पहुँचेंगे, जिस पर हम पहुँचे हैं, अर्थात् आयोग के प्रतिवेदन में कोई भी क्रांतिकारी सुझाव नहीं है। ऐसा कहने के लिये प्रतिवेदन में भारतीयों की आवश्यकताओं एवं भावनाओं और उनकी सच्ची प्रगति के लिये उपयुक्त शिक्षा-दर्शन का विवेचन होना चाहिये था।

परिशिष्ट

तालिका १

राज्यों में प्रशिक्षित अध्यापकों की संख्या व प्रतिशत (१९६५-६६)

राज्य का नाम	शिक्षकों की कुल सख्या व प्रतिशत		
	माध्यमिक स्तर	उच्च प्रायमिक स्तर	निम्न प्रायमिक स्तर
१. आंध्र प्रदेश	३४,२१५ (८२.४)	१५,६२५ (८०.५)	८६,५०१ (९०.०)
२. आसाम	९,२१० (१८.६)	१४,८१०* (२२.४)	३७,५०० (५५.०)
३. बिहार	२४,३९८ (५०.२)	३२,९१८ (७२.५)	९९,६६३ (८२.७)
४. गुजरात	२२,२९० (६६.४)	८३,६४० (६१.४)	यह सख्या उच्च प्राथमिक में सम्मिलित है
५. जम्मू व काश्मीर	४,६१३ अ (२५.६)	३,४६७ अ (५४ २)	४,८७४ अ (५४.०)
६. केरल	२२,०३१ (८९.०)	३९,४०६ (८२.७)	५९,७०३ (९३.०)
७. मध्य प्रदेश	१९,७०० ब (६९.०)	२७,९६१ ब (७२.०)	६७,९०९ ब (८०.०)
८. मद्रास	४८,१९४ ब (८६.३)	५९,४४० ब (९३.१)	७६,६३८ ब (९६.७)
९. महाराष्ट्र	४८,५९० (७१.४)	१५१,५०० (७४.८)	यह सख्या उच्च प्राथमिक में सम्मिलित है
१०. मैसूर	१०,३३४ (५९.३)	९१,९५२ (५९.९)	"
११. उड़ीसा	८,४६१ ब (५२.०)	१०,३२२ ब (३१.०)	४८,३३९ ब (६०.०)
१२. पंजाब	२६,२३४ ब (९६.०)	१४,९११ ब (८८.०)	३४,८६३ ब (८९.०)
१३. राजस्थान	१२,६७१ ब (६०.०)	१८,३५२ ब (७१.०)	४१,६०० (७५.०)
१४. उत्तर प्रदेश	३३,३११ (८१.९)	४६,८१९ (८७ १)	१६२,४७२ (७३.५)
१५. पश्चिमी बंगाल	४०,२३८ (३५.६)	१२,०४१ (१६.३)	९८,३०६ (३८.३)

नोट—कोष्टक की संख्यायें प्रतिशत व्यक्त करती हैं। (अ) संख्यायें १९६१-६२ की हैं। (ब) सख्यायें अनुमानित हैं। (स) संख्यायें १९६४-६५ की हैं। (द) सख्यायें १९६३-६४ की हैं।

तालिका २

प्रस्तावित छात्र-संख्या १६६०-६१ से १६८५-८६ तक

(संख्याएँ हजारों मे)

शैक्षिक स्तर	१६६०–६१	१६७५–७६	१६८५–८
१. मेट्रीकुलेशन स्तर			
(अ) सामान्य : कक्षायें ८-६, ६-१०, १०-११	३,५८२	१२,३२४	२३,६३
(ब) वोकेशनल स्कूल	११६	३६१	७३
२. इन्टरमीडिएट स्तर			
(अ) सामान्य : वर्ष १ व २ डिग्री कोर्स	५६७	—	—
(ब) कॉलिज (प्रोफेशनल)	८०	—	—
(स) स्कूल (वोकेशनल) :—			
(i) इंजीनियरिंग डिप्लोमा	४६	२६७	५७३
(ii) अन्य	१८१	७०१	१,४१८
(iii) शिक्षक-प्रशिक्षण (पूर्व-स्नातक)	१२३	४५३	४०२
३. पूर्व-स्नातक स्तर			
(अ) प्रथम डिग्री : वर्ष १, २, ३ व ४	८२२	—	—
(ब) प्रोफेशनल	१७४	—	—
(स) केवल वर्ष ३ व ४ मे छात्र-सं०	३२०	६७२	२,६८५

तालिका ३

भारत में भावी रोजगार का अनुमानित योग (१६६१-१६८६)

(संख्यायें हजारों मे)

उद्योग	कार्य करने वालों की आयु १५ वर्ष और उससे अधिक		
	१६६०–६१	१६७५–७६	१६८५–८६
१. कृषि (Agriculture)	१३१,८१०	१४४,४६२	१४८,४६१
२. खनिज व उत्पादन (Mining & Manufacturing)	११,२०२	४०,६६६	६१,८६१
३. निर्माण (Construction)	१,६६२	६,६४१	६,२३१
४. व्यापार व वाणिज्य (Trade & Commerce)	७,१००	१२,११५	१८,७६८
५. यातायात व संचार (Transport & Communication)	३,६६३	६,८८३	११,६६५
	१० ६६३	११ १०६	४२,५१०

तालिका ४

बालिकाओं की शिक्षा (१९५०-६६)

(संख्या...)

बालिकाओं की सख्या	१९५०-५१	१९५५-५६	१९६०-६१	१९६५-६६ अनुमानित
कक्षा १ से ५ तक	५,३८५	७,६३९	११,४०१	१८,१४५
कक्षा ६ से ८ तक	५३४	८६७	१,६३०	२,८३९
कक्षा ९ से ११ तक	१६३	३२०	५४१	१,०६९
विश्वविद्यालय-स्तर (सामान्य शिक्षा)	४०	८४	१५०	२७१
वोकेशनल कोर्सेज़ (स्कूल स्तर)	४१	६६	८६	१२०
प्रोफेशनल कोर्सेज (कॉलेज स्तर)	५	९	२६	३०

तालिका ५

भारत में शिक्षा पर व्यय

(रुपये हजारों में)

विषय	१९५०-५१	१९६५-६६
१. पूर्व प्राथमिक स्कूल	१,१९८	११,०००
२. निम्न प्राथमिक स्कूल	३६४,८४३	१,२२०,५००
३. उच्च प्राथमिक स्कूल	७६,९९०	७१७,५००
४. माध्यमिक स्कूल	२१०,४५०	१,१८१,०००
५. वोकेशनल स्कूल	३६,९४४	२५०,०००
६ विशिष्ट स्कूल	२३,३३५	३९,९२०
७. माध्यमिक/इंटरमीडियट शिक्षा-बोर्ड	५,३३८	४५,०००
८. विश्वविद्यालय	४९,०५२	२७०,०००
९. अनुसधान संस्थायें	६,२५६	६५,०००
१० आर्ट्स व साइस के कॉलिज	७१,७१४	३२७,५००
११. प्रोफेसनल शिक्षा के कॉलिज	४२,१९४	३५०,०००
१२. विशिष्ट शिक्षा के कॉलेज	२,२२४	१७,५००
१३. सचालन व निरीक्षण	२७,३६४	११४,००९
१४. इमारतें	९९,२७०	६६६,०५५
१५. छात्रवृत्तियाँ, शिष्यवृत्तियाँ आदि	३४,४५६	४२०,०३५
१६. होस्टल	१८,२६४	९५,४६३
१७. विविध	५३,९२८	२०९,४१८
योग	१,१४३,८२२	६,०००,०००